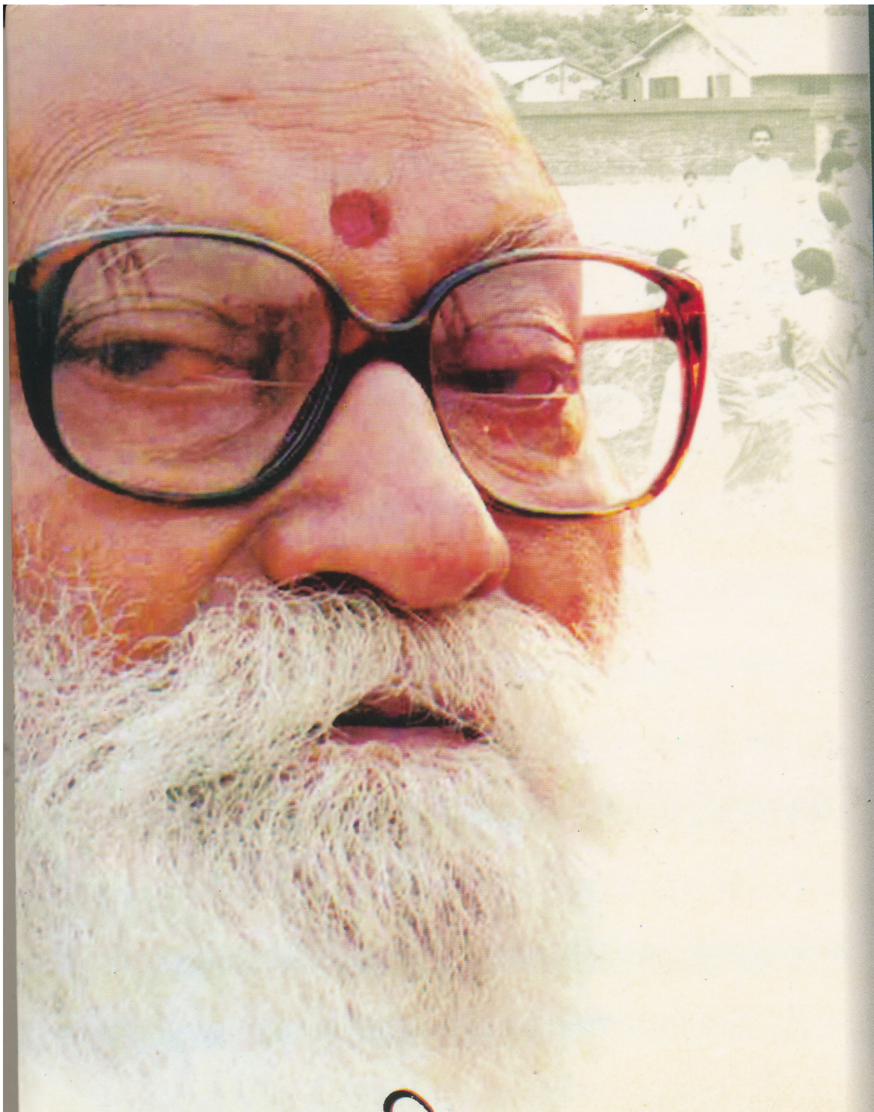

राष्ट्र-ऋषि

नानाजी

प्रभात

राष्ट्र-ऋषि नानाजी

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
ISO 9001:2015 प्रकाशक

प्रकाशक • **प्रभात प्रकाशन**
4/19 आसफ अली रोड,
नई दिल्ली–110002
सर्वाधिकार • सुरक्षित
संस्करण • 2017
मूल्य • तीन सौ रुपए
मुद्रक • आर–टेक ऑफसेट प्रिंटर्स, दिल्ली

RASHTRA-RISHI NANAJI ₹ 300.00
Published by Prabhat Prakashan, 4/19 Asaf Ali Road, New Delhi-2
e-mail: prabhatbooks@gmail.com ISBN 978-81-7315-964-0

06 अक्तूबर, 2010

पुरोकथन

नानाजी देशमुख जैसे सामाजिक बदलाव के महान वाहक की स्मृति में प्रकाशित चित्रमय ग्रंथ राष्ट्रऋषि की भूमिका लिखने में मुझे आत्यन्तिक प्रसन्नता हो रही है। नानाजी एक ऐसे समाज प्रेरक थे जिन्होंने देश के असंख्य दीन दुखियों के चेहरों पर मुस्कराहट बिखेरने में सफलता पाई। भारतीय ग्रामीण जीवन की समस्याओं, चुनौतियों और उनकी अंतर्निहित संभावनाओं की बारीक समझ के साथ ही नानाजी के हृदय में ग्रामीण बंधुओं के प्रति गहरी संवेदना थी। इस कारण ही उनकी वास्तविक स्थिति समझने का अवसर नानाजी को मिला। समन्वित व मूल्य-आधारित मानवीय विकास के लिए किए गए उनके महान कार्य की स्मृति हमारे हृदयों में सदैव जागृत रहेगी। यह चित्रमय ग्रंथ उनके कार्य व उपलब्धियों की झांकी प्रस्तुत करता है।

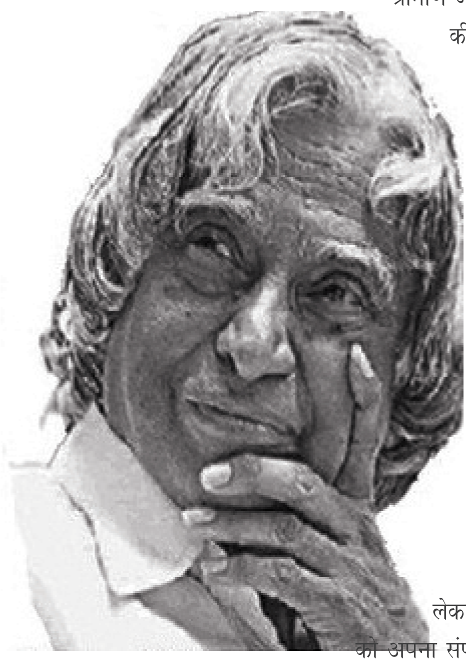

शिक्षा एवं ज्ञान के प्रति नानाजी का वह गहरा लगाव ही था जिससे प्रेरित होकर उन्होंने 1950 में गोरखपुर में देश का पहला सरस्वती शिशु मंदिर स्थापित किया। उसी प्रकार, महात्मा गांधी के अनन्य सहयोगी श्री विनोबा भावे द्वारा चलाए गए भूदान आंदोलन में नानाजी ने दो माह तक सीधी भागीदारी की। आंदोलन की सफलता व अपील ने उनको काफी प्रभावित किया। इस प्रेरणा से ही चित्रकूट जैसे पिछड़े ग्रामीण इलाके में समग्र विकास का लक्ष्य लेकर उन्होंने दीनदयाल शोध संस्थान की के माध्यम से ग्राम विकास को अपना संपूर्ण जीवन समर्पित कर दिया। संस्थान की स्थापना नानाजी ने ही 1969 में की थी। चित्रकूट में ही देश के प्रथम ग्रामीण विश्वविद्यालय की स्थापना कर उसके प्रथम कुलपति का दायित्व भी उन्होंने निभाया।

नानाजी ने 93 साल की उम्र तक दीनदयाल शोध संस्थान के अपने सहयोगी कार्यकर्ताओं के साथ मध्य भारत के 500 पिछड़े ग्रामों के पूर्ण विकसित एवं सशक्त बनाने का सफल प्रयोग किया। दीनदयाल शोध संस्थान भारतीय परिपेक्ष्य में समग्र विकास का सफल मॉडल बनाने वाली एक अनूठी संस्था है।

इन विकासकारी गतिविधियों के अलावा नानाजी और उनकी टीम ने इस क्षेत्र में ग्रामों को आत्मनिर्भर बनाने में भी सफलता पाई है। ग्रामीण अंचलों को पूर्णतः स्वावलंबी बनाने की उन्होंने एक अनुपम कार्यप्रणाली विकसित की है। इसके द्वारा उन्होंने न केवल 100 ग्रामों के आर्थिक विकास और गरीबी उन्मूलन पर ध्यान केंद्रित किया अपितु सामाजिक-आर्थिक समस्याओं का सफल निदान ढूंढने में सफलता पाई। ग्रामीण जीवन की एक जटिल समस्या मुकदमेबाजी से ग्रामीणों की पूर्णतः मुक्त के साथ, विशेषकर महिलाओं के सशक्तीकरण के साथ-साथ जन-जन के जीवन में भी मूल्य-आधारित बदलाव आया है।

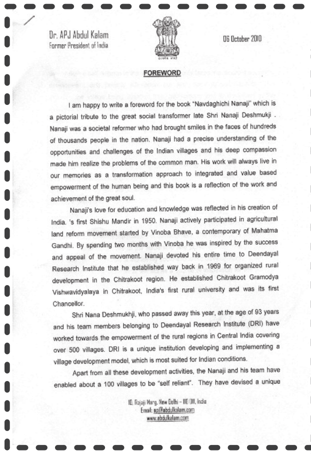

Dr. APJ Abdul Kalam
Former President of India

06 October 2010

FOREWORD

I am happy to write a foreword for the book "Navdaghichi Nanaji" which is a pictorial tribute to the great social transformer late Shri Nanaji Deshmukji . Nanaji was a societal reformer who had brought smiles in the faces of hundreds of thousands people in the nation. Nanaji had a precise understanding of the opportunities and challenges of the Indian villages and his deep compassion made him realize the problems of the common man. His work will always live in our memories as a transformation approach to integrated and value based empowerment of the human being and this book is a reflection of the work and achievement of the great soul.

Nanaji's love for education and knowledge was reflected in his creation of India. 's first Shishu Mandir in 1950. Nanaji actively participated in agricultural land reform movement started by Vinoba Bhave, a contemporary of Mahatma Gandhi. By spending two months with Vinoba he was inspired by the success and appeal of the movement. Nanaji devoted his entire time to Deendayal Research Institute that he established way back in 1969 for organized rural development in the Chitrakoot region. He established Chitrakoot Gramodya Vishwavidyalaya in Chitrakoot, India's first rural university and was its first Chancellor.

Shri Nana Deshmukhji, who passed away this year, at the age of 93 years and his team members belonging to Deendayal Research Institute (DRI) have worked towards the empowerment of the rural regions in Central India covering over 500 villages. DRI is a unique institution developing and implementing a village development model, which is most suited for Indian conditions.

Apart from all these development activities, the Nanaji and his team have enabled about a 100 villages to be "self reliant". They have devised a unique

10, Rajaji Marg, New Delhi – 110 011, India
Email: apj@abdulkalam.com
www.abdulkalam.com

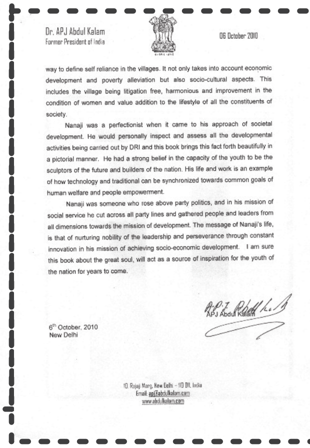

Dr. APJ Abdul Kalam
Former President of India

06 October 2010

way to define self reliance in the villages. It not only takes into account economic development and poverty alleviation but also socio-cultural aspects. This includes the village being litigation free, harmonious and improvement in the condition of women and value addition to the lifestyle of all the constituents of society.

Nanaji was a perfectionist when it came to his approach of societal development. He would personally inspect and assess all the developmental activities being carried out by DRI and this book brings this fact forth beautifully in a pictorial manner. He had a strong belief in the capacity of the youth to be the sculptors of the future and builders of the nation. His life and work is an example of how technology and traditional can be synchronized towards common goals of human welfare and people empowerment.

Nanaji was someone who rose above party politics, and in his mission of social service he cut across all party lines and gathered people and leaders from all dimensions towards the mission of development. The message of Nanaji's life, is that of nurturing nobility of the leadership and perseverance through constant innovation in his mission of achieving socio-economic development. I am sure this book about the great soul, will act as a source of inspiration for the youth of the nation for years to come.

APJ Abdul Kalam

6th October, 2010
New Delhi

10, Rajaji Marg, New Delhi – 110 011, India
Email: apj@abdulkalam.com
www.abdulkalam.com

जहां तक सामाजिक विकास के बारे में नानाजी के प्रयोगों का प्रश्न है, उनमें वह पूर्णतः खरे दिखाई देते हैं। उन्होंने किसी बात से समझौता नहीं किया। संस्थान के हरेक काम का स्वयं निरीक्षण एवं क्रियान्वयन का उनका आग्रह छाया चित्रों के माध्यम से इस पुस्तक में बहुत आकर्षक रुप में पेश किया गया है। भारत के भविष्य की निर्माता युवा शक्ति के प्रति उनकी गहरा आस्था थी। उनका संपूर्ण जीवन और कार्य इस बात की प्रत्यक्ष मिसाल हैं कि परंपरा और विज्ञान के एकीकृत प्रयासों से मानव के सुख और समृद्धि का लक्ष्य प्राप्त किया जा सकता है।

यह नानाजी के बूते की ही बात थी कि उन्होंने ग्राम विकास के कार्य में दलों और मत-मतातंरों की सीमाएं लांघकर सभी दलों व विचारधाराओं के लोगों को एक साथ लाकर खड़ा कर दिया। सामाजिक-आर्थिक विकास में कार्यरत कार्यकर्ताओं के जीवन में नए-नए प्रयोगों के द्वारा उदात्त मानवीय गुणों का विकास करना ही उनके जीवन का संदेश है। मुझे विश्वास है कि उस महान आत्मा की स्मृति को जीवंत रखते हुए यह ग्रंथ राष्ट्र की युवा पीढ़ी को अनंत काल तक प्रेरणा देता रहेगा।

डा. एपीजे अब्दुल कलाम
पूर्व राष्ट्रपति, भारत

10, राजाजी मार्ग, नई दिल्ली - 110011. Email : apj@abdulkalam.com www.abdulkalam.com

अनुक्रमणिका

1. प्राक्कथन 001

2. जीवन यात्रा 005
नवदधीचि नानाजी

3. अंतिम यात्रा 033
एक अंतहीन संभावना की अंतिम यात्रा

4. श्रद्धांजलि 053
नाना, तुझे प्रणाम

5. संकल्प 069
नए अवतार में नानाजी

6. आह्वान 083
नानाजी की पाती युवाओं के नाम

7. लेख 125
नाना प्रकार के नानाजी

8. संपादकीय 159
अभिमत

प्राक्कथन

सन् उन्नीस सौ पचहत्तर! आपातकाल की काली छाया से भारतीय लोकतंत्र पूरी तरह आच्छादित हो गया था। अधिनायकवाद के विरूद्ध आवाज उठाने वाले सभी जन-नेताओं को जेलों में ठूंस दिया गया। इन्हीं में से एक थे नानाजी देशमुख।

25 वर्षों तक राजनीति में सक्रिय ही नहीं, अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले नानाजी को जेल में घनीभूत चिंतन के साथ ही आत्मालोचन का भी अवसर मिला। "राजनीति का बहिष्कार नहीं परिष्कार चाहिए" - इस उद्देश्य से लगभग तीन दशकों तक नवनिर्मित भारतीय जनसंघ से लेकर लोकनायक जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में गठित जनता पार्टी में दीर्घकाल तक कार्य करने के बाद भी अभीष्ट फल नहीं मिला। राजनीति दिनोंदिन प्रदूषित होती गई। विकास का मार्ग अवरूद्ध हो गया। आम जनता तबाही के कगार पर पहुंच गई। स्वातंत्र्य संग्राम में आत्माहुति

देने वाले असंख्य देशभक्तों एवं जन नायकों ने क्या स्वाधीन भारत का यही सपना संजोया था?

"राष्ट्र-जीवन के आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, शैक्षणिक आदि किसी भी क्षेत्र में क्या हम अपने राष्ट्रीय आदर्शों के अनुरूप कोई भी मौलिक रचना खड़ी कर पाए? आज भी देश की आधी आबादी दु:ख-दैन्य का जीवन बिताने के लिए मजबूर क्यों है?"

ऐसे अनेक प्रश्नों का उत्तर खोजने में नानाजी ने जेल-जीवन को सार्थक बना दिया। अन्तरात्मा से आवाज उठी "नवस्वतंत्र राष्ट्र-निर्माण के लिए व्यक्तिगत, पारिवारिक एवं सामूहिक आचरण के क्षेत्र में लम्बे एवं बहुविध प्रयोगों की प्रक्रिया से गुजरना अनिवार्य होता है। प्रत्यक्ष आचरण की प्रयोगशाला की भट्टी में तपकर ही नवनिर्माण का सांचा तैयार हुआ करता है।"

राष्ट्र-जीवन की दुर्दशा देख अशांत मन को आशा की नई किरण ने झकझोरा। बस! अब शेष जीवन इसी कार्य में लगाना होगा। जेल से निकलने के बाद नानाजी ने पूरी ताकत के साथ स्वयं को नवनिर्माण के प्रयोग में समर्पित कर दिया।

सर्वप्रथम उन्होंने उत्तर प्रदेश के सर्वाधिक पिछड़े गोंडा जिले को अपनी कर्मस्थली बनाया। किसी भी समस्या का निदान खोजने के लिए उस समस्या की जड़ तक पहुंचना पड़ता है। गोंडा जिले के सर्वांगीण विकास का लक्ष्य लेकर नानाजी ने प्रारंभ में एक वर्ष तक सायकिल, मोटरसायकिल या पैदल ही दौरा कर ग्रामीणों के साथ विचार-विमर्श किया। विकास की कुंजी उन्हें मिली इन्हीं अनपढ़ समझे जाने वाले निर्धन किसानों से। "खेती के लिए पानी मिल जाए तो हम अपने परिश्रम से इस गरीबी से उबर जायेंगे।"

बस फिर क्या था? नानाजी जुट गए - इस समस्या के समाधान में। सर्वांगीण विकास के लिए चार सूत्र निर्धारित किए गए -

1. शिक्षा, 2. स्वास्थ्य, 3. स्वावलंबन, 4. सदाचार

इन चार सुदृढ़ स्तंभों पर आधारित सर्वोत्कर्ष के लिए "जनप्रेरणा और जनसहभाग" की अनिवार्यता निरूपित की गई।

संकल्प शक्ति के धनी नानाजी ने यह असंभव दिखने वाला कार्य संभव कर दिखाया। इसी अवधि में नानाजी को यह समझते देर न लगी कि बढ़ती आबादी और घटती कृषि भूमि में कृषि विकास के कार्यक्रम ही पर्याप्त नहीं। नई पीढ़ी के लिए काम के अवसर भी ढूंढ़ने होंगे। उनके उर्वरमस्तिष्क ने इसी विचार को एक नारे का रूप दिया - "हर हाथ को काम - हर खेत को पानी।"

लेकिन हर एक प्रयोग में सफलता के साथ-साथ असफलता का सामना भी करना पड़ता है। नानाजी को भी अनेक अवसरों पर असफलता मिली। विशेषकर चित्रकूट में शैक्षणिक क्षेत्र में पूर्व प्राथमिक से स्नातकोत्तर शिक्षा के क्षेत्र में उन्होंने एक अभिनव प्रयोग प्रारंभ किया। वहां ग्रामोदय विश्वविद्यालय की स्थापना की।

मात्र दो वर्ष की अवधि में सभी वांछित कल्पनाओं को व्यवहारिक रूप प्रदान करने में उन्होंने सफलता पाई। पर विद्वेषमूलक सत्तालिप्सा की राजनीति ने इस प्रयोग पर विराम लगा दिया।

दो वर्षों के अपने अथक प्रयासों पर पानी फिर जाने के बाद भी नानाजी निराश नहीं हुए। असफलता उन्हें नई ऊर्जा प्रदान करती थी। विश्वविद्यालय प्रयोग हाथ से निकल जाने पर उन्होंने मात्र 2-3 वर्षों के अंदर चित्रकूट में शिक्षण, स्वास्थ्य, स्वावलंबन व सदाचार के विशाल नए प्रकल्प खड़े कर दिए।

वैचारिक दृष्टि से नानाजी से असहमत रहने वाले सुप्रसिद्ध पत्रकार श्री प्रभाष जोशी ने इस पर एक लेख लिखकर उसका शीर्षक दिया था - "ऐसे जीवट पर तिलक करो।"

नानाजी जन्मजात खोजी-प्रवृत्ति के थे। गीता का एक श्लोक उनकी जिज्ञासा का कारण बन गया। श्रीकृष्ण ने कहा कि वृक्षों में मैं 'पीपल' हूँ। क्या बात है पीपल में? लखनऊ के वनस्पति उद्यान के निदेशक से उन्होंने अपनी जिज्ञासा प्रकट की। उन्होंने बताया कि वृक्षों में एक मात्र पीपल ही ऐसा है जो चौबीसों घण्टे आक्सीजन छोड़ता है।

इसी प्रकार, उनकी जिज्ञासा का विषय बना 'हिरण्यकश्यप' जैसे दानव के यहां प्रह्लाद जैसा भक्त कैसे पैदा हो गया? शोडष संस्कारों का अध्ययन करते समय उनकी सामाजिक दृष्टि यह ढूंढ़ने में लग गई कि अग्नि को साक्षी बनाकर भावी दम्पति एक-दूसरे के प्रति अपने कर्तव्य का वचन तो देते हैं। पर इसमें कहीं भी समाज के प्रति अपने कर्तव्य को उल्लेख क्यों नहीं है।

नानाजी संघ के निष्ठावान स्वयंसेवक होने के बावजूद वैचारिक दृष्टि से संघ के विरोधियों के भी विश्वासपात्र थे। सार्वजनिक जीवन का कोई भी क्षेत्र ऐसा नहीं, जहां के जाने-माने लोग नानाजी के मित्र न रहे हों।

उनके निर्वाण के बाद 'पायनियर' अंग्रेजी दैनिक के संपादक ने लिखा "उन्होंने अपने मन की बात कहने में कभी भी संकोच नहीं किया, भले ही वे बातें उनके संगठन की आलोचना ही क्यों न करती हों? उनमें वह योग्यता थी कि दलगत सोच की सीमाओं को लांघकर राष्ट्रहित से प्रेरित अपनी आवाज बुलन्द करे।"

श्रीमती इंदिरा गांधी के दु:खद अवसान से उत्पन्न विषम परिस्थिति में देशभक्ति से प्रेरित उन्होंने श्री राजीव गांधी को समर्थन देने की अपील की थी। भाजपा व संघ के कुछ कार्यकर्ता इससे बहुत नाराज भी हुए थे। पर उन्होंने इसकी चिंता नहीं की।

भोपाल से प्रकाशित दैनिक 'नवभारत' ने लिखा "देश के सामाजिक, राजनैतिक जीवन में वे आदर्श पुरूष व निष्काम कर्मयोगी थे। उनकी गणना उस वर्ग में की जाएगी, जिसमें राजर्षि पुरूषोत्तम दास टण्डन, आचार्य नरेन्द्रदेव, आचार्य विनोबा भावे जैसे संत राजनीतिज्ञ हुए हैं।"

नानाजी का जाना केवल संघ परिवार की ही क्षति नहीं है। पूरे भारत के सार्वजनिक क्षेत्र में नानाजी के बाद एक भी 'सर्वमान्य व्यक्तित्व' नहीं रहा।

नानाजी के तप:पूत जीवन की एक झलक इस **राष्ट्र-ऋषि नानाजी** प्रकाशन में देखने को मिलेगी। मानवीय संवेदनाओं से सराबोर उनके जीवन का प्रत्येक क्षण "मैं अपने लिए नहीं, अपनों के लिए हूँ - और अपने वे हैं जो सदियों से उपेक्षित एवं पीड़ित हैं" इस चिंतन को प्रत्यक्ष कृति में परिवर्तित करने में बीता।

नानाजी आत्मविलोपी थे। मानव-जीवन को त्रस्त करने वाली लोकेषणा, पुत्रेषणा या वित्तेषणा - उन्हें कभी भी अपने पथ से विचलित नहीं कर पाई। जिन लाखों लोगों को उनके स्नेहिल संपर्क का

अवसर मिला - वे सभी उनके बहुआयामी इंद्रधनुषी व्यक्तित्व से चमत्कृत हैं। एक अतिसाधारण निर्धन परिवार में उत्पन्न, बाल्यावस्था में विद्यालयीन शिक्षा से वंचित व्यक्ति अपनी असाधारण प्रतिभा, कर्मठता, लगन, कार्य-कुशलता और संकल्पशक्ति के बल पर "मानव से महामानव" बन जाता है। उनके जीवन के विभिन्न आयामों से नई पीढ़ी को परिचित एवं अनुप्राणित करने हेतु दीनदयाल शोध संस्थान ने अनेक खण्डों में उनके जीवन, चिंतन, लेखन, भाषण, साक्षात्कार, पत्राचार आदि को प्रकाशित करने का निर्णय किया है। प्रस्तुत प्रकाशन **राष्ट्र-ऋषि नानाजी** उस श्रृंखला की प्रथम कड़ी, श्रद्धांजलि के रूप में समर्पित है। अगले प्रकाशन उनके संपूर्ण व्यक्तित्व का दर्शन करा सकेंगे। विश्वास है कि पाठकों के लिए यह प्रयास प्रेरणादायी होगा।

नानाजी गज़ब के परफेक्शनिस्ट थे। संपादक मंडल व उसके सहयोगियों ने उनके इस गुण का सम्मान करने का भरपूर प्रयास किया है। इस पुस्तक का मूल संस्करण रंगीन है व उसे आज की भाषा में कॉफी-टेबल बुक कहा जाता है। संपादक मंडल का मत बना कि इसका एक संस्करण ऐसा भी होना चाहिए जो आम कार्यकर्ताओं व आमजन के बीच भी आसानी से उपलब्ध हो सके। यह संस्करण नानाजी की प्रथम पुण्यतिथि पर आमजन को समर्पित किया जा रहा है।

इस खंड की परिकल्पना में हमें राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक प्रमुख माननीय मदनदास देवी, दीनदयाल शोध संस्थान के प्रधान सचिव डा. भरत पाठक, संगठन सचिव श्री अभय महाजन व पूर्व सचिव डा. महेश चंद्र शर्मा का मार्गदर्शन मिला। यों तो संस्थान के सभी कार्यकर्ता इस कार्य में पूरे मनोयोग से लगे, लेकिन लेखन व संपादन में श्री राजेश कटियार की विशिष्ट भूमिका रही। श्री ज्ञानेंद्र बरतरिया ने भी लेखन में सहयोग दिया। श्री राकेश शुक्ला व श्री रवि शंकर ने प्रूफ पढ़ने में बहुत मेहनत की। श्रीमती ज्योति मुजुमदार ने चित्र जुटाने में सहयोग के अतिरिक्त मराठी से हिंदी अनुवाद में भी महती भूमिका निभाई। श्री अंशुमान सिंह ने कंपोजिंग में सहयोग तो किया ही, पुस्तक के प्रकाशन में हर दायित्व को पूरे मनोयोग से संभाला। श्री गब्बर सिंह का भी कंपोजिंग में सहयोग मिला। मेजर टी.आर. वर्मा एवं श्री अमिताभ वशिष्ठ का प्रशासकीय सहयोग हमेशा की तरह भरपूर था। अंत में, लेकिन बहुत महत्वपूर्ण, सुश्री दीपा सूद के ले-आउट, डिज़ाइनिंग का आप स्वयं आकलन कर सकते हैं। इन सभी को संपादक मंडल का हार्दिक आभार।

इस संस्करण में प्रकाशन का दायित्व प्रभात प्रकाशन ने स्वतः व सहर्ष संभाला, उसके लिए हम उनके आभारी हैं।

नमस्कार.

देवेंद्र स्वरूप   यादवराव देशमुख   अतुल जैन
दीनदयाल शोध संस्थान
नई दिल्ली, फरवरी, 2011

जीवन यात्रा

यह गाथा वैदिक युग में अस्थिदान करने वाले दधीचि की नहीं है, उस दधीचि की है जिसे हमने अपनी आँखों देखा, अपने कानों सुना, जिसकी सुदीर्घ राष्ट्र-साधना के हम साक्षी हैं, जिसकी उष्मा का हमें स्पर्श मिला। इस दधीचि ने अपने जीवन का तिल-तिल, क्षण-क्षण राष्ट्रीय नवोन्मेष के लिए होम किया, जगह-जगह सर्वांगीण विकास के दीपस्तंभ खड़े किए और अंत में अपनी तपोपूत देह को शोध के लिए दान कर दिया। इस देहदानी दधीचि की पहचान है नाना देशमुख। सच कहें तो केवल नाना। भले ही उनके माता-पिता ने उन्हें चंडिकादास नाम दिया हो, पर हजारों-हजारों परिवार उन्हें स्नेही नाना के रूप में ही देखते-जानते हैं, सचमुच के जगत नाना।

नवदधीचि नानाजी

जीवन यात्रा

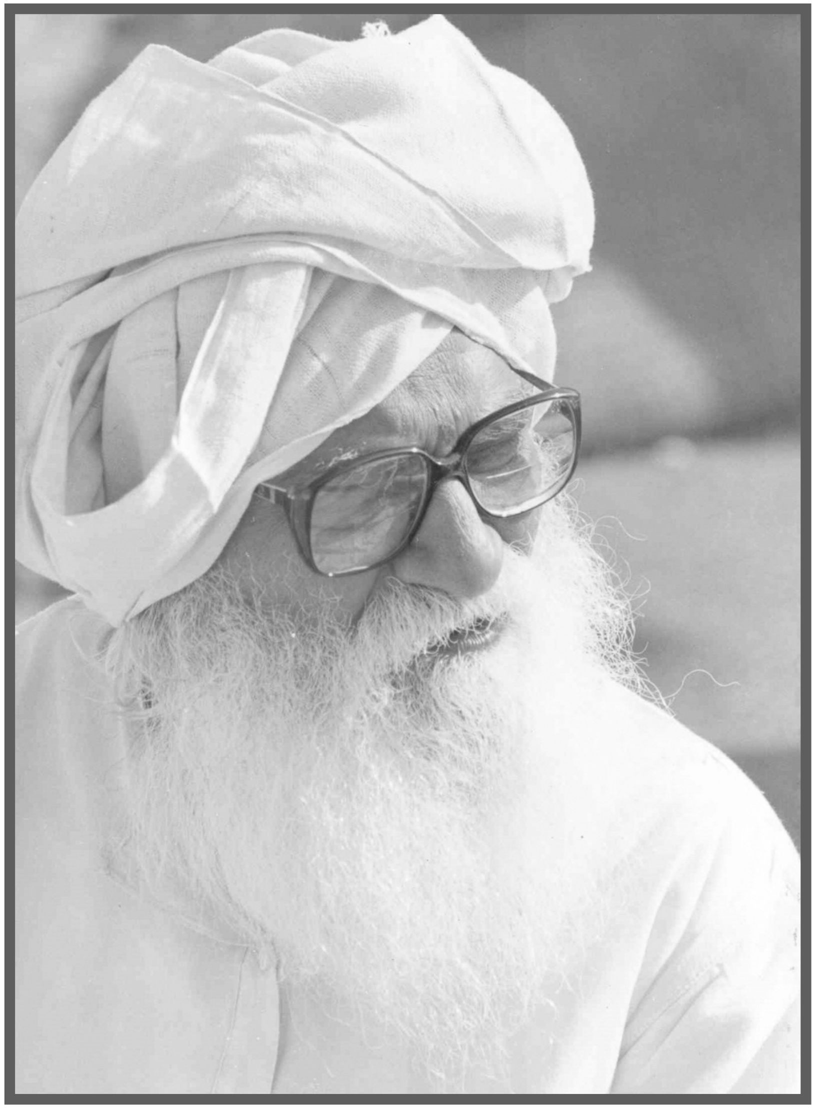

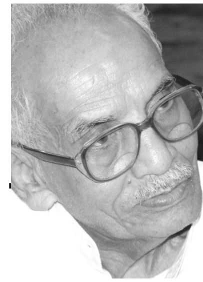

देवेंद्र स्वरूप

लेखक देश के लब्धप्रतिष्ठित इतिहासकार हैं। कई पुस्तकों के रचयिता हैं, देश के कई अखबारों में समसामयिक विषयों पर नियमित रूप से लेख लिखते हैं। साप्ताहिक पाञ्चजन्य के संपादक व दीनदयाल शोध संस्थान के उपाध्यक्ष पद को सुशोभित कर चुके हैं। नानाजी की जीवन यात्रा लिखने के लिए उनके अनन्य सहयोगी रहे देवेन्द्र जी ही सर्वाधिक अधिकारिक व्यक्ति हैं।

अब से 94 वर्ष पूर्व 11 अक्टूबर, 1916 को शरद पूर्णिमा की चांदनी सब ओर छिटकी हुई थी। तब, महाराष्ट्र के मराठवाडा क्षेत्र के परभणी जिले के हिंगोली तालुका के कडोली नामक छोटे से गांव में अमृतराव देशमुख की धर्मपत्नी राजाबाई की कोख से एक पुत्र ने जन्म लिया। तीन पुत्रियों और एक पुत्र के बाद यह बालक पांचवा और सबसे छोटी संतान था। देशमुख घराना होने के कारण अमृतराव के पास प्रतिष्ठा और प्रभाव तो था पर इतने बड़े परिवार के भरण-पोषण एवं देशमुख परिवार के लोकाचार को निभाने लायक आर्थिक साधन नहीं थे। लम्बे काल तक निजामशाही के अधीन रहने के कारण उस क्षेत्र में प्राथमिक शिक्षा तक की सुविधाएं उपलब्ध नहीं थी। अमृतराव और राजाबाई दोनों ही अनपढ़ थे। उस समय कौन सोच सकता था कि अभाव और अशिक्षा की गोद में जन्मा यह बालक किसी दिन पूरे देश की श्रद्धा और प्रेरणा का केन्द्र बन जाएगा और राष्ट्र-जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अपने सफल कर्तृत्व की जय पताका फहरायेगा? अब लगता है शायद उस रात शरद पूर्णिमा स्वयं ही राजाबाई की कोख में सिमट आयी थी।

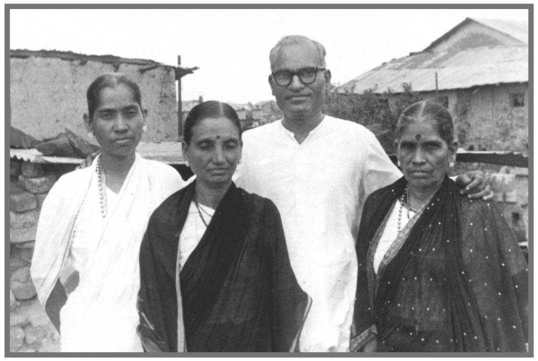
अपनी बहनों के साथ

शिशुकाल में ही नाना माता-पिता की स्नेहछाया से वंचित हो गए। बड़ी बहन लक्ष्मीबाई का विवाह अकोला जिले के रिसौड़ में प्राईमरी स्कूल के शिक्षक दत्तात्रेय देशपांडे के साथ हो गया। दूसरी बहन मैनाबाई नांदेड़ के बरहाडे परिवार में ब्याही गई। तीसरी बहन सखुबाई या बायडाबाई का विवाह नांदेड़ जिले में जुन्नी नामक स्थान में एक बड़ी उम्र के विधुर के सम्पन्न परिवार में हुआ। नाना के पालन-पोषण का भार बड़े भाई आबाजी देशमुख पर आ पड़ा। अभाव और अशिक्षा के घने अंधेरे से नाना को कितना विकट संघर्ष करना पड़ा, इसका वर्णन उनके अपने शब्दों में ही जानें। 15 नवंबर, 1986 को अपनी ममेरी बहन को एक निजी पत्र में नानाजी ने लिखा, "कडोली में मेरी माँ का निधन हुआ था। सच तो यह है कि उसने आत्महत्या की थी। मैं बहुत छोटा था। कडोली बिल्कुल ही देहात है। पिताजी अनपढ़ थे। घर में शिक्षा का वातावरण नहीं था। इसी वजह से मेरी स्कूली शिक्षा ठीक से नहीं हो पायी। बायडाबाई (सखुबाई) का विवाह हुआ नांदेड जिले के गांव जुन्नी के परिवार में। यह उसके पति का दूसरा विवाह था। उनकी पहली पत्नी का निधन हुआ था। वे आयु में बहुत बड़े थे। घर में केवल बायडाबाई व उसके पति जो खेती करने पास के गांव में चले जाते थे। घर में बाई को अकेले रहना पड़ता था। मैं घर में छोटा था, इसलिए मुझे उसके साथ रहने के लिए जुन्नी भेजा गया। वहां न स्कूल था, न शिक्षक। चौबीस घंटे खाली समय में बाई के साथ पत्ते खेलना, इतना ही काम। खेलते-खेलते मेरी उम्र बढ़ती जा रही थी। मैं 11 साल का हो गया। 1927 की बात है। ताई (लक्ष्मीबाई) के पति का स्थानांतरण चिंचआंबा से रिसोड़ में हुआ था। ताई को मेरे प्रति दया आई और वह करीब-करीब जबरदस्ती करके मुझे जुन्नी से अपने पास रिसोड़ ले गयी। वहां पर मुझे 11 साल की उम्र में तीसरी कक्षा में प्रवेश दिलाकर दत्तोपंत मुझे रोज घर में पढ़ाते थे। उसके बाद मुझे भाऊ मामा (भगवंतराव देशपांडे पार्डीकर) ताई के यहां से अपने यहां ले आए, तब से तुम्हारा मेरा परिचय। तुम्हारी भी माँ नहीं थी, शायद इसीलिए तुम्हारे प्रति मेरे मन में आत्मीयतापूर्ण लगाव उत्पन्न हुआ।"

माँ ने आत्महत्या क्यों की? इसका उत्तर भी नानाजी के ही एक अन्य निजी पत्र में मिल जाता है। 19 जुलाई, 1984 को सौ. नीलम देशपांडे को अतिथि सत्कार का महत्व बताते हुए नानाजी लिखते हैं कि "अतिथि के द्वारा व्यवस्था में कमी का उल्लेख तो बहुत ही लज्जा का विषय है। मेरी जन्मदात्री माँ ने इसी एक कारण से आत्महत्या कर ली थी, जिसकी जानकारी शायद किसी के स्मरण में नहीं है। उसका घाव आजीवन मेरे हृदय पर बना रहने वाला होने के कारण इस बात को मैं बहुत ही महत्व देता हूँ।"

जीवन यात्रा

स्पष्ट है कि आर्थिक दुरावस्था के कारण नानाजी की माँ घर आए अतिथियों का यथोचित सत्कार नहीं कर पाती थी, जिसकी पीड़ा उन्हें कचोटती रहती थी। ऐसे ही किसी अवसर पर घर में कुछ न होने से उद्विग्न मनःस्थिति में उन्होंने घर के पीछे स्थित कुंए में छलांग लगाकर आत्महत्या कर ली थी। नानाजी डेढ़ या दो वर्ष की आयु में ही माँ के वात्सल्य से वंचित रह गए। यह घटना गहरा दंश बनकर उनकी चेतना में समा गई। 21-22 जून, 1997 को हिंगोली के डॉ. हेडगेवार रुग्ण चिकित्सालय के कार्यक्रम से निपट कर, उन्होंने 23 जून को अपने गांव कडोली जाकर उस कुंए की विधिवत पूजा करके एक प्रकार से माँ का तर्पण किया था।

11 वर्ष की आयु तक नानाजी 'क ख ग' भी नहीं पढ़ पाए, पर विधाता ने उन्हें कुशाग्र बुद्धि दी थी, जिसके बल पर वे रिसोड़ में आठवीं कक्षा तक प्रत्येक कक्षा में प्रथम स्थान पाते रहे। रिसोड़ में ही नानाजी का संबंध राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से स्थापित हुआ। नियति उनकी जीवन की दिशा तय करने लगी। मैट्रिक तक की पढ़ाई के लिए उन्हें वाशिम आना पड़ा। वहां उन्हें पाठक परिवार का आश्रय मिला। इस परिवार में नानाजी के पिता और बड़े भाई का पहले से आना-जाना था। तीनों पाठक बंधु (भाऊ, तात्या और आबाजी) नानाजी से बहुत स्नेह करते थे। छोटे भाई आबाजी तो नानाजी के समवयस्क और सहपाठी ही थे। नानाजी उस परिवार का अंग बन गए। सहज रूप से घर के सब काम करने में सहयोग देने लगे। वाशिम में संघ-कार्य बहुत प्रभावी था। डॉ. हेडगेवार भी बहुधा वहां आते रहते थे, वाशिम में ही 1934 में डॉक्टर जी ने 17 स्वयंसेवकों को संघ की प्रतिज्ञा दी। इन 17 में नानाजी एवं उनसे 10 साल बड़े उनके ममेरे भाई कृष्णराव भगवंत देशपांडे, एडवोकेट भी थे। तीनों पाठक बंधु भी संघ के स्वयंसेवक थे, वाशिम में नानाजी पूरी तरह संघ-कार्य में रम गए। संघ-मार्ग से राष्ट्रसेवा का भाव उनके मन में दृढ़ होने लगा। 1937 में मैट्रिक की परीक्षा पास करके प्रश्न उठा कि आगे की पढ़ाई कैसे हो? आबा पाठक नानाजी के सहपाठी थे। दोनों के पास ही बाहर जाकर पढ़ने के लिए साधन नहीं थे। इसका नानाजी की कल्पक बुद्धि ने उपाय खोजा। वे और आबा पाठक शहर से फल, सब्जी तथा अन्य घरेलू सामग्री खरीद कर थोड़े-से अधिक भाव पर सम्पन्न परिवारों में पहुंचाने लगे। इस प्रकार दो वर्ष परिश्रम करके उन्होंने आगे की पढ़ाई के लिए कुछ धन इकट्ठा कर लिया। 1939 में चार मित्र, नानाजी, आबा पाठक, बाबा सोनटक्के और बाजीराव देशमुख, सभी इकट्ठे राजस्थान के पिलानी बिड़ला कालेज में अध्ययन के लिए रवाना हो गए।

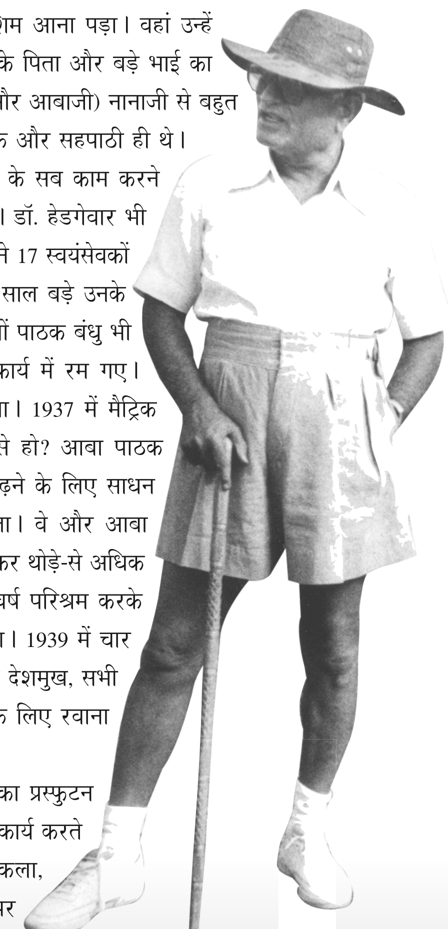

पिलानी में नानाजी की जन्मजात प्रतिभा और क्षमता का प्रस्फुटन हुआ। 18 रुपए की एक जापानी साईकिल के सहारे वे संघ-कार्य करते और जीविकार्जन करने के साथ ही वे कालेज में चित्रकला, अभिनय और भाषण प्रतियोगिताओं में भाग लेते। शाखा पर

कबड्डी और कालेज में फुटबाल की टीमों में बढ़-चढ़ कर खेलते। नेतृत्व का उनका गुण भी सबको दिखाई देने लगा। उस कालेज के संस्थापक सेठ घनश्याम दास बिड़ला की सूक्ष्मदृष्टि से नानाजी की ये अपार क्षमताएं छिपी न रहीं। उन्होंने कालेज प्रिंसिपल सुखदेव पांडे को कहा कि मैं इस लड़के को अपने निजी सहायक के रूप में लेना चाहता हूँ। उसे भोजन-आवास की सुविधा के अतिरिक्त 80 रूपए मासिक पगार भी दूँगा। उस युग में एक कालेज विद्यार्थी के लिए यह सुविधा व वेतन बहुत बड़ा था। पर नानाजी संघ-मार्ग से राष्ट्रसेवा के लिए जीवन-समर्पण का संकल्प ले चुके थे, इसलिए उन्होंने बिड़ला जी के इस प्रलोभक प्रस्ताव को ठुकरा दिया।

1940 में वे संघ की प्रथम वर्ष शिक्षा के लिए नागपुर गए। वहां उन्होंने डॉ. हेडगेवार को असाध्य बीमारी से जूझते देखा। उनके अंतिम भाषण को सुना। वर्ग के बाद डॉक्टर जी की चिता को धधकते देखा। इस सबका उनके संवेदनशील राष्ट्रभक्त अंतःकरण पर भारी प्रभाव हुआ। उन्होंने पढ़ाई को बीच में ही छोड़कर संघ का पूर्णकालिक कार्यकर्ता बनने का निश्चय कर लिया। डॉक्टर जी के वरिष्ठ सहयोगी बाबासाहेब आप्टे का उन पर भारी प्रभाव था। आप्टे जी ने उन्हें भाऊ जुगादे के साथ आगरा शहर में संघ कार्य के लिए भेज दिया। आयु के 24वें वर्ष में कालेज की पढ़ाई को बीच में छोड़कर नानाजी आगरा पहुंच गए। आप्टे जी के निर्देशानुसार 3 जुलाई को डॉक्टर जी के श्राद्ध-दिवस पर आगरा में संघ शाखा शुरू हुई। इसी समय पं. दीनदयाल उपाध्याय कानपुर से बी.ए. की परीक्षा प्रथम श्रेणी में पास करके अंग्रेजी में एम.ए. की पढ़ाई करने आगरा पहुंच गए। वे कानपुर में संघ के अच्छे कार्यकर्ता बन चुके थे। अतः आगरा में ये तीनों कार्यकर्ता एक ही कमरे में रहने लगे। उस अल्प सहवास में नानाजी के मन में दीनदयाल जी की संघनिष्ठा, बौद्धिक क्षमता, आदर्शवादी प्रकृति और सहज-सरल स्वभाव के प्रति जो आत्मीयता व श्रद्धाभाव पैदा हुआ, वह जीवन के अंत तक बना रहा।

तब के जनसंघ के नेताओं दीनदयालजी, सुंदर सिंह भंडारी, कुशाभाउ ठाकरे, व जगदीश प्रसाद माथुर के साथ

उन दिनों संघ के पास पूर्णकालिक कार्यकर्ताओं की संख्या बहुत थोड़ी थी और संघ-कार्य से अछूता क्षेत्र बहुत बड़ा। अतः आगरा में तीन-तीन श्रेष्ठ कार्यकर्ताओं का जमघट अनावश्यक लगा। नानाजी को आगरा से भाऊराव देवरस के पास कानुपर भेज दिया गया। भाऊराव ने उन्हें पूर्वी उत्तर प्रदेश के गोरखपुर नगर में संघ-कार्य आरंभ करने के लिए भेजा। नानाजी ने बताया कि वे 15 अगस्त 1940 को केवल 14 रूपए जेब में लेकर गोरखपुर के लिए रवाना हो गए। गोरखपुर नानाजी के लिए चुनौती बनकर आया। नया स्थान, कोई परिचय नहीं, ठहरने-खाने का ठिकाना नहीं। कुछ दिन

धर्मशाला में काटे। उसे बार-बार बदलना पड़ता, क्योंकि एक साथ तीन दिन से अधिक ठहरने की अनुमति नहीं थी। किसी ने घनश्याम नारायण प्रसाद सिंह नामक एडवोकेट से परिचय कराया। वे जमींदार परिवार के थे, उनके पास बड़ी कोठी थी, अकेले प्राणी। खाना बनाने वाला कोई नहीं। नानाजी उनके लिए दोनों समय भोजन बनाने लगे और वहीं रहने लगे। कुछ समय बाद देवी प्रसाद अग्रवाल ने उनके रहने-खाने की व्यवस्था अपने घर में की। बहुत प्रयास करने पर भी शाखा नहीं लग पा रही थी। उनकी आँखें खोजने लगी, कहां से कैसे तरुणों को जुटाया जाए। नानाजी की खोजी बुद्धि सक्रिय हो गई। डी.वी. इण्टर कालेज के बंगाली डे मास्टर फुटबाल की टीम बनाने की कोशिश कर रहे थे। नानाजी बाहर खड़े होकर उनकी टीम को खेलते देखते। फुटबाल में वे निष्णात थे। नानाजी ने डे मास्टर से खेलने की अनुमति मांगी, बहुत अनुनय-विनय पर अनुमति मिल गई। लेफ्ट खेलने को कहा, नानाजी से गोल लग गया। उन्हें टीम में ले लिया गया। उसी टीम को नानाजी ने संघ की शाखा बना दिया। उसमें के सात खिलाड़ियों को साथ ले वे 1941 के संघ शिक्षा-वर्ग में नागपुर गए। संघ-कार्य बढ़ाने के लिए उन्होंने नए-नए उपाए अपनाए। अपनी व्यवहार कुशलता से एक ओर उन्होंने महंत दिग्विजय नाथ, गीता प्रेस के संस्थापक भाई हनुमान प्रसाद पोद्दार, कांग्रेसी नेता बाबा राघवदास जैसे प्रतिष्ठित और बड़े लोगों से सम्पर्क बनाया। बार एसोशियेशन के चेयरमैन हरिहर प्रसाद दुबे को संघचालक बनाया। प्रसिद्ध होमियोपेथ डॉक्टर हृषिकेश बनर्जी को जिला कार्यवाह का दायित्व दिया। शूगर मिल के मैनेजर ठाकुरदास साहनी को जोड़ा। युवकों में राष्ट्रप्रेम और वीर भाव का संचार करने के लिए अभिनव ढंग के विशाल कार्यक्रमों की रचना की।

अटल जी, दत्तोपंत जी, आडवाणी जी आदि के साथ में पंगत में भोजन करते नानाजी

1942 के भारत छोड़ो आंदोलन के समय संघ के एकत्रीकरण को भंग करने के लिए अंग्रेज एस.पी. मि. टामस पिस्तौल हिलाता हुआ पुलिस टुकड़ी के साथ 'डिस्पर्स, डिस्पर्स' चिल्लाता हुआ आ धमका। नानाजी ने स्थिति की नाजुकता को भांपा, दौड़ते हुए टामस के पास पहुंचे, उसके कान में कुछ कहा। सम्पत कराया, प्रार्थना और ध्वज प्रणाम करके विकिर कर दिया। टामस को अपना पौरूष दिखाने का अवसर नहीं दिया। देवरिया जिले के गौरी बाजार के पास टप्पी गांव में एक विशाल शीत-शिविर लगाया। स्वयंसेवकों के द्वारा 500 रावटी या पटकुटियाँ तैयार कराई, शंख व्यूह रचना के बाद सूर्यास्त के समय एक विशाल युद्ध का दृश्य खड़ा किया। इस युद्ध में 17 हाथियों और घुड़सवारों का भी योगदान रहा। शौर्य का यह दृश्य स्वयंसेवकों और ग्राम-नगरवासियों के मन पर छा गया। 1944 में नारायणी नदी का प्रकोप छितौली गांव पर टूटा। नानाजी स्वयंसेवकों को लेकर उस गांव के सहायतार्थ दौड़ पड़े। सैकड़ों बोरी खाद्य-पदार्थ वहां पहुंचा दिए। बाबा राघवदास की टोली स्वयंसेवकों की यह

डी.आर.आई. में बालासाहब जी के साथ नानाजी

तत्परता और सेवावृत्ति देख चमत्कृत रह गई। नानाजी का कार्यक्षेत्र बढ़ता जा रहा था। गोरखपुर नगर से जिला, देवरिया और बस्ती, आजमगढ़ तथा बलिया जिलों तक विस्तार हो गया। पूरे क्षेत्र में शाखाओं का जाल बिछ गया। 1942 तक 250 शाखाएं खुल गईं। 1946 तक पूरा क्षेत्र संघ-शाखाओं से पट गया। उन दिनों पूर्वी उत्तर प्रदेश में बाल-विवाह होता था। अतः नानाजी ने पहली बार उदयवीर सिंह जैसे विवाहित युवकों को प्रचारक निकाला। नानाजी की प्रेरणा से योगेन्द्र जी, हरीश श्रीवास्तव, सुधीर जी जैसे अनेक क्षमतावान प्रचारकों की श्रृंखला खड़ी हुई। उन दिनों संघ-कार्य की दृष्टि से नानाजी का क्षेत्र उत्तर प्रदेश में सबसे आगे माना जाता था। गोरखपुर में मारवाड़ी व्यापारियों की बड़ी बस्ती थी, नानाजी उन्हें संघ में खींच लाए। बालाप्रसाद तुलस्यान, मुरलीधर तुलस्यान, मदन जालान, देवी प्रसाद अग्रवाल जैसे श्रेष्ठ कार्यकर्ता मिले। पूरे प्रांत में नानाजी के कर्तृत्व की चर्चा होती थी। उस कालखंड पर एक बड़ा ग्रंथ लिखा जा सकता है।

1942 से उत्तर प्रदेश में संघ शिक्षा वर्ग का लगना आरंभ हुआ। पहला वर्ग लखनऊ में लगा। 1943 से काशी में लगने लगा। प्रारंभ से ही नानाजी को शिक्षा-वर्ग की व्यवस्था का भार दे दिया गया। 1945 में काशी के शिक्षा-वर्ग पर ब्रिटिश सरकार की कोप दृष्टि पड़ी। उसे बीच में ही स्थगित करना पड़ा। उन्हीं दिनों नानाजी के बड़े भाई आबाजी अपनी पत्नी के देहांत से शोक-विह्वल होकर नानाजी को लेने काशी पहुंचे। नानाजी ने वर्ग छोड़कर जाने से मनाकर दिया। आबाजी रोते-बिलखते वापस लौटे। कुछ ही दिनों बाद 29 अप्रैल को उनके इकलौते पुत्र के निधन का तार पहुंचा। भाऊराव जी ने नानाजी को कडोली होते हुए 5 मई को नागपुर में आरंभ होने वाले वर्ग में तृतीय वर्ष का शिक्षण पूरा करने को कहा। उन दिनों कडोली की यात्रा बहुत समय लेती थी। नानाजी वहां 3 मई की रात में 8 बजे पहुंचे, पर नागपुर समय पर पहुंचने के लिए अगली प्रातः 4 बजे पैदल ही कडोली से 6 मील पर स्थित वाशिम के लिए रवाना हो गए ताकि बस से समय पर नागपुर पहुंच सके। शोक-विह्वल परिवारजन एवं ग्रामवासी उनकी इस कठोर संघ-निष्ठा को देखकर कहने लगे कि उनका दिल पत्थर का बना लगता है। पर नानाजी का अतिसंवेदनशील अंतःकरण ध्येयनिष्ठा एवं अनुशासन-भाव से बंधा था। 1945 में तृतीय वर्ष शिक्षण पूरा कर वे पुनः गोरखपुर विभाग में संघ-कार्य में जुट गए। 1946 में उनके क्षेत्र में शाखाओं की संख्या 600 पार कर गई थी।

कार्य तेजी से बढ़ रहा था कि 30 जनवरी 1948 को गांधी जी की हत्या का दुर्भाग्य घटित हुआ।

पं. नेहरू ने उसे बहाना बनाकर 4 फरवरी को संघ पर प्रतिबंध थोप दिया। देश भर में हजारों-हजार स्वयंसेवक अकारण ही गिरफ्तार कर लिए गए। गोरखपुर में नानाजी को भी गिरफ्तार किया गया। उन पर आरोप लगाया गया कि उन्होंने महंत दिग्विजयनाथ जी से गोडसे की भेंट कराई, उसे पिस्तौल दिलवाई। पहले 15 दिन उन्हें डाकुओं और खूनियों के साथ 'कन्डेम्ड सेल' में रखा गया। चार महीने अकेले सेल में बंद रखा। वहां उनके साथ नेशनल गार्ड के नेता मोइनुद्दीन को भी रखा गया। उससे नानाजी की गहरी दोस्ती हो गई। कांग्रेस नेता रफी अहमद किदवई उसके सहपाठी रहे थे। वे उनसे भेंट करने जेल आए। उन्होंने नानाजी का किदवई साहब से परिचय कराया। किदवई साहब के यहां से दोनों के लिए भोजन आता। जेल से छूटने पर नानाजी रफी अहमद किदवई को धन्यवाद देने गए। उनके साथ संबंध बनाए रखा।

6 महीने बाद जेल से बाहर आने पर नानाजी को 'राष्ट्रधर्म' प्रकाशन की व्यवस्था संभालने के लिए दीनदयाल जी के पास लखनऊ भेज दिया गया। दीनदयाल जी के मार्गदर्शन में 'राष्ट्रधर्म' प्रकाशन की स्थापना 1947 में हुई थी। 1947 की रक्षाबंधन पर अटल जी और राजीवलोचन अग्निहोत्री के संयुक्त संपादकत्व में 'राष्ट्रधर्म' मासिक का प्रकाशन शुरू हुआ। जनवरी 1948 की मकर संक्रान्ति पर अटल जी के संपादकत्व में 'पांचजन्य' साप्ताहिक निकला। 4 फरवरी 1948 को

नानाजी के लिए प्रकाशन का क्षेत्र बिल्कुल नया था। किन्तु उनकी योजक बुद्धि किसी भी नई चीज को तुरंत सीख लेती थी। उन्होंने मशीन की बिल्टी छुड़ा कर तुरंत एक ट्रक के द्वारा उसे इलाहाबाद भेज दिया और वहां 'सेवा प्रेस' स्थापित कर दी, जिसका उपयोग संघ की भूमिगत सामग्री के मुद्रण के लिए होने लगा।

संघ पर प्रतिबंध लगने के बाद नानाजी के लखनऊ आने के पहले दोनों पत्रिकाओं पर भी प्रतिबंध लग चुका था। 9 दिसंबर 1948 में सत्याग्रह शुरू होने के पूर्व 'स्वदेश दैनिक' आरंभ हुआ। किन्तु 6-7 दिन बाद ही पुलिस ने छापा मार कर कार्यालय सील कर दिया। प्रेस की तालाबंदी होते ही पहले से आर्डर की हुई एक मशीन की बिल्टी आ गई। नानाजी के लिए प्रकाशन का क्षेत्र बिल्कुल नया था। किन्तु उनकी योजक बुद्धि किसी भी नई चीज को तुरंत सीख लेती थी। कठिनाइयों का रास्ता खोजने में वे कुशल थे। उन्होंने मशीन की बिल्टी छुड़ा कर तुरंत एक ट्रक के द्वारा उसे इलाहाबाद भेज दिया और वहां 'सेवा प्रेस' स्थापित कर दिया, जिसका उपयोग संघ की भूमिगत सामग्री के मुद्रण के लिए होने लगा। उन्हीं दिनों नानाजी इलाहाबाद गए और वहां चांद प्रेस के मालिक रामरक्खा सहगल से संपर्क किया। उस समय संघ के पक्ष में खड़ा होने वाला सहगल जी का अंग्रेजी साप्ताहिक 'क्राइसिस' अकेला पत्र था। 12 जुलाई, 1949 को संघ पर से प्रतिबंध उठने

कार्यकर्ता कृष्णकांत प्रचारक जीवन से गृहस्थ जीवन में प्रवेश करना चाहते थे, किन्तु जीविकार्जन का उपयुक्त साधन उन्हें नहीं दिख रहा था। नानाजी ने उनका विवाह आयोजित किया और पति-पत्नी दोनों की शिक्षा व संस्कारक्षमता का उपयोग करने के लिए एक शिशु मंदिर की कल्पना की।

पर नानाजी ने 'स्वदेश' पुनः प्रकाशित कराने की तैयारी शुरू कर दी।

1950 में संघ-दृष्टि से पश्चिमी उत्तर प्रदेश भाऊराव के कार्यक्षेत्र में सम्मिलित किए जाने के कारण भाऊराव ने दीनदयाल जी को मेरठ भाग का दायित्व संभालने के लिए भेज दिया और लखनऊ में नानाजी अकेले रह गए। कलकत्ता जाकर उन्होंने एक नई मशीन खरीदी। 'स्वदेश' के लिए आर्थिक साधन जुटाने में उनके गोरखपुर के संबंध काम आए। भाई हनुमान प्रसाद जी पोद्दार एवं गोरखपुर के अनेक मारवाड़ी स्वयंसेवकों के धनाढ्य संबंधी कलकत्ते में रहते थे, उनकी आर्थिक सहायता से ही 'स्वदेश' का घाटा पूरा हो पाता था। अगस्त 1950 में 'स्वदेश' का प्रकाशन पुनः आरंभ हुआ और वह 2 वर्ष तक चला। उन दिनों नानाजी के साथ अटल जी, गिरीशचंद्र मिश्र, ज्ञानेन्द्र सक्सेना, महेन्द्र कुलश्रेष्ठ, सुरेन्द्र मित्तल, आदि पूरा संपादक मंडल सदर बाजार में ब्रिटिश काल के एक क्लब के जीर्ण-शीर्ण विशाल बंगले में निवास करता था। इस प्रकार 1948 के अंत से 1951 में जनसंघ के गठन तक नानाजी ने 'राष्ट्रधर्म' प्रकाशन के प्रबंध निदेशक का दायित्व सफलतापूर्वक निभाया। प्रकाशन के क्षेत्र में भी नानाजी ने अपनी कलात्मक दृष्टि का परिचय दिया। बम्बई के दलाल स्टूडियो में संघ की प्रार्थना के चित्र और ब्लॉक बनवा कर अपने भारत प्रेस से ही अत्यंत आकर्षक बहुरंगी पुस्तिका का प्रकाशन करके दिखाया।

लखनऊ में रहते हुए भी नानाजी का गोरखपुर विभाग के कार्यकर्ताओं से संपर्क निरंतर बना रहा। वे उनके दुःख-सुख में सहभागी रहे। उनकी समस्याओं को हल करते रहे। ऐसे ही एक कार्यकर्ता कृष्णकांत प्रचारक जीवन से गृहस्थ जीवन में प्रवेश करना चाहते थे, किन्तु जीविकार्जन का उपयुक्त साधन उन्हें नहीं दिख रहा था। नानाजी ने उनका विवाह आयोजित किया और पति-पत्नी दोनों की शिक्षा व संस्कारक्षमता का उपयोग करने के लिए एक शिशु मंदिर की कल्पना की। इस प्रकार भारत में पहले सरस्वती शिशु मंदिर का श्रीगणेश 1950 में गोरखपुर में नानाजी के मार्गदर्शन में हुआ। इस शिशु मंदिर के अनुकरण पर देश भर में स्वतंत्र रूप से हजारों सरस्वती शिशु मंदिरों की विशाल श्रृंखला खड़ी हो गई। विद्या भारती के मार्गदर्शन में भारत का विशालतम गैरसरकारी शिक्षा आंदोलन बन गया है।

अब एक बिल्कुल नया क्षेत्र नानाजी की प्रतीक्षा कर रहा था और वह था वोट और दल पर

आधारित राजनीति का। अंतर-बाह्य दबावों के कारण राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को एक नए राष्ट्रवादी राजनीतिक दल के निर्माण में सहयोग देना पड़ रहा था। डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी की अध्यक्षता में 'भारतीय जनसंघ' नामक नए दल को अक्टूबर 1951 में अखिल भारतीय स्वरूप प्राप्त हो गया। संघ के जिन कार्यकर्ताओं को डॉ. मुखर्जी का सहयोग करने के लिए चिन्हित किया गया, उनमें दीनदयाल जी के साथ नानाजी देशमुख का नाम भी था। मार्च 1952 में पहला आम चुनाव होना था। उत्तर प्रदेश से उसकी तैयारी के लिए नानाजी पूरे मनोयोग से कई महीने पहले से जनसंघ में सक्रिय हो गए। संगठनशास्त्र में पारंगत नानाजी को उत्तर प्रदेश के संगठन-तंत्र का दायित्व दिया गया। उन्होंने अथक परिश्रम करके प्रत्येक जिले में जनसंघ का संगठन खड़ा किया। उनके कुशल नेतृत्व में उत्तर प्रदेश में जनसंघ के विधायकों की संख्या 1957 में 14 से बढ़कर 1967 में 100 पहुंच गई। नानाजी ने जनसंघ के बाहर अन्य राजनीतिक दलों के नेताओं से भी संबंध स्थापित करने का प्रयास किया। कांग्रेस में डॉ. संपूर्णानंद, चौ. चरण सिंह, लाल बहादुर शास्त्री आदि से सीधे संबंध स्थापित किए। 1956 में पं. नेहरू की सहकारी खेती का खुलकर विरोध करने का साहस दिखाने पर वे चरण सिंह को बधाई देने पहुंचे। समाजवादी नेता डॉ. राम मनोहर लोहिया से परिचय करने के लिए लखनऊ में उनके कॉफी हाऊस अड्डे पर जा पहुंचे। अपना परिचय देकर कहा कि मैं आपसे संबंध बनाना चाहता हूँ। डॉ. लोहिया ने उपहास करते हुए कहा कि "तुम जनसंघ के हो यानी संघ के हो तब तुम्हारी-हमारी दोस्ती कैसे जमेगी?" नानाजी ने कहा कि "मैं संघ का हूँ और अंत तक रहूंगा, फिर भी आपसे संबंध चाहता हूँ।" सचमुच उन्होंने डॉ. लोहिया को अपने निकट खींच लिया। 1962 के चुनाव में पं. नेहरू के विरूद्ध संत प्रमुदत्त जी ब्रह्मचारीजी को चुनाव लड़ने के लिए तैयार करने का प्रयास करते समय डॉ. लोहिया ने नानाजी को बुलाया। अगस्त 1962 में उत्तर प्रदेश के कार्यकर्ताओं के वर्ग में डॉ. लोहिया आए। 1963 के लोक सभा के मध्यावधि चुनावों में डॉ. लोहिया को फरूखाबाद से जिताने में जनसंघ कार्यकर्ताओं ने जी-जान से काम किया। नानाजी ने डॉ. लोहिया और दीनदयाल जी का भारत-पाक महासंघ पर ऐतिहासिक संयुक्त वक्तव्य जारी होने की स्थिति पैदा की। 1958 में उत्तर प्रदेश में मुख्यमंत्री डॉ. संपूर्णानंद के मंत्रिमंडल से चन्द्रभानु गुप्त और चौ. चरण सिंह ने त्याग-पत्र देकर संकट पैदा किया तो डॉ. संपूर्णानंद ने नानाजी की सहायता मांगी। तभी चरण सिंह ने नानाजी से कहा कि "मुझे उत्तर प्रदेश का मुख्यमंत्री कब बनाओगे?" नानाजी ने कहा "जब हमारे पास अपने 100 विधायक होंगे।" 1967 में यह स्थिति आयी तो नानाजी ने चरण सिंह को

अपने प्रेरणा-पुरुष पं. दीनदयाल उपाध्याय के पार्थिव शरीर के सम्मुख स्तब्ध नानाजी

कांग्रेस से बाहर आकर सरकार बनाने का न्योता दिया और चरण सिंह अपने 16 विधायकों को लेकर कांग्रेस से बाहर आकर जनसंघ के कंधों पर सवार हो मुख्यमंत्री बन गए। 1967 में बिहार, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, मध्य प्रदेश और राजस्थान आदि अनेक राज्यों में गैर कांग्रेसी संयुक्त विधायक दल सरकारों के गठन में नानाजी की महत्वपूर्ण भूमिका रही।

चुनाव राजनीति में व्यक्तिगत सत्ताकांक्षा में से उत्पन्न अवसरवाद, दल-बदल, जातिवाद, विश्वासघात आदि दुर्गुणों को देखकर नानाजी मन ही मन बहुत दुःखी रहते थे। डॉ. लोहिया ने गैरकांग्रेसवाद का नारा देकर राजनीति को नकारात्मक बना दिया। उन्होंने नानाजी को बताया कि वैश्य कुल में जन्म होने के कारण मेरे साथी मेरे लिए सुरक्षित सीट नहीं खोज पा रहे हैं। नानाजी ने पाया कि सभी बड़े-बड़े नेता दल-बदल कर अपने लिए सत्ता पाना चाहते हैं, राष्ट्रहित की उन्हें कोई चिंता नहीं। उनकी राजनीति केवल चुनाव लड़ने तक सीमित है। चुनाव जीतने के लिए वे जातिवाद, अल्पसंख्यकवाद का सहारा लेते हैं। वे जनता के बीच काम नहीं करते, कोई संगठन खड़ा नहीं करते। वे केवल जोड़-तोड़ में लगे रहते हैं। उस काल में नानाजी ने राजनीति के अखाड़े में चल रहे दांव-पेंचों के प्रयोग में भी अपनी धाक जमा दी थी। सी.बी. गुप्ता जैसे धुरंधर राजनीतिज्ञ उनसे डरने लगे। कोई उन्हें 'चाणक्य' कहता तो कोई 'नाना फणनवीस'। उत्तर प्रदेश में प्रत्येक राजनीतिक उथल-पुथल के पीछे नानाजी का हाथ टटोला जाने लगा। किन्तु नानाजी की राजनीति अपने लिए नहीं, राष्ट्र के लिए थी। 14 अगस्त 1979 को चौ. चरण सिंह के नाम अपने लंबे खुले पत्र में नानाजी ने चरण सिंह की व्यक्तिगत सत्ताकांक्षा और अवसरवादी राजनीति का तिथिवार तथ्यात्मक वर्णन करते हुए लिखा कि, "मैंने राजनीति में प्रवेश अपने लिए नहीं, राष्ट्र-निर्माण के लक्ष्य को पाने के लिए किया है।"

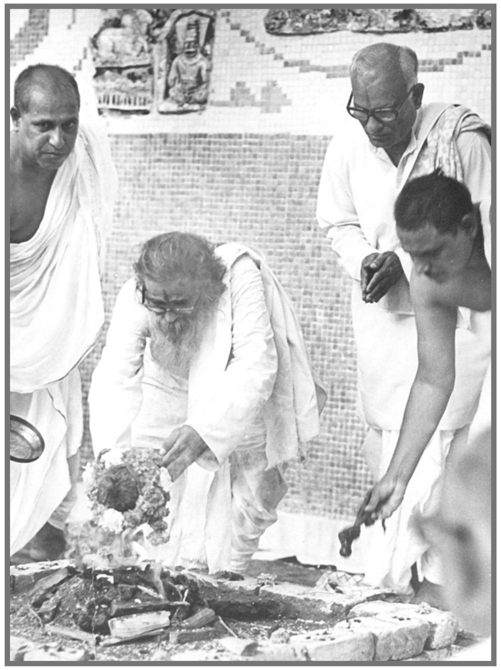

दिल्ली में दीनदयाल शोध संस्थान के भवन के उद्घाटन के अवसर पर हवन करते श्री गुरुजी के साथ नानाजी

जनसंघ में 1951 से 1961 तक नानाजी का कार्यक्षेत्र उत्तर प्रदेश रहा। 1962 के आम चुनाव में उन्हें अखिल भारतीय दायित्व मिल गया। चुनाव-तंत्र खड़ा करने से लेकर चुनाव-कोष जमा करने तक का भार उन पर आ पड़ा। जिसके लिए उन्होंने देश के उद्योगपतियों से संबंध स्थापित किए। 1967 के चुनाव में भारतीय जनसंघ कांग्रेस के बाद सबसे बड़े विपक्षी दल के रूप में उभर आया। तभी दुर्भाग्य से जनसंघ के दर्शनकार और श्रद्धाकेन्द्र पं. दीनदयाल उपाध्याय की अध्यक्ष पद संभालने के

कुछ ही समय बाद 11 फरवरी 1968 को काशी के बाद मुगलसराय स्टेशन पर रहस्यमय ढंग से हत्या हो गई। नानाजी पर यह भारी व्यक्तिगत आघात था। कई महीने तक वे दीनदयाल जी की हत्या के रहस्य का पता लगाने में जुटे रहे। चन्द्रचूड आयोग के सामने दस्तावेजी एवं मौखिक साक्ष्य पेश करते रहे। साथ ही उन्होंने दीनदयाल जी के चिंतन और कर्म को आगे बढ़ाने के लिए अटल जी की अध्यक्षता में दीनदयाल उपाध्याय स्मारक समिति का गठन करके उसका सचिव पद स्वयं संभाला। 1968 में ही दीनदयाल उपाध्याय स्मारक समिति के पहले प्रकाशन के रूप में उन्होंने अंग्रेजी साप्ताहिक 'आर्गनायजर' में छपे दीनदयाल जी के लेखों का एक संकलन 'पोलिटिकल डायरी' शीर्षक से मुंबई की प्रसिद्ध प्रकाशन संस्था 'जेको' द्वारा प्रकाशित कराया। उस पुस्तक की भूमिका अपने व्यक्तिगत संबंधों के आधार पर कांग्रेसी नेता और काशी विद्यापीठ के कुलपति डॉ. संपूर्णानंद से लिखवाई।

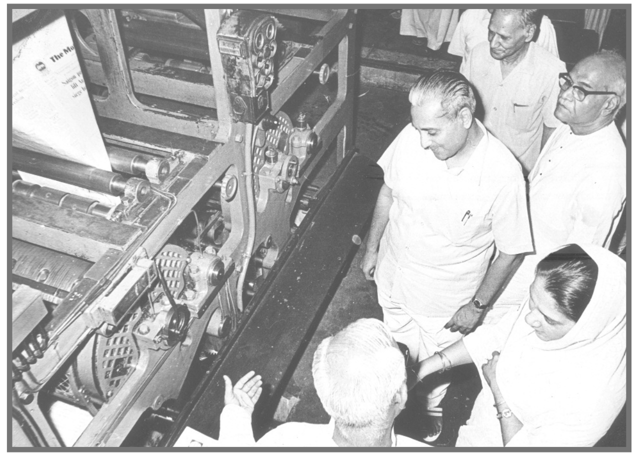

मदरलैंड प्रेस में रामनाथ गोयंका, राजमाता सिंधिया व विष्णुहरि डालमिया के साथ

दीनदयाल जी की स्मृति में "दीनदयाल शोध संस्थान" की स्थापना की। दिल्ली में उसके सात मंजिले भवन की वास्तुकला और सज्जा में नानाजी की कलात्मक प्रतिभा की छाप बहुत स्पष्ट है। शोध संस्थान के प्रवेश कक्ष की दीवारों पर उन्होंने भारत के सांस्कृतिक प्रवाह की चित्रमय झांकी को उत्कीर्ण कराया। दीनदयाल जी की प्रतिमा स्थापित की। 1972 में श्री अरविंद के जन्मदिवस पर सरसंघचालक श्री गुरुजी के द्वारा उसका औपचारिक उद्घाटन कराया। इस अवसर पर यज्ञवेदी में आहुति देते हुए श्री गुरुजी का चित्र पूरे भारत में छा गया। इसी प्रकार छठी मंजिल में श्री गुरुजी का खड़ी मुद्रा में आदमकद तैलचित्र इतना जीवंत है कि वह अनूठा चित्र घर-घर में पहुंच गया। संस्थान के उद्घाटन के अवसर पर नानाजी ने दीनदयाल जी के व्यक्तित्व और कर्तृत्व पर प्रकाश डालने वाला एक ग्रंथ अंग्रेजी और हिन्दी भाषाओं में प्रकाशित किया। इस शोध संस्थान को बौद्धिक गतिविधियों का केन्द्र बनाने के लिए नानाजी ने श्री दत्तोपंत ठेंगड़ी, डॉ. सुब्रह्मण्यम् स्वामी जैसे बौद्धिक व्यक्तित्वों को संस्थान से जोड़ा। 1977 में आपातकाल के बाद वे केरल के श्री पी. परमेश्वरन को निदेशक पद पर लाए। अंग्रेजी और हिन्दी में 'मंथन' नाम से त्रैमासिक शोध पत्रिकाएं आंरभ की। विचार-गोष्ठियों, निबंध प्रतियोगिताओं एवं प्रकाशनों का तांता लगा दिया।

1971 के मध्यावधि चुनाव के बाद से भारतीय राजनीति में एक ओर इंदिरा गांधी के निरंकुशवाद, दूसरी ओर विपक्षी दलों में व्याप्त व्यक्तिवाद, अवसरवाद और भ्रष्टाचार को देखकर नानाजी मन ही मन बहुत उद्विग्न रहने लगे। सच कहा जाए तो उस समय नानाजी विभाजित मनःस्थिति में जी रहे थे। एक ओर तो वे जनसंघ के महामंत्री के नाते राजनीति में सक्रिय दिख रहे थे, दूसरी ओर वे मन ही मन वोट और दल की राजनीति के चरित्र परिवर्तन का उपाय खोजने में लगे थे। उन दिनों उनका इंडियन एक्सप्रेस के स्वामी रामनाथ गोयनका से बहुत घनिष्ठ संबंध था। गोयनका जी के माध्यम से सर्वोदयी नेता जयप्रकाश नारायण जी से निकटता बनी। जयप्रकाश जी स्वयं भी भारतीय राजनीति के चरित्र की गिरावट से बहुत दुःखी एवं चिन्तित रहते थे। कभी-कभी वे व्यवस्था-परिवर्तन की बात भी करते थे। किन्तु उनका अपना व उनकी पत्नी प्रभावती जी का स्वास्थ्य गिर रहा था। प्रभावती जी के कैंसर का रोग घातक स्थिति में पहुंच रहा था। उन्हें मुंबई के टाटा कैंसर अस्पताल में कमरा नहीं मिल रहा था। नानाजी और गोयनका जी ने टाटा के लिए आरक्षित दो कमरों में से एक कमरा प्रभावती जी को दिलवाया।

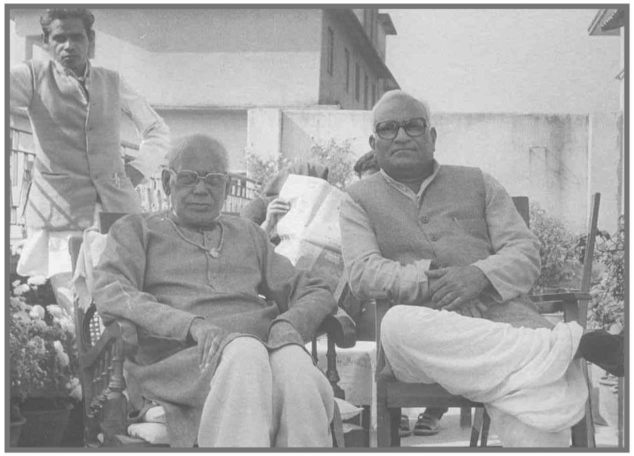

जे.पी. के साथ नानाजी

नवंबर 1972 में नानाजी स्वयं जयप्रकाश जी के साथ मुंबई जाकर उनके साथ ही रहे। तब नानाजी ने जयप्रकाश जी को निकट से देखा। उनकी सरलता, निःस्वार्थता और लोकमंगल की भावना से वे बहुत अधिक प्रभावित हुए। प्रथम पंक्ति के स्वतंत्रता सेनानी होते हुए भी जयप्रकाश जी ने अपने लिए सत्ता कभी नहीं चाही। पं. नेहरू के कहने पर भी वे मंत्री नहीं बने। 1957 के बाद दल और वोट की राजनीति से उन्होंने अपने को अलग कर लिया। इसलिए नानाजी और गोयनका जी दोनों को लगा कि जयप्रकाशजी ही इस राजनीति का विकल्प प्रदान कर सकते हैं। 15 अप्रैल 1973 को पटना में प्रभावती जी के निधन के बाद जयप्रकाश जी अंदर से टूट गए थे। उनका स्वयं का स्वास्थ्य भी जर्जर था। इस मनःस्थिति में उन्होंने दिल्ली में इंडियन एक्सप्रेस के गेस्ट हाऊस में गोयनका जी का आतिथ्य स्वीकार कर लिया। वहां गोयनका जी, रामधारी सिंह दिनकर एवं गंगाशरण सिंह आदि मित्र जे.पी. को दिलासा देते और उनके संकल्प बल को दृढ़ करने का प्रयास करते। नानाजी के अतिरिक्त बीच-बीच में चन्द्रशेखर भी आते रहते थे और देश की परिस्थिति पर विचार-मंथन करते थे।। राजनीति के चारित्रिक पतन और इंदिरा गांधी की अधिनायकवादी प्रवृत्तियों से जे.पी. बहुत अधिक उद्वेलित थे। जुलाई और सितंबर 1973 के बीच उन्होंने अंग्रेजी साप्ताहिक 'एवरीमेन्स' में तीन लेखों की माला में अपनी चिंता उड़ेली। कुछ राज्यों में विधानसभाओं के चुनाव के पूर्व दिसंबर 1973 में जे.पी. ने

'लोकतंत्र के लिए युवा' शीर्षक से युवाओं के नाम एक अपील भी जारी की। लगभग उसी समय गुजरात के कांग्रेसी मुख्यमंत्री चिमनभाई पटेल के विरुद्ध नवनिर्माण समिति के तत्वावधान में छात्र आंदोलन प्रारंभ हो गया। नानाजी, गोयनका जी एवं पूरी मित्रमंडली को लगा कि यदि इस समय जे.पी. गुजरात जाकर उस आंदोलन का विराट रूप देखें तो शायद उनमें नेतृत्व करने का उत्साह जग सकेगा। सबने मिलकर जे.पी. को 14-15 फरवरी 1974 को अहमदाबाद यात्रा के लिए तैयार कर लिया। नानाजी जे.पी. के स्वागत एवं कार्यक्रमों की तैयारी के लिए सात दिन पहले अहमदाबाद पहुंच गए। गुजरात आंदोलन में अखिल भारतीय विद्यार्थी परिषद् की प्रमुख भूमिका थी। अतः नानाजी की प्रेरणा और योजना से जे.पी. का अहमदाबाद एयरपोर्ट पर इतना विशाल और भव्य स्वागत हुआ कि वहां उमड़े जन-ज्वार को देखकर जे.पी. भावविभोर हो गए। वे बार-बार कहते थे कि "इस दृश्य को देखकर 1942 की याद आती है।" जे.पी. का नैराश्यभाव छंट गया और युवा-शक्ति के बल पर व्यवस्था परिवर्तन का उन्हें विश्वास होने लगा। 13 फरवरी 1974 को साबरमती आश्रम में रचनात्मक कार्यकर्ताओं को संबोधित करते हुए जे.पी. ने कहा, "यह क्रांतिकारी परिस्थिति है। उसकी मांग है परिवर्तन। मैं स्वास्थ्य के कारण लाचार हूँ। दिल में हिम्मत है, लेकिन नाजुक स्वास्थ्य के कारण हिचकता हूँ।" किन्तु साथ ही जे.पी. ने माना कि जो रास्ता वे खोज रहे थे, गुजरात के छात्रों ने वह दिखा दिया है। नानाजी लिखते हैं कि यहीं से जे.पी. के आंदोलन के साथ मैं जुड़ गया।

लगभग इसी समय 18 मार्च 1974 में बिहार प्रदेश छात्र संघर्ष समिति ने बिहार विधान सभा पर कूच का आयोजन किया, जिसे भंग करने लिए पुलिस ने लाठी चार्ज और गोलीवर्षा का सहारा लिया। आंदोलनकारी छात्रों में विद्यार्थी परिषद् के कार्यकर्ताओं की बड़ी संख्या थी। छात्रों के प्रतिनिधिमंडल ने जे.पी. से उनके आंदोलन का नेतृत्व करने का अनुरोध किया। किन्तु जे.पी. अपने गिरते स्वास्थ्य के कारण हिचकिचा रहे थे। उन्होंने कहा, "तुम आगे बढ़ो, हम तुम्हारे साथ हैं।" पर छात्र नेता जे.पी. के नेतृत्व के लिए अड़े रहे। 9 अप्रैल की जनसभा में छात्रों ने जे.पी. को 'लोकनायक' घोषित कर दिया। जे.पी. को प्रोस्टेट का रोग बहुत कष्ट दे रहा था। उसका ऑपरेशन कराने के लिए जे.पी. ने वेल्लोर जाने का निर्णय लिया। किंतु उसके पूर्व उन्होंने आंदोलन के नेतृत्व करने की सहमति दो शर्तों के साथ दे दी। पहला कि आंदोलन पूर्णतया शांतिमय रहेगा। दूसरा, आंदोलन निर्दलीय होगा। सब जे.पी. के अनुशासन से चलेंगे। छात्रों से वचन लेकर जे.पी. ने चार व्यक्तियों की संचालन समिति बनाई जिसमें नारायण भाई, राममूर्ति, मनमोहन चौधरी और त्रिपुरारी शरण को रखा। साथ ही उन्होंने इस समिति को पांच सप्ताह के आंदोलन का कार्यक्रम भी बना कर दे दिया। उसके बाद वे 23 अप्रैल को पटना के अपने डाक्टर आर.वी.पी. सिंह को साथ लेकर वेल्लोर रवाना हो गए। वेल्लोर अस्पताल से भी तार और टेलीप्रिंटर

जार्ज फर्नांडीज़ व चंद्रशेखर, नानाजी के साथ

द्वारा आंदोलन के लिए आवश्यक दिशा-निर्देश भेजते रहे।

2 जून, 1974 को वेल्लोर से लौटने के बाद जे.पी. पूरी ताकत से युवा आंदोलन में कूद पड़े। 5 जून, 1974 को गांधी मैदान में जे.पी. कह उठे, "यह क्रांति है मित्रों, और संपूर्ण क्रांति है। यह कोई विधानसभा के विघटन का ही आंदोलन नहीं है। वह तो रास्ते की मात्र एक मंजिल है। दूर जाना है, बहुत दूर जाना है।" उन्होंने 3, 4 और 5 अक्टूबर 1974 को तीन दिन के 'बिहार बंद' का आह्वान किया। इस आह्वान की सफलता के लिए नानाजी ने जीप और मोटर साईकिल से पूरे बिहार का तूफानी दौरा किया, बंद पूरी तरह सफल रहा। अब जे.पी. ने 4 नवंबर 1974 को बिहार सचिवालय के घेराव का आह्वान किया। नानाजी पुनः बिहार के दौरे पर जनजागरण के लिए निकल पड़े। 30 अक्टूबर की प्रातः सासाराम में उनकी जनसभा को पुलिस ने घेर लिया, पर सभा चलती रही। सभा के बाद नानाजी एक कार्यकर्ता के घर भोजन के लिए गए। वहां भी पुलिस पहुंच गई। एस.पी. ने नानाजी को बिहार से निष्कासन का आदेश सुनाया, कहा कि मुझे आपको बिहार की सीमा से बाहर छोड़ आने का निर्देश मिला है। परंतु घर की महिलाओं ने भोजन पूरा किए बिना नहीं जाने दिया। वहां भारी भीड़ इकट्ठा हो गई और जलूस बनकर उन्हें विदा किया। नानाजी ने कहा कि "हम 4 नवंबर को मिलेंगे" तो जिलाधीश ने कहा कि आपका फोटो प्रत्येक थाने को भेज दिया गया है। आप पटना कदापि नहीं पहुंचेंगे। पुलिस उन्हें वाराणसी में जनसंघ कार्यालय छोड़ आई। वहां से नानाजी दिल्ली चले गए और 4 नवंबर को डाकिए के भेष में आर.एम.एस. के डिब्बे में बैठकर पटना पहुंच गए। जुलूस के आरंभ होने पर उन्हें अपनी बगल में खड़े देखकर जे.पी. विस्मित रह गए। जुलूस में नानाजी जे.पी. के साथ कभी पैदल कभी जीप में छाया की तरह चले। नानाजी ने देखा कि एक सी.आर.पी.एफ. के एक जवान की लाठी जे.पी. के सिर पर पड़ने ही वाली है तो वे कूद कर जे.पी. के सामने आ गए और लाठी का वार अपनी बायीं कलाई पर थाम लिया। उन पर कई लाठियां पड़ीं। यदि उस समय नानाजी तनिक भी चूक जाते तो पता नहीं जे.पी. का क्या होता, केवल उनका पैर ही जख्मी हुआ। मूर्च्छित जे.पी. को सड़क पर ही एक पान की दुकान के सामने खाट पर लिटाया गया और उनके चेहरे पर पानी के छींटे देकर उन्हें होश में लाने का प्रयास हुआ। पुलिस जे.पी. और नानाजी को गिरफ्तार करके अलग-अलग ट्रकों में ले गई। नानाजी को रात में एक बजे अस्पताल पहुंचाया गया और उनकी टूटी कलाई पर प्लास्टर चढ़ाया गया। अगली प्रातः उन्हें जेल वापस ले गए।

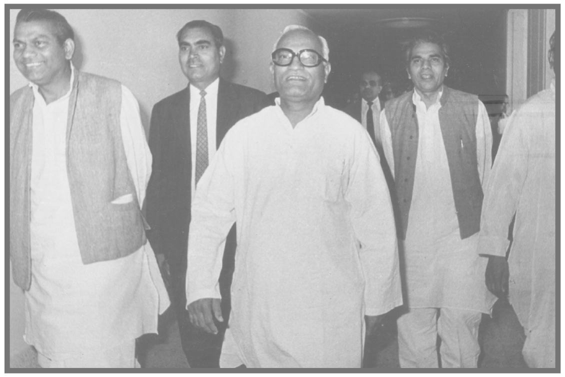

समाजवादी रवि रॉय व मधु लिमये के साथ

नानाजी ने अपनी प्रत्युत्पन्नमति, साहस और त्याग भावना से जे.पी. का विश्वास इस सीमा तक अर्जित किया कि 26 नवंबर 1974 को दिल्ली में बुद्धिजीवियों के एक सम्मेलन में जे.पी. ने संघ और जनसंघ की देशभक्ति की प्रशंसा करके उनके आलोचकों को निरूत्तर कर दिया। अब तक जे.पी. बिहार आंदोलन को छात्र आंदोलन की परिधि से आगे बढ़ाकर व्यवस्था-परिवर्तन की अखिल भारतीय संपूर्ण क्रांति का रूप देने की दिशा में काफी आगे बढ़ गए थे। जे.पी. वोट और दल की राजनीति का विकल्प ढूंढ़ रहे थे इसीलिए वे अपने आंदोलन को दलीय राजनीति से अलग रखना चाहते थे किन्तु 1 नवंबर 1974 को इंदिरा गांधी ने जे.पी. को चुनाव के अखाड़े में शक्ति-परीक्षण की चुनौती दे दी, जिसे न जाने क्यों, उन्होंने, 18 नवंबर को पटना की विराट जनसभा में स्वीकार कर लिया। दिल्ली में चार प्रमुख विपक्षी दलों के नेताओं ने जे.पी. आंदोलन को अपना समर्थन घोषित कर दिया। सभी गैरकम्युनिस्ट विपक्षी दल जे.पी. की लोकप्रियता और उनके द्वारा प्रवर्तित जनांदोलन के ज्वार पर सवार होकर सत्ता में पहुंचने के सपने देखने लगे। यहीं से 'संपूर्ण-क्रांति आंदोलन' का भटकाव आरंभ हुआ। अभी तक जे.पी. किसी भी राजनीतिक नेता या दल को अपने मंच पर स्वीकार नहीं कर रहे थे, पर अब उन्होंने सभी दलों को अपने संघर्ष से जोड़ने का प्रयास शुरू कर दिया। 26 नवंबर को जे.पी. ने दिल्ली में गैरकम्युनिस्ट विपक्षी दलों के 50 प्रमुख नेताओं की बैठक बुलाई। घटनाचक्र तेजी से घूम रहा था। इंदिरा गांधी अधिनायकवाद की ओर बढ़ रही थीं, विपक्ष लामबंद हो रहा था। गुजरात की सरकार को बर्खास्त करके नए चुनाव कराने के लिए मोरारजी देसाई दिल्ली में आमरण अनशन पर बैठ गए। सरकार बर्खास्त हो गई। 12 जून को विपक्षी दलों का जनता मोर्चा गुजरात विधानसभा के चुनाव जीत गया। उसी दिन प्रयाग उच्च न्यायालय ने राजनारायण की चुनाव याचिका पर लोक सभा के लिए इंदिरा गांधी का चुनाव अवैध घोषित कर दिया। विपक्ष ने इंदिरा गांधी के इस्तीफे की मांग उठाई। उन्होंने मना कर दिया। सीधे टकराव की स्थिति पैदा हो गई। अब तक नानाजी जे.पी. और संघ परिवार व अन्य दलों के बीच विश्वास का पुल बन चुके थे। इन्दिरा गांधी की बर्खास्तगी की मांग को लेकर 13 जून को नानाजी अन्य नेताओं के साथ राष्ट्रपति भवन के बाहर धरने पर बैठ गए। नानाजी के अनुरोध पर 20 जून, 1975 को दिल्ली में चार दलों (भारतीय लोक

नानाजी के अनुरोध पर 20 जून, 1975 को दिल्ली में चार दलों (भारतीय लोक दल, संगठन कांग्रेस, सोशलिस्ट पार्टी एवं जनसंघ) की कार्यसमितियों की संयुक्त बैठक आयोजित हुई। वह बैठक चार दिन चली, उसमें लोक संघर्ष समिति बनाने का सर्वसम्मत निर्णय हुआ। जे.पी. के आग्रह पर मोरारजी अध्यक्ष और नानाजी महामंत्री चुने गए।

दल, संगठन कांग्रेस, सोशलिस्ट पार्टी एवं जनसंघ) की कार्यसमितियों की संयुक्त बैठक आयोजित हुई। वह बैठक चार दिन चली, उसमें लोक संघर्ष समिति बनाने का सर्वसम्मत निर्णय हुआ। जयप्रकाश जी के आग्रह पर मोरारजी उसके अध्यक्ष और नानाजी महामंत्री चुने गए। 25 सदस्यों की कार्यसमिति बनाई गई।

25 जून को दिल्ली के रामलीला मैदान में एक विराट जनसभा हुई जिसे जे.पी., बीजू पटनायक और नानाजी ने संबोधित किया। इस सभा में इंदिरा गांधी को प्रधानमंत्री पद से हटाने के लिए 29 जून से देशव्यापी आंदोलन आरंभ करने का कार्यक्रम घोषित किया गया। सभा के बाद नानाजी राजमाता सिंधिया को विदा करने नई दिल्ली रेलवे स्टेशन गए। वे प्लेटफार्म पर टहल रहे थे कि गुप्तचर विभाग के किसी अधिकारी ने चुपके से उनके कान में कहा कि आज रात को आपातकाल की घोषणा के साथ आप सब नेता गिरफ्तार होंगे, अतः आप यहां से खिसक जाइए। नानाजी स्टेशन से ही भूमिगत हो गए। वह चेतावनी सही निकली, देर रात जे.पी. आदि सभी नेताओं की बड़े पैमाने पर गिरफ्तारी शुरू हो गई। अब लोक संघर्ष समिति के सचिव के नाते भूमिगत नानाजी पर अधिनायकवाद के विरूद्ध संघर्ष के संचालन का गुरुतर दायित्व आ पड़ा। इसे निभाने के लिए उन्हें अपनी वेशभूषा और शक्ल बदलनी पड़ी। धोती-कुर्ते की जगह शर्ट-पैंट पहनी, सफेद बालों को काला किया, गंजेपन को ढकने के लिए विग लगाई। ऐसा हुलिया बनाया कि निकटतम मित्र और संबंधी भी पहली भेंट में उन्हें नहीं पहचान पाते थे। भूमिगत स्थिति में दो महीने बाहर रहकर उन्होंने देशव्यापी संघर्ष का तंत्र खड़ा किया। सूचनाओं के आदान-प्रदान और लोक शिक्षण के लिए अंडरग्राउंड बुलेटिन निकालने की

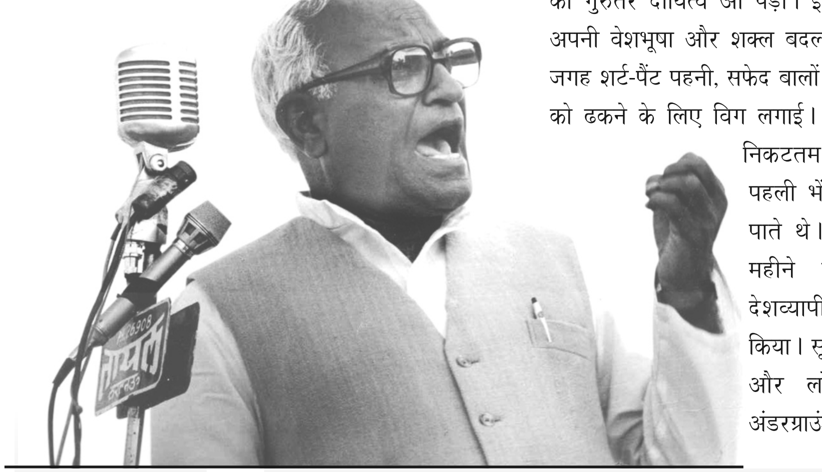

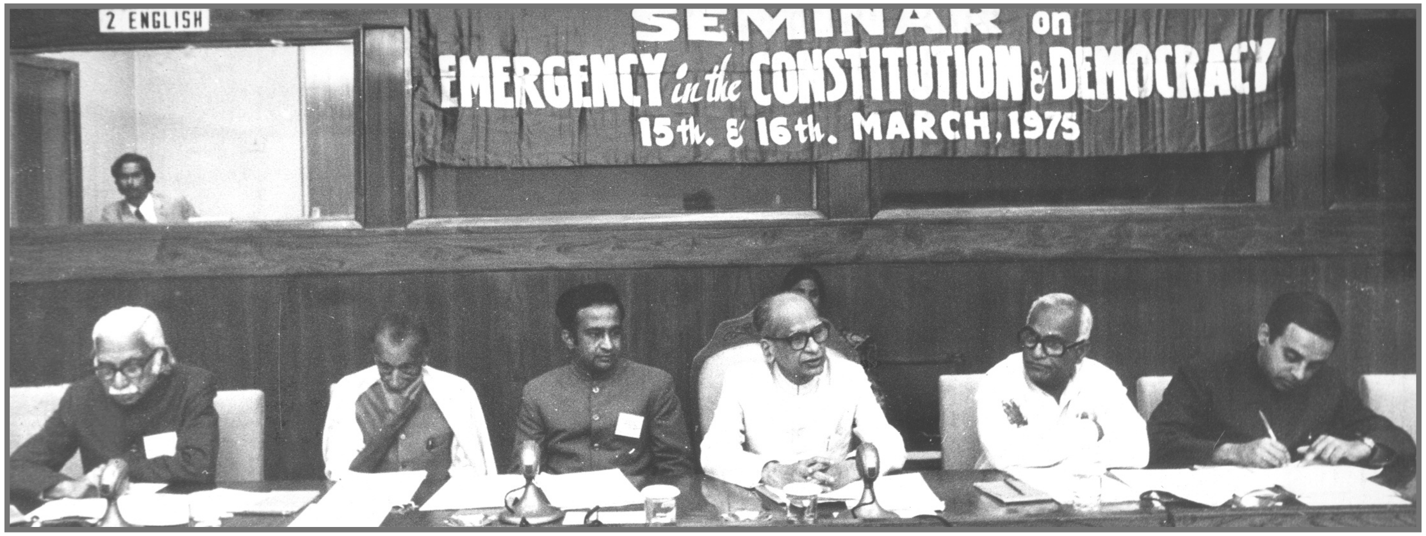

उन्होंने तत्कालीन सत्तारूढ़ दल की आपातकाल लगाने की मानसिकता को पहले ही भांप लिया था

व्यवस्था की। उनको इधर-उधर ले जाने में डॉ. रागिनी जैन ने अपनी सात दिन की कन्या को अपनी माँ के पास छोड़कर प्रातः से रात्रि तक नानाजी के ड्राइवर की भूमिका निभाई। डॉ. सुब्रह्मयम् स्वामी की पत्नी रुखसाना स्वामी को उन्होंने विदेशों में प्रचार के लिए भेजा। इस सब अभियान में संघ-परिवार का पूरा संगठन उनके साथ खड़ा था। देशभर में हजारों की संख्या में संघ के स्वयंसेवक सत्याग्रह करके जेल गए। लंदन के साप्ताहिक 'इकानामिस्ट' ने आपातकाल विरोधी संघर्ष में संघ की मुख्य भूमिका को रेखांकित किया।

लगभग दो महीने बाद गुप्तचर विभाग पंजाब के कुछ भूमिगत नेताओं का पीछा करते हुए दिल्ली के सफदरजंग एन्क्लेव में नानाजी तक पहुंचने में सफल हो गया। कुछ देर तो वह विश्वास ही नहीं कर पाया कि जो नेता उनकी पकड़ में आया है वह नाना देशमुख है। नानाजी के गिरफ्तार होने पर पहले से तय व्यवस्था के अनुसार संगठन कांग्रेस के रवीन्द्र वर्मा ने लोक संघर्ष समिति का मंत्री पद संभाला। संघ का भूमिगत नेतृत्व तो संघर्ष की रीढ़ बना हुआ था।

नानाजी तिहाड़ जेल पहुंच गए। वहां चरण सिंह, प्रकाश सिंह बादल आदि अनेक नेता बंद थे, उनमें घोर निराशा छाई हुई थी। नानाजी ने सभी दलों के एक दल में विलीनीकरण का प्रयास आरंभ किया। तब पुनः उनका चरण सिंह की प्रधानमंत्री बनने की आकांक्षा से सामना हुआ। 17 माह लंबे कारावास में नानाजी को अध्ययन और मनन का अलभ्य अवसर प्राप्त हुआ। वे इस निष्कर्ष पर पहुंचने लगे कि राजशक्ति से नहीं, लोकशक्ति से देश का पुनर्निर्माण होगा। वर्तमान विकृत और पतित राजनीतिक संस्कृति से देश ऊपर नहीं उठ सकेगा। ग्राम आधारित स्वावलंबी समाजरचना के लिए गांव में जाकर प्रत्यक्ष काम करना होगा। समाज के दुर्बलतम व्यक्ति को ऊपर उठाना होगा। नानाजी

का मन सत्तालोलुप, सिद्धांतहीन, व्यक्तिवादी राजनीति से उचटने लगा था और वे सत्ता राजनीति से वैराग्य लेकर रचनात्मक कार्य में अपने को समर्पित करने के लिए आतुर होने लगे थे कि इंदिरा गांधी ने अनायास ही 17 जनवरी 1977 को लोक सभा चुनाव कराने की घोषणा करके सबको चौंका दिया। चुनाव की घोषणा होने के तीन दिन के भीतर 20 जनवरी को जनसंघ, कांग्रेस संगठन, भारतीय लोक दल व सोशलिस्ट पार्टी ने जनता पार्टी का गठन करके उसमें अपना विलय कर लिया और एक ही चुनाव चिन्ह पर चुनाव लड़ने का फैसला किया। प्रारंभ में मोरारजी देसाई को अध्यक्ष एवं लालकृष्ण आडवाणी को उसका मंत्री बनाया गया। किन्तु 1 मई 1977 के अधिवेशन में चंद्रशेखर को नवगठित जनता पार्टी का अध्यक्ष और चार महामंत्रियों में एक नानाजी को चुना गया। जेलों से राजनीतिक

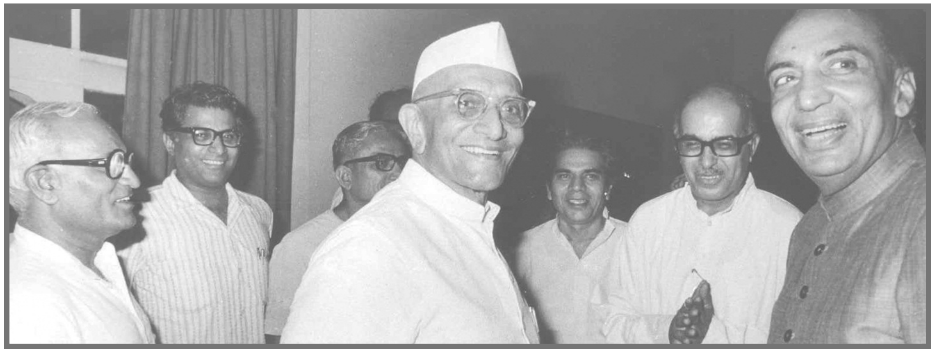

तत्कालीन प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई, तब जनसंघ के नेता लालकृष्ण आडवाणी व सामाजवादी नेता मधु लिमये के साथ नानाजी

कैदियों की रिहाई का सिलसिला शुरू हो गया। जे.पी. नानाजी को जल्दी से जल्दी बाहर लाना चाहते थे। नानाजी ने चुनाव न लड़ने का मन बना लिया था, पर जे.पी. ने संदेश भेजा कि अधूरे काम को आगे बढ़ाने के लिए जेल से बाहर आना जरूरी है और जेल से बाहर आने के लिए आपको लोक सभा चुनाव का नामांकन पत्र भरना चाहिए। जे.पी. के आदेश का पालन करने के लिए नानाजी ने पूर्वी उत्तर प्रदेश में गोंडा जिले के बलरामपुर क्षेत्र से अपने नामांकन पत्र पर हस्ताक्षर कर दिए और वे जेल से बाहर आ गए। नानाजी बलरामपुर की रानी राजलक्ष्मी देवी को भारी अंतर से हराकर लोक सभा में पहुंच गए। जनता पार्टी 302 सीटें जीत कर पूर्ण बहुमत में आ गई। इनमें सर्वाधिक 86 सीटें पूर्व जनसंघ घटक को मिली। 2 फरवरी 1977 को रक्षा मंत्री जगजीवन राम इंदिरा जी के मंत्रीमंडल से त्यागपत्र देकर बाहर आ गए। उनके साथ उत्तर प्रदेश और उड़ीसा के पूर्व मुख्यमंत्री हेमवतीनंदन बहुगुणा और नंदिनी सत्पथी जैसे अनेक प्रभावशाली कांग्रेस छोड़कर बाहर आ गए। उन्होंने 'कांग्रेस फार डेमोक्रेसी' नाम से नया दल बनाया। आपातकाल की निंदा की और जनता पार्टी को समर्थन घोषित कर दिया। चुनाव में पूर्ण बहुमत मिलते ही जनता पार्टी के भीतर प्रधानमंत्री पद के लिए संघर्ष प्रारंभ हो गया। मोरारजी देसाई, चरणसिंह और जगजीवन राम मैदान में थे। नानाजी सहित जनसंघ ग्रुप हरिजन नेता जगजीवन राम को प्रधानमंत्री पद देने के पक्ष में थे पर चरण सिंह

के कड़े विरोध के कारण वह संभव नहीं हुआ। यदि उस समय नानाजी की बात मानी गई होती तो भारतीय राजनीति में एक गुणात्मक परिवर्तन आ सकता था। पार्टी एकता उनकी प्राथमिकता थी। इसीलिए वरिष्ठता के आधार पर मोरारजी देसाई को प्रधानमंत्री पद सौंपा गया। मोरारजी भाई ने नानाजी को मंत्रीमंडल में उद्योग मंत्री जैसा महत्वपूर्ण दायित्व देने का विचार किया। मंत्रीमंडल की संभावित सूची में उनका नाम भी प्रचार माध्यमों में प्रसारित हो गया, पर प्रो. राजेन्द्र सिंह (रज्जू भैया) के कहने पर संगठन-कार्य में अपना पूरा ध्यान केन्द्रित करने के लिए नानाजी ने मोरारजी भाई को फोन करके मंत्रीपद अस्वीकार कर दिया। नानाजी के अनेक उद्योगपति मित्र एवं शुभचिंतक अकबर होटल में बैठे उनके नाम की घोषणा की प्रतीक्षा कर रहे थे। घोषित सूची में उनका नाम न पाकर वे उद्विग्न हो उठे। जब उन्हें पता लगा कि नानाजी ने स्वयं ही मंत्रीपद ठुकरा दिया तो वे आश्चर्य-चकित रह गए और नानाजी के प्रति उनका श्रद्धाभाव दुगना हो गया।

अब नानाजी एक साथ तीन मोर्चों पर सक्रिय थे। एक ओर उन्होंने दीनदयाल शोध संस्थान को पी. परमेश्वरन् के निर्देशन में एक प्रभावी बौद्धिक केन्द्र बनाने की प्रक्रिया आरंभ की। दूसरे, उन्हें जनता पार्टी के भीतर प्रारंभ हुए सत्ता-संघर्ष का शमन कर जनता पार्टी सरकार को जे.पी. के सपनों की पूर्ति का माध्यम बनाना था। तीसरे, उन्हें अपने लिए गैर राजनीतिक रचनात्मक कार्य की भूमिका खोजनी थी। राजनीति के गिरते चरित्र के प्रति वितृष्णा उनके मन में पहले ही पैदा हो चुकी थी। आपातकालीन दमन की भट्टी में तप कर निकले जनता पार्टी की नेतृत्व में सत्ता के लिए छीना-छपटी और षड़यंत्रों को देखकर वे राजनीति के प्रति पूरी तरह निराश हो गए। उनका मन जल्दी से जल्दी राजनीति से बाहर निकलने के लिए छटपटाने लगा। उन्होंने देखा कि प्रधानमंत्री बनने के लिए गृहमंत्री चरण सिंह अपनी ही सरकार के विरुद्ध षडयंत्र कर रहे हैं। 1973 तक चरण सिंह से घृणा करने वाले राजनारायण अब स्वयं को उनका हनुमान बता रहे थे। केवल 32 सीटें पाने वाली सोशलिस्ट पार्टी के नेता मधु लिमये की एक मात्र चिन्ता यह थी कि कहीं जनसंघ और संघ अपने विशाल संगठन के बल पर जनता पार्टी और केन्द्र सरकार पर कब्जा न कर लें। इसलिए पहले दिन से ही उन्होंने संघ और जनसंघ के विरुद्ध षडयंत्री राजनीति आरंभ कर दी। कभी वे संघ को विसर्जित करने की बात करते तो कभी संघ को जनता पार्टी में विलय की मांग उठाते। अंत में उन्होंने जनसंघ के विरूद्ध दोहरी सदस्यता का मुद्दा खड़ा कर दिया। नानाजी को गहरा धक्का लगा, जब चरण सिंह को प्रधानमंत्री बनाने के लिए राजनारायण ने संजय गांधी से

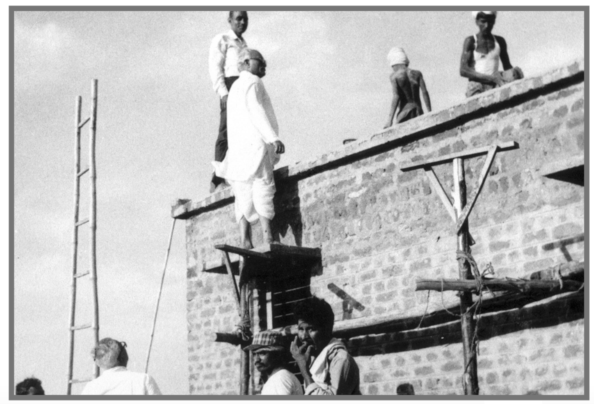

परफेक्शनिस्ट नानाजी किसी भी काम में स्वयं बारीकी से रूचि लेते थे

चित्रकूट में समाज शिल्पी दंपति परिवारों के साथ नानाजी

गुप्त मुलाकातें शुरू कर दी। जिन चरण सिंह ने गृहमंत्री होते हुए भी इंदिरा गांधी को गिरफ्तार न करा पाने के लिए पूरी मोरारजी मंत्रीमंडल को 'नपुंसकों की टोली' घोषित कर दिया था, उन्हीं चरण सिंह ने प्रधानमंत्री बनने के लिए इंदिरा जी का सहारा ले लिया। जनता पार्टी की एकता एवं सरकार को बचाने की नानाजी ने जीतोड़ कोशिश की, पर सफल नहीं हुए। सत्ता के भूखे राजनीतिज्ञों ने जयप्रकाश के कंधों पर चढ़कर सत्ता पाई थी, उन्हीं जे.पी. की भी पूर्ण उपेक्षा आ आरंभ कर दी। जे.पी. पूरी तरह टूट गए थे। 1978 में ही उन्हें दिखने लगा कि जनता पार्टी और इंदिरा गांधी की सरकारों के चरित्र में कोई बुनियादी अंतर नहीं है। 1979 में जब जे.पी. रोगशय्या पर मृत्यु से जूझ रहे थे, तब चरण सिंह ने 26 जुलाई 1979 को इंदिरा गांधी के समर्थन से सरकार बना ली। 15 अगस्त को लालकिले से भाषण में उन्होंने कहा कि वे नए चुनाव के पक्ष में नहीं हैं। पर ठीक 5 दिन बाद उन्होंने राष्ट्रपति को लोकसभा भंग कर करके ताजे चुनाव कराने की प्रार्थना भेज दी, उसी दिन 11.15 बजे चंद्रशेखर और जगजीवन राम ने राष्ट्रपति से मिलकर बहुमत का दावा किया और अपने समर्थकों की सूची पेश करने की इच्छा प्रकट की तो राष्ट्रपति ने कहा कि मुझे कोई जल्दी नहीं है। आप अपनी सूची कल भी पेश कर सकते हैं। पर उसके ठीक आधे घंटे बाद उन्होंने लोक सभा को भंग कर दिया। नानाजी बुरी तरह आहत थे कि प्रधानमंत्री और राष्ट्रपति जैसे उच्च पदों पर आसीन व्यक्ति इतना सफेद झूठ बोल कर राष्ट्र को धोखा दे सकते हैं। 14 अगस्त 1979 को उन्होंने चरण सिंह को एक बहुत लम्बा पत्र लिखा। इस पत्र में नानाजी ने तिथि अनुसार उनकी सत्तालिप्सा, अवसरवाद, परस्परविरोधी और असत्य कथनी के तथ्यात्मक वर्णन प्रस्तुत किया। यह पत्र भारत की राजनीतिक संस्कृति के पतन पर प्रकाश डालने वाला एक ऐतिहासिक दस्तावेज है। उसी पत्र में नानाजी ने लिखा कि "मैं राजनीति में अपने लिए नहीं, राष्ट्रहित के लिए हूँ।"

केवल 24 दिन बाद ही इंदिरा गांधी ने चरण सिंह के पांवों के नीचे से प्रधानमंत्री की कुर्सी खिसका ली और जनता पार्टी सरकार का प्रयोग धराशायी हो गया। अपनी आँखों के सामने दलविहीन लोकतंत्र के अपने स्वप्न का दल और वोट की राजनीति द्वारा अपहरण और हत्या होते देखकर भग्नहृदय जे.पी. 8 अक्टूबर 1979 को महाप्रयाण कर गए। नानाजी का दम भी राजनीति में घुटने लगा था, वे

उससे बाहर निकलने के लिए व्याकुल थे। किन्तु चंद्रशेखर और मित्रों के आग्रह और जनता पार्टी व उसकी सरकार के पतन को रोकने के लिए वे प्रयासरत रहे। अक्टूबर 1979 में उन्होंने अंग्रेजी और हिन्दी में 'आर.एस.एस. : विक्टिम ऑफ स्लैण्डर' शीर्षक पुस्तक प्रकाशित की। यह पुस्तक राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और भारतीय जनसंघ की रचनात्मक भूमिका, संपूर्ण क्रांति आंदोलन और जनता पार्टी की अन्तर्कलह पर एक प्रामाणिक समकालीन दस्तावेज है। जनता पार्टी के विघटन और जे.पी. के निधन से व्यथित नानाजी ने दल और वोट की सत्ता-राजनीति से पूरी तरह मुंह मोड़ लिया।

नानाजी का यह विश्वास उत्तरोत्तर दृढ़ होता जा रहा था कि वर्तमान राजनीतिक प्रणाली के भीतर लोकशक्ति का जागरण और सर्वांगीण विकास असंभव है। वे जनसहभाग के द्वारा विकास का रचनात्मक प्रयोग करने को व्याकुल हो उठे। उसके लिए राजनीति से छुटकारा पाना आवश्यक था। इस दिशा में पहले कदम के रूप में उन्होंने 20 अप्रैल 1978 को एक वक्तव्य में 60 वर्ष से अधिक आयु के अनुभवी राजनीतिज्ञों को सत्ता से अलग होकर रचनात्मक कार्य का उदाहरण प्रस्तुत करने का आग्रह किया। सत्तारूढ़ दल के महामंत्री की ओर से आने वाला यह वक्तव्य बहुत अधिक चर्चित रहा। किसी ने उनकी सलाह को नहीं सुना पर नानाजी अपना पथ निश्चित कर चुके थे। 8 अक्टूबर 1978 को उन्होंने पटना में लोकनायक जयप्रकाश की उपस्थिति में उन्होंने एक लम्बा ऐतिहासिक वक्तव्य देकर सत्ता-राजनीति से अपने सन्यास की घोषणा कर दी। उन्होंने स्पष्ट कर दिया कि अब वे कोई चुनाव

संगठनात्मक और राजनीतिक कार्य का 38 वर्ष का लम्बा अनुभव उनके पास था। वे अपनी लोकप्रियता और प्रभाव के शिखर पर थे। देश के सभी शीर्ष राजनेताओं, पत्रकारों, समाजसेवकों एवं उद्योगपतियों से उनका अनौपचारिक निकट संबंध बन गया था। अदभुत कल्पनाशक्ति, संगठन-कुशलता व योजकता और साधन-संग्रहक की पूंजी लेकर वे रचनात्मक क्षेत्र में कूद पड़े।

नहीं लड़ेंगे और पूरा समय अराजनीतिक रचनात्मक कार्य को समर्पित करेंगे। तब नानाजी अपनी आयु के 62 वर्ष पूरे कर रहे थे। संगठनात्मक और राजनीतिक कार्य का 38 वर्ष का लम्बा अनुभव उनके पास था। वे अपनी लोकप्रियता और प्रभाव के शिखर पर थे। देश के सभी शीर्ष राजनेताओं, पत्रकारों, समाजसेवकों एवं उद्योगपतियों से उनका अनौपचारिक निकट संबंध बन गया था। अद्भुत कल्पनाशक्ति, संगठन-कुशलता व योजकता और साधन-संग्रहक की पूंजी लेकर वे रचनात्मक क्षेत्र में कूद पड़े।

इस सार्वजनिक घोषणा के पहले ही वे सर्वांगीण विकास के रचनात्मक प्रयोग की दिशा में कदम उठा चुके थे। गोंडा जिले के जिस चुनाव क्षेत्र का वे लोक सभा में प्रतिनिधित्व कर रहे थे, उसे ही

उन्होंने सर्वांगीण विकास की अपनी पहली प्रयोगशाला बनाने का निश्चय किया। गोंडा जिले से उनका संबंध गोरखपुर के विभाग प्रचारक और बाद में जनसंघ के महामंत्री के नाते बहुत पहले से चला आ रहा था। वहां के चप्पे-चप्पे को उन्होंने छाना था। वहां छायी गरीबी, अशिक्षा और पिछड़ेपन से वे भली-भांति परिचित थे। अतः स्वाभाविक ही उन्होंने इस पिछड़े जिले को अपने रचनात्मक कर्म की प्रयोगशाला बनाया। 25 सितम्बर 1977 को दीनदयाल जी की जयन्ती के अवसर पर उन्होंने अपने निर्णय की घोषणा की। बलरामपुर की महारानी राजलक्ष्मी, जो लोक सभा चुनाव में उनकी मुख्य प्रतिद्वन्दी थी, से भेंट होने पर जब उन्होंने अपनी योजना बताई तो उन्होंने जमीन का एक टुकड़ा नानाजी को भेंट किया। इसी टुकड़े को केन्द्र बनाकर नानाजी ने 54 एकड़ क्षेत्रफल का एक विशाल परिसर बनाया, जिसे जयप्रकाश और उनकी धर्मपत्नी प्रभावती की संयुक्त स्मृति में 'जयप्रभा ग्राम' नाम दिया। नानाजी ने जिले को गरीबी से बाहर निकालने के लिए 'हर खेत में पानी, हर हाथ को काम' का नारा दिया। सर्वांगीण विकास के चार सूत्र निर्धारित किए 1. शिक्षा, 2. स्वावलंबन, 3. स्वास्थ्य एवं 4. समरसता।

उन्होंने देखा कि खेती के विकास के लिए हैण्डपम्प के द्वारा भूजल को खेतों तक पहुंचाने की व्यवस्था करनी होगी। उन्होंने एक साल के भीतर 20000 हैण्डपम्प के गड्ढे (बोरिंग) खोद कर विस्मयकारी रिकार्ड स्थापित कर दिया। महंगे स्टील पम्प की जगह बाँस के पम्प का आविष्कार किया। बिजली चालित मोटर की जगह बैल चालित रहट का प्रयोग किया। परम्परागत दस्तकारों के

यह नानाजी की सर्वमान्यता का ही परिचायक है कि राष्ट्रपति ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक बालासाहेब देवरस की बगल में बैठने में कोई परहेज नहीं किया। शिक्षा, स्वास्थ्य आदि की दृष्टि से अनेक प्रकल्पों का विस्तृत विवरण न देकर, इतना कहना पर्याप्त होगा कि गोंडा प्रकल्प की सफलता की गूंज देश और विदेश में सुनाई दी।

लिए कच्चे माल व विक्रय केन्द्रों की व्यवस्था की। युवाओं को रोजगार देने के लिए गोंडा में पॉलिटैक्नीक केन्द्र की स्थापना की। पशुपालन में मत्स्य-पालन, कुक्कुट-पालन, गोपालन के प्रयोग किए। सामाजिक समरसता का दृश्य प्रस्तुत करने की दृष्टि से 25 नवंबर 1978 का दिन स्वाधीन भारत के इतिहास का एक विस्मरणीय दिन रहेगा। उस दिन पहली बार भारत के राष्ट्रपति डॉ. नीलम संजीव रेड्डी ने जयप्रभा ग्राम में गरीब किसानों के साथ एक पंक्ति में जमीन पर बैठकर पत्तल और मिट्टी के प्याले में सादा भोजन किया और ग्रामोदय प्रकल्प का औपचारिक (विधिवत्) उद्घाटन किया। यह नानाजी की सर्वमान्यता का ही परिचायक है कि राष्ट्रपति ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक बालासाहेब देवरस की बगल में बैठने में कोई परहेज नहीं किया। शिक्षा, स्वास्थ्य आदि की दृष्टि से अनेक प्रकल्पों का विस्तृत विवरण न देकर, इतना कहना पर्याप्त होगा कि गोंडा प्रकल्प की सफलता की गूंज देश और विदेश में सुनाई दी। हिन्दुस्तान टाइम्स के संपादक बी.जी.वर्गीस ने 17 से 19 अक्टूबर 1981 में गोंडा जिले का सघन दौरा करके प्रत्यक्ष काम को देखा और लेखों में सराहा। मुम्बई के प्रसिद्ध साप्ताहिक 'ब्लिटज' ने 15 अगस्त 1981 के विशेषांक में लिखा 'गोंडा में अक्षरशः चमत्कार हुआ है।' लंदन के प्रतिष्ठित साप्ताहिक 'इकानामिस्ट' ने 22 मई 1982 के अंक में बाँस के पाईप और डीजल की जगह बैलों की जोड़ी के द्वारा हैण्डपम्प को चलाने के प्रयोग का रोचक वर्णन प्रस्तुत किया।

तत्कालीन प्रधानमंत्री अटल बिहारी बाजपेयी के साथ चित्रकूट में

दल और सत्ता की राजनीति से पूरा सन्यास लेकर नानाजी अपने रचनात्मक प्रयोगों में लीन थे कि दैवयोग से 23 जून 1980 को संजय गांधी की एक विमान दुर्घटना में अनायास मृत्यु हो गई। किसी सांसद ने लोक सभा में उस विमान दुर्घटना के पीछे नानाजी का षडयंत्र बता दिया। फिर क्या था, नानाजी अखबारों में छा गए। साक्षात्कार के लिए उनके यहां पत्रकारों की कतार लग गई। उस समय नानाजी ने अपना माथा ठोंक कर कहा, "कैसी विचित्र स्थिति है। जिस रचनात्मक काम में मैं अपना खून-पसीना बहा रहा हूँ, उसमें इन पत्रकारों की कोई रुचि नहीं और जिस घटना से मेरा दूर का संबंध नहीं, उसके लिए मेरा प्रचार कर रहे हैं।"

1983 अक्टूबर में नानाजी ने दिल्ली में एक अभिनव कार्यशाला आयोजित की जिसने देश भर में स्वप्रेरणा से विविध प्रकार के रचनात्मक कार्यों में लगे संघ-पृष्ठभूमि के कार्यकर्ताओं का पहली बार एकत्रीकरण किया गया। सरसंघचालक बालासाहेब देवरस से इस कार्यशाला का उद्घाटन कराया। जनप्रेरणा और जनसहभाग पर आधारित सर्वांगीण विकास के अनेक विध-प्रकल्पों की नानाजी की व्यवहारिक बुद्धि ने कल्पना की, उसकी विस्तृत योजना तैयार की, उसे साकार रूप देने के लिए मानवी एवं भौतिक साधन जुटाए और उसके क्रियान्वयन के लिए समर्पित कार्यकर्ताओं की टीम खड़ी की। गोंडा जिले में विकास का नमूना खड़ा करने के साथ-साथ उनका मस्तिष्क देश के विभिन्न भागों में वहां की स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप नए-नए प्रकल्पों की रचना करने लगा। नागपुर शहर में निर्धन और पिछड़ी बस्तियों के बच्चों को विकास-प्रक्रिया का अंग बनाने के लिए उन्होंने 'बालजगत' के रूप में एक अद्भुत प्रकल्प खड़ा किया। वनवासियों की दृष्टि से बिहार के सिंहभूम व सुन्दरगढ़ जिलों में वनवासी प्रकल्पों का सूत्रपात किया। अहमदाबाद (गुजरात) में सेवानिवृत्त प्रौढ़ नागरिकों को समाज में पिछड़े एवं दुर्बल वर्गों की सेवा में प्रवृत्त करने के लिए 'वानप्रस्थ अभियान' आरंभ किया। पानी के अभाव से जूझते मराठवाड़ा क्षेत्र के बीड जिले में जल संचय, कृषि विकास एवं गुरुकुल आदि के प्रयोग आरंभ किए।

1990 में नानाजी को पवित्र तीर्थ चित्रकूट ने अपनी गोद में खींच लिया। वहां उन्होंने 'ग्रामोदय विश्वविद्यालय' की अभिनव योजना तैयार की, जिसमें शिशु अवस्था से स्नातकोत्तर कक्षाओं तक की शिक्षा से निकले छात्र शहरों की ओर भागने के बजाए ग्राम्य-जीवन अपनाने के लिए प्रवृत्त हों। मध्य प्रदेश सरकार ने नानाजी को उसका कुलाधिपति बनाया। किन्तु दलीय राजनीति उसे सहन नहीं कर पायी। चित्रकूट में नानाजी ने आरोग्यधाम, उद्यमिता विद्यापीठ, गोशाला, वनवासी छात्रावास, गुरुकुल, सुरेंद्रपाल ग्रामोदय विद्यालय जैसी प्रकल्पों की बड़ी श्रृंखला खड़ी कर दी। आर्थिक शैक्षणिक एवं स्वास्थ्य-रक्षा के इन प्रयोगों के बीच नानाजी की कल्पना का अनूठा चमत्कार है, 'राम दर्शन' नामक स्थायी प्रदर्शनी, जिसमें जाकर प्रत्येक दर्शनार्थी राम के अवतारी रूप के पीछे उनके लोक कल्याणकारी मर्यादा संस्थापक जीवन की प्रेरणा लेकर आता है। मंदाकिनी नदी के तट पर रामनाथ गोयनका घाट का निर्माण किया। आर्थिक स्वावलंबन, शिक्षा स्वास्थ्य की चिंता के साथ-साथ नानाजी ने व्यक्ति के आध्यात्मिक विकास को भी उतना ही महत्व दिया। उन्होंने भक्ति को लोक कल्याण का माध्यम बनाया। चित्रकूट की रामदर्शन प्रदर्शनी और जयप्रभा ग्राम गोंडा में 'भक्तिधाम' की रचना इसके उदाहरण हैं। चित्रकूट जिले में उन्होंने गांवों को मुकदमेबाजी से मुक्त कराने की एक अभिनव योजना आरंभ की। इस योजना के अंतर्गत पीढ़ी-दर-पीढ़ी मुकदमेबाजी में फंसे परिवारों को समझा बुझाकर आपस में इकट्ठे बैठकर अपने विवाद का हल न्यायालय से बाहर निकालने और मुकद्दमा वापस लेने की प्रेरणा देने का प्रयास किया। अब तक लगभग 80 गांवों को विवादमुक्त क्षेणी में लाने में सफलता मिली है। इलाहाबाद उच्च न्यायालय के वकीलों के एक दल ने स्वयं आकर इस अविश्वसनीय चमत्कार का दर्शन और अध्ययन किया। उन्होंने उसकी सफलता की साक्षी को लिखित रूप मे प्रसारित किया। नानाजी ने गोंडा, बीड और चित्रकूट में भारत सरकार के चार कृषि विज्ञान केन्द्रों के संचालन का बीड़ा उठाया। इनमें से दो कृषि विज्ञान केन्द्रों को भारत सरकार ने सर्वोत्तम घोषित किया है। इन सभी प्रकल्पों को चलाने के लिए 'समाज शिल्पी दम्पत्ति' की अभिनव योजना प्रस्तुत की। इस योजना के अन्तर्गत समाजसेवा की भावना से अनुप्राणित पति-पत्नी अपने भरण-पोषण का न्यूनतम जीवन स्तर अपनाकर अपना पूरा समय सर्वांगीण विकास कार्यों में लगाते हैं। अकेले चित्रकूट क्षेत्र में 35 समाज शिल्पी दम्पति कार्यरत हैं।

चित्रकूट के मझगवां में डीआरआई के कार्यक्रम में वनवासियों के साथ भोजन करते तत्कालीन राष्ट्रपति डा. एपीजे अब्दुल कलाम

चित्रकूट जिले से नानाजी के रचनात्मक कार्य की सुगन्ध देश-विदेश में फैली, नानाजी के पुराने सहयोगी और मित्र अटल बिहारी वाजपेयी प्रधानमंत्री के नाते वहां गये और सार्वजनिक भाषणों में समय न गंवाकर उन विकास कार्यो को अपनी आँखों से देखा। भारत सरकार ने नानाजी को 23 मार्च 1999 में पद्म विभूषण सम्मान से अलंकृत किया और फिर समाजसेवी के नाते राष्ट्रपति ने 22 नवम्बर 1999 को उन्हें राज्यसभा के लिए नामांकित किया। नानाजी ने अपनी सांसद निधि की एक-एक पाई को चित्रकूट के विकास में लगाया। सांसदों का वेतन-भत्ता बढाने का विरोध किया। उसमें असफल रहने पर अपने हिस्से की बढी हुई राशि को प्रधानमंत्री सहायता कोश में भेंट कर दिया। 6 अक्टूबर 2005 को राष्ट्रपति डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने चित्रकूट यात्रा की, जमीन पर ग्रामवासियों के साथ बैठकर पत्तल-दोनों में भोजन करके समरसता का उदाहरण प्रस्तुत किया। चित्रकूट से लौट कर वे वहाँ के रचनात्मक प्रकल्पों के प्रचारक ही बन गये हैं। अनेक विश्वविद्यालयों ने नानाजी को डी. लिट. की मानद उपाधियाँ देकर राष्ट्र के सर्वांगीण विकास में उनके रचनात्मक योगदान को मान्यता दी है पर नानाजी उन सबसे ऊपर उठ चुके थे। 94 वर्ष लम्बे जीवन काल में राष्ट्र-जीवन के अनेक क्षेत्रों में अपने कर्तृत्व का डंका बजाया। दक्षिण मे बीड से उत्तर में गोंडा जिले तक विकास के अनेक रचनात्मक प्रकल्पों की श्रृंखला खड़ी की, किन्तु उनमें कहीं पर भी नानाजी का नाम नहीं है, नानाजी का चित्र नहीं है, हर जगह उन्हीं के चित्र और नाम हैं जिनसे उन्होंने जीवन में कभी भी प्रेरणा पायी। डॉ. हेडगेवार, गोलवलकर 'गुरुजी', दीनदयाल उपाध्याय, जयप्रकाश जी और प्रभावती जी आदि आदि।

विश्राम करना तो नानाजी ने सीखा ही नहीं। अपने ध्येयवाक्य 'हम अपने लिये नहीं, अपनों के लिये हैं और अपने वे हैं जो पिछड़े, उपेक्षित और पीड़ित हैं' को चरितार्थ करने के लिए वे अपने जर्जर शरीर को अन्त तक रगड़ते रहे। कई वर्षों तक वे भीष्मपितामह की तरह शय्यासीन रहे। अपने पैरों पर न पूरी तरह खड़े हो सकते थे, न आँखों से स्पष्ट देख सकते थे, न कानों से पूरी तरह सुन सकते थे, किन्तु उनका दिल और दिमाग हर क्षण समाज की चिन्ता करते रहे। वे मुँह से बोलकर 'युवाओं के नाम पाती' लिखाते रहे और अन्त में 1997 में स्वप्रेरणा से उन्होंने अपनी देह को शोध-कार्य के लिये समर्पित करने की वसीयत लिख दी।

आइए, इस प्रसिद्धि पराङ्गमुख राष्ट्रऋषि दधीचि के प्रति श्रद्धापूर्ण नमन करें और उनकी अधूरी साधना को आगे बढ़ाने का संकल्प लें। ■

एक अंतहीन संभावना की अंतिम यात्रा

नानाजी नाना प्रकार की संभावनाओं से ओत-प्रोत थे। हर रोज, हर पल नई सोच, नया प्रयोग। अंतहीन। उनके जीवनकाल के विचार व कर्तृत्व तो हमारे मन में चिरस्थायी हो गए हैं, उनकी अंतिम यात्रा की स्मृतियां भी मानस पटल पर स्थाई रूप से अंकित रहेंगी...

अंतिम यात्रा

महापुरूष वास्तव में किसी काल, स्थान व परिस्थिति के खूंटे से बंधे नहीं होते। वे तो काल, स्थान व परिस्थितियों को अपनी महानता से महान बना देते हैं। इसका साक्षात गवाह है चित्रकूट। चित्रकूट, यानी भारत का वह पुण्य स्थान जो ऐसे महापुरूषों को ही नहीं, भगवान तक को बरबस अपनी ओर खींच सका है, उनकी सत्यता व वचन को परख सका है और उनकी दिव्यता को सिद्ध कर सका है। इस पुण्य धरती को भगवान राम और गोस्वामी तुलसीदास जी हमेशा के लिए पवित्र कर चुके हैं। इसे दुर्लभ व दिव्य योग ही कहा जाएगा कि नानाजी ने भगवान से मिलने की प्रतीक्षा के लिए यही पावन स्थान चुना जिसे जनमानस साधारण अर्थ में संयोग कहता है।

ऐसे दुर्लभ योग जीने वाले महापुरूष कहीं नहीं जाते, क्योंकि उनके माध्यम से ईश्वर अपना प्रताप दिखाता है, कभी कर्म से, कभी त्याग-तपस्या का प्रकाश बिखेरता है। नानाजी इन सब गुणों से ओत-प्रोत थे। इसलिए सच यह है कि नानाजी कहीं नहीं गए है। वह कहीं नहीं जा सकते। कर्म नानाजी का साक्षात ईश्वर था, वह साक्षात् दीनदयाल थे। जब ईश्वर ने महसूस किया कि अब नानाजी की कर्म-तपस्या पूरी हो गई है, तब इस चक्र पर उन्होंने नानाजी को विश्राम देने का निश्चय किया। सिर्फ उनका शरीर भर रवाना हुआ है। यह भाव कोई और नहीं, बल्कि नानाजी खुद रवाना होने से पहले सबमें जगा गए, जो उनकी अंतिम यात्रा पुण्य यात्रा की श्रृंखला में बराबर देखा जा सकता है।

अंतिम यात्रा

नानाजी के शरीर छोड़ने के साथ उनके समूचे चित्रकूट परिवार में सन्नाटा पसर गया। चित्रकूट के घाटों की जीवंतता कुछ पल के लिए थम गई। लेकिन कुछ पल के ठहराव की इस प्रक्रिया में कोई सन्नाटा या कोई भय नहीं, बल्कि एक आत्मिक शांति थी जिसकी अनुभूति जड़ व चेतन सबमें व्याप्त थी जिसे नानाजी के सान्निध्य में रह कर प्राप्त किया गया था। आंखे नम थीं। ऐसा होता भी क्यों नही, आखिर हमेशा नर में नारायण का दर्शन करने वाले नानाजी ने अपने कर्मों से चित्रकूट की पावन धरती को ही नम नहीं किया था, बल्कि जीवनपर्यंत हर उस शख्स को अपने चुंबकीय व्यक्तित्व से प्रभावित किया था जिसे उनसे मिलने का योग मिला था।

उनकी विश्राम बेला में उन सभी व्यक्तियों की आंखों में नमी होना स्वाभाविक था। बरसों तक उनके सहयोगी रहे पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने अपने शोक संदेश में इसका जिक्र करते हुए कहा कि नानाजी चुनौतियों से निपटने के विशेषज्ञ थे। उनके संपर्क में जो आया, वह उनके संपर्क में अनवरत रहा। यह उनका चुंबकीय व्यक्तित्व था। राजनीति से स्वेच्छा से अलग होकर वह रोल मॉडल बन गए। कहा जा सकता है कि नानाजी ने जबसे सामाजिक जीवन में

कदम रखा तबसे वह रोल माडल ही बनते गए, जिसके सामने पद-प्रतिष्ठा सब कुछ बौनी थी। इसलिए उनके सम्मान का घनत्व लगातार बढ़ता गया।

उनके विश्राम का साक्षात गवाह बना चित्रकूट और उसका समूचा परिवेश। दिल्ली जाने की उनकी तनिक भी इच्छा नहीं थी और इलाज के लिए यह इच्छा तो कतई नहीं थी। वह इस सनातन तथ्य को भलीभांति जानते थे जिसके मुताबिक आयु किसी इलाज के वश में नहीं होती। लिहाजा शनिवार 27 फरवरी 2010 को शाम पौने पांच बजे चित्रकूट के जानकी कुंड में उन्होंने काल के साथ संघर्ष बंद कर दिया। शरीर छोड़ने के पाँच मिनट पूर्व तक लंबे समय से संस्थान से जुड़े कार्यकर्ता परिवार से मिलकर उनका हाल-चाल लेते रहे। उन्हें अपने अंतिम समय तक स्नेह, प्रेम, आत्मीयता के साथ अनवरत कार्य करने की प्रेरणा देते रहे। इसके बाद दिल्ली जाने के लिए वह न केवल तैयार थे, बल्कि अपनी इस यात्रा की व्यवस्था की घोषणा भी एक दशक पहले ही कर चुके थे। उनको इसका भान काफी पहले हो गया था।

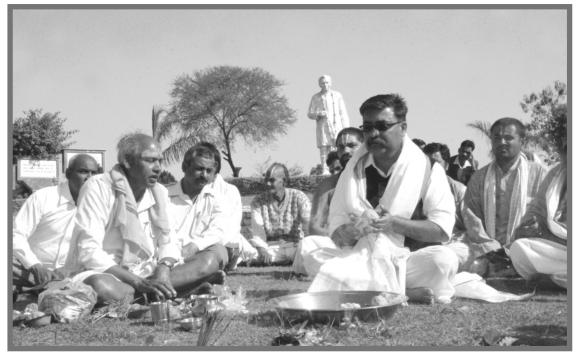

चित्रकूट में नानाजी का अंतिम संस्कार करते हुए दीनदयाल शोध संस्थान के प्रधान सचिव डा. भरत पाठक

यह यात्रा देश की राजधानी दिल्ली के अखिल भारतीय आर्युविज्ञान संस्थान तक होनी थी जहां उनको अपनी देह देनी थी।

नानाजी ने दशकों पहले राजनीति से सन्यास ले सामाजिक कार्य में उतर कर रायसीना की पहाड़ियों से चलने वाली दिल्ली की राजनीति को एक संदेश दिया था। अब दिल्ली में देहदान कर उन्होंने उस केंद्रीय राजनीति को दोबारा सीख देकर यह याद दिलाया कि सामाजिक कार्य की चाहत रखने वालों के लिए चारों तरफ खुला मैदान है जिसमें सुकून है, शांति है और उसके साथ जीवंतता भी। नर जहां नारायण है। साठ साल की उम्र के बाद राजनीति से परे जाकर सामाजिक कार्य संभव है, बस एक अदद जिजिविषा चाहिए और तब मार्ग अपने-आप बनता जाएगा। उनके निधन

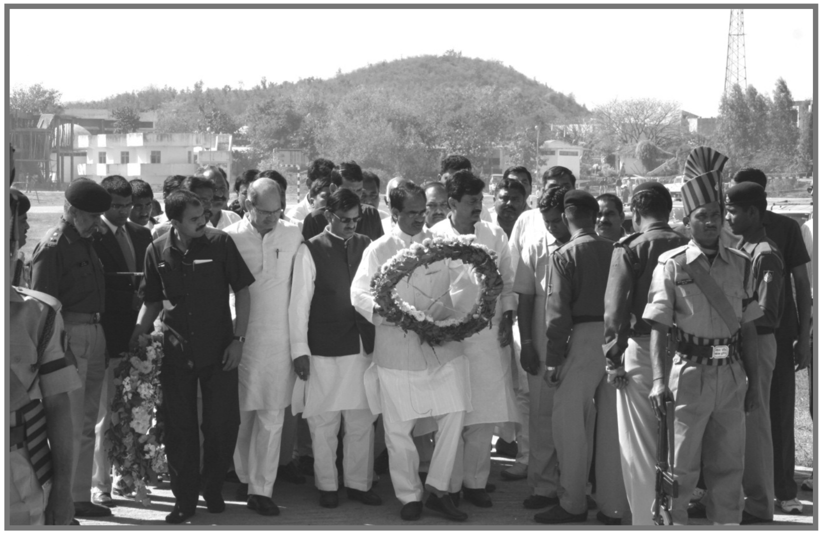

चित्रकूट में नानाजी के पार्थिव शरीर को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान

पर लालकृष्ण आडवाणी ने कहा कि उनके जीवन से राजनेताओं को प्रेरणा लेना चाहिए कि राजनीति में होने के बावजूद नानाजी ने इसके आकर्षण व फिसलन से दूरी बनाए रखी।

कहा जा सकता है कि नानाजी अंगद की तरह पांव जमाने के हिमायती थे, जहां गए जम गए। इसका नमूना उन्होंने राजनीति में पेश किया और राजनीति छोड़ने के बाद सामाजिक जीवन में भी। अखिल भारतीय आर्युविज्ञान संस्थान के लिए भी नानाजी किसी पहेली से कम नहीं थे। कहा जा सकता है कि नानाजी की देह ने संस्थान का माहौल बदल दिया था। उनका देहदान अस्पताल के डाक्टरों और स्टाफ के लिए भी एक यादगार क्षण था। बाकी के लिए एक मिसाल बना। कुछ मरीजों से कहते हुए सुना 'चित्रकूट वाले नानाजी।' पार्थिव देह पहुंचने के पहले यह खबर सबको थी, लिहाजा इस क्षण के गवाह भी सभी बनना चाहते थे। झंडेवालान से जिस रास्ते से उनकी देह को संस्थान ले जाया गया, पूरा मार्ग भी उनके त्याग और तपस्या का गवाह बना और उस समय मार्ग से गुजरने वाले यात्री भी।

बहरहाल, नानाजी की यह अविस्मरणीय यात्रा पूरे देश के लिए शोक का एक बहुत बड़ा कारण थी और हजारों शोकाकुल लोगों के लिए चित्रकूट के प्रयाण का आधार बन गई। जानकी कुंड अस्पताल की चौखट से बाहर निधन का समाचार पसरते ही पूरा चित्रकूट शोक में डूब गया। नानाजी की पार्थिव देह चित्रकूट में उद्यमिता विद्यापीठ प्रांगण में बने उन पंडित दीनदयाल उपाध्याय की प्रतिमा के सम्मुख जनता के दर्शनार्थ रखी गई जो स्वयं नानाजी के आदर्श थे। शायद व्यवहार पटल पर उनको नानाजी से बेहतर किसी ने समझा नहीं था। हजारों लोगों ने इस स्थल पर नानाजी के अंतिम दर्शन किए और उनको अपनी भावभीनी श्रद्धांजलि दी। यह अद्भुत सिलसिला

रात भर चलता रहा, अनवरत। ऐसा होता भी क्यों नहीं, नानाजी सबके प्राणों में जो बसे थे। चित्रकूट के समूचे वातावरण में उनकी उपस्थिति का आभास होता है। चित्रकूट के कण-कण में नानाजी समाये हुए थे। इसके पूर्ण स्थिति में पहुंचने पर भगवान ने उनको शांति प्रदान की ताकि वह विश्राम कर सकें।

उनके अंतिम विश्राम की खबर सुनकर स्तब्ध मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान भोर में ही चित्रकूट पहुंच गए। उनके साथ उनके सहयोगी मंत्री, सांसद, विधायक और कार्यकर्ता थे जिन्होंने नानाजी को आखिरी नमन किया था। इनके अलावा चित्रकूट के प्रमुख मठ-मंदिरों के संत, महंत जिनमें निर्मोही अखाड़ा के महंत ओंकारदास जी महाराज, तुलसी पीठ के जगद्गुरू रामभद्राचार्य जी, आचार्य आश्रम के राजगुरू संकर्षण प्रपन्नाचार्य महाराज, रामायणी कुटी के महंत रामहृदय दास तथा उत्तर प्रदेश व मध्य प्रदेश के सीमावर्ती जिलों के कांग्रेस, भाजपा, सपा आदि लगभग सभी राजनीतिक दलों के कई वरिष्ठ नेतागण, प्रतिष्ठित व्यवसायी और वरिष्ठ प्रशासनिक अधिकारीगण भी नानाजी को अपना अंतिम प्रणाम निवेदित करने के लिए उपस्थित हुए थे। श्रद्धांजलि अर्पित करने के बाद नानाजी की पार्थिव देह स्वयं मुख्यमंत्री सड़क मार्ग से चित्रकूट से सतना ले गए। सतना की हवाई पट्टी पर नानाजी की पार्थिव देह को लोगों के अंतिम दर्शनार्थ रखा गया था। नानाजी की इस आखिरी उपस्थिति में हर कोई एक क्षण के लिए उनका दर्शन करने को बेताब था। मुख्यमंत्री श्री चौहान ने नानाजी के निष्काम कर्मयोग के पाठ को याद किया। उन्होंने कहा कि कहते हैं कि राजनीति काजल की कोठरी है, इसमें जो जाता है बिना दाग लिए वापस नहीं लौटता, लेकिन नानाजी काजल की कोठरी में भी रहे तो वहां से भी बेदाग निकले। जैसे कीचड़ में कमल का पत्ता रहता

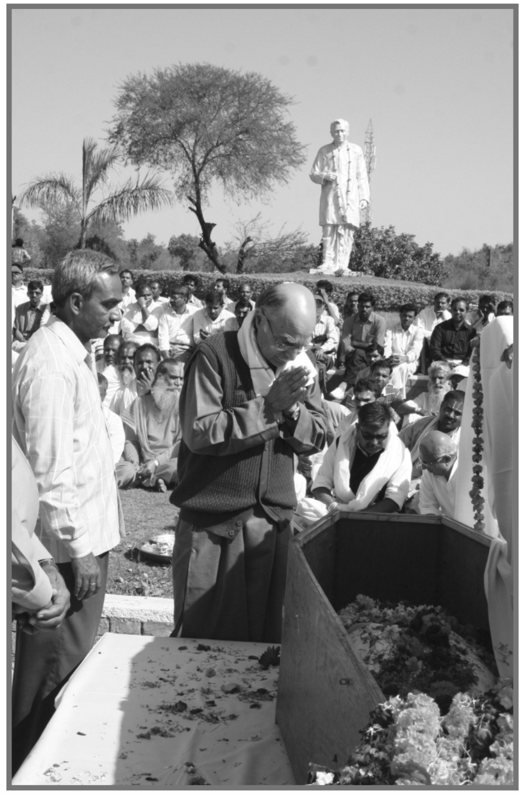

चित्रकूटः नानाजी को श्रद्धा सुमन अर्पित करते हुए दीनदयाल शोध संस्थान के अध्यक्ष वीरेंद्रजीत सिंह

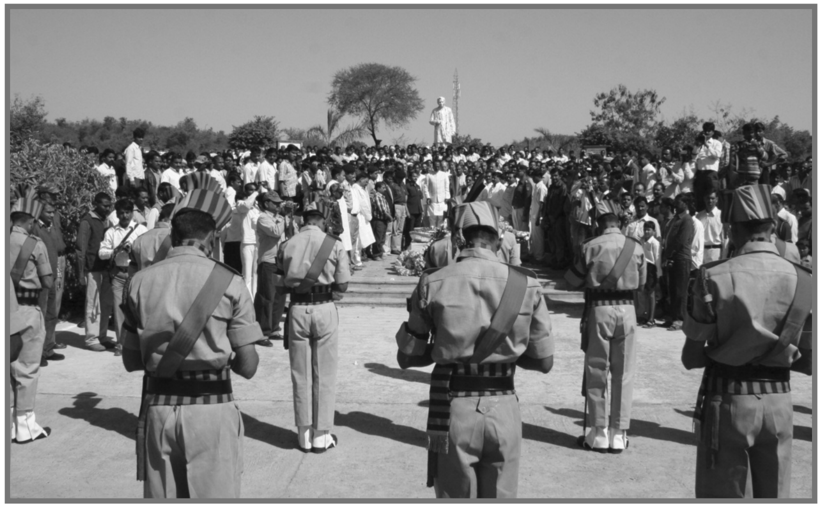

नानाजी को मध्य प्रदेश शासन द्वारा राजकीय सलामी

है, वैसे नानाजी राजनीति में रहे और 60 साल की आयु हो जाने के बाद उन्होंने राजनीति को अलविदा कह दिया और अपना पूरा जीवन दरिद्रनारायण व समाज की सेवा में समर्पित करने का संकल्प लिया। उन्होंने कहा कि एक संकल्प हम जरूर ले सकते हैं। सरकार के मुखिया के रूप में मुझे भी लेना चाहिए, सामाजिक-राजनीतिक कार्यकर्ताओं, आम जन को भी लेना चाहिए कि उन्होंने जो काम शुरू किया उसे जारी रखने आगे बढाने का संकल्प हमें लेना चाहिए।

चित्रकूट से लेकर सतना तक नानाजी को अंतिम विदाई के लिए ऐसा जनसैलाब उमड़ा जो लोगों के मानस पटल पर सदा के लिए स्थायी रूप से अंकित रहेगा और आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणा का कार्य करता रहेगा। नानाजी के पदचापों की आहट हमेशा की तरह चित्रकूट में हमेशा ही सुनी जाती रहेगी।

दरअसल, नानाजी के पदचिन्ह चित्रकूट में स्थायी रूप में थे। उनकी स्मृतियां हर स्थान पर कौंध रही थीं। कोई विश्वास करने के लिए तैयार नहीं था कि नानाजी यह देह और यह स्थान छोड़ चुके हैं। लिहाजा चित्रकूट में उनका अंतिम संस्कार आवश्यक था। संत समाज के सुझाव पर डॉ. भरत पाठक ने नारायण बलि के रूप में यह संस्कार किया। भगवान राम ने अपने पिता दशरथ की मृत्यु पर चित्रकूट में इस विधि-विधान से ऐसा संस्कार किया था। ऐसा उल्लेख धर्म सिंधु, स्कंध पुराण और गरुण पुराण में मिलता है।

कहते हैं कि संतों का सीकरी से कोई सरोकार नहीं होता। शायद इसलिए नानाजी के आखिरी विश्राम के अगले दिन रविवार था। उन्होंने ऐसा समय चुना कि शोक-कर्म किसी अन्य कर्म को प्रभावित न कर सके। लेकिन यह दिन प्रत्यक्ष भगवान सूर्य के नाम से जाना जाता है जो प्राण व ऊर्जा का संचारक होता है। नानाजी ने कितने ही लोगों में उस ऊर्जा का संचार किया था, जो

अंतिम यात्रा

उनके करीब थे और जो उनके करीब नहीं थे पर दूर से ही नानाजी और उनके अप्रतिम कार्यों से प्रभावित होकर दोनों को नमन करते थे। गुजरात के मुख्यमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने उनको कल्पना लोक का धनी बताया जो सबसे पहले सोच स्थापित करते थे और फिर उसे अंजाम तक पहुंचाते थे। उनके अनवरत परिश्रम ने गांवों को उत्थान में जबर्दस्त योगदान दिया कि लोकसभा की अध्यक्ष मीरा कुमार भी उनके निधन से भाव-विह्वल हो गईं। लोकसभा ने नानाजी के निधन पर शोक जताया।

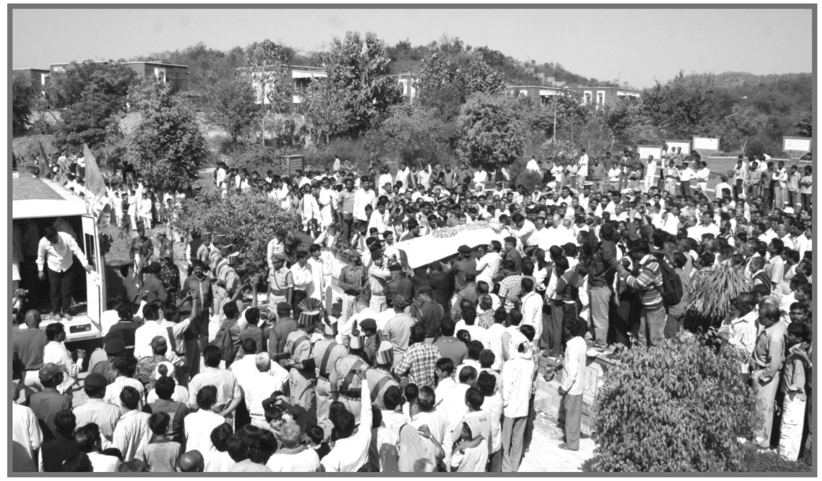

चित्रकूट में नानाजी की शव यात्रा में उमड़ा जन सैलाब

लोकसभा अध्यक्ष मीरा कुमार ने नानाजी को जाना माना किसान व सामाजिक कार्यकर्ता बताते हुए कहा कि वह गांवों के संपूर्ण कायाकल्प के वाहक थे। नानाजी की प्राथमिक शिक्षा से लेकर ग्रामोदय विश्वविद्यालय व ग्रामीण उत्थान के कार्यों की मर्मस्पर्शी पहल को उन्होंने याद कर अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। राज्यसभा ने भी अपने सदस्य नानाजी को श्रद्धांजलि दी। ऐसा होता भी क्यों न, आखिर अपनी सकारात्मक चर्चाओं में नानाजी ने इस सदन को याद दिलाया था कि सामाजिक व्यक्ति का ध्येय यह होना चाहिए कि गांवों के समग्र उत्थान से ही देश का समन्वित विकास संभव है। नानाजी ने स्वयं यह गढ़कर सबको रास्ता दिखाया था।

नानाजी की देह को मुख्यमंत्री के विमान से सतना से दिल्ली लाया गया। सतना के हैलीपैड पर उनके अंतिम दर्शनों के लिए लोगों की भीड़ टूट पड़ी जिसको आखिरी प्रणाम की चाह थी। मुख्यमंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान, सांसद श्री अनिल माधव दवे और दीनदयाल शोध संस्थान के अध्यक्ष श्री वीरेंद्रजीत सिंह उनके पार्थिव शरीर के साथ दिल्ली आए। दिल्ली हवाई अड्डे पर भी चारों तरफ नानाजी के अंतिम दर्शन करने के लिए लोगों का हुजूम था। इनमें लोकसभा उपाध्यक्ष श्री करिया मुंडा, लोकसभा में विपक्ष की नेता श्रीमती सुषमा स्वराज, राज्यसभा में विपक्ष नेता श्री

सतना हवाई पट्टी पर हवाई जहाज में पार्थिव शरीर चढ़ाते हुए

अरुण जेतली, भाजपा अध्यक्ष श्री नितिन गडकरी, भाजपा के पूर्व अध्यक्ष राजनाथ सिंह सरीखे तमाम नेता और कार्यकर्ता शामिल थे।

हवाई अड्डे से नानाजी की देह को दीनदयाल शोध संस्थान के मुख्यालय लाया गया जिसने नानाजी का तेज और उनकी तपस्या देखी थी। यह भवन भी नानाजी की वाणी और शरीर से वंचित हो जाने के कारण उदास दिखाई पड़ रहा था। लेकिन साथ ही यह उसे यह गर्व भी था कि नानाजी के आभामंडल के कारण कितनी ही हस्तियां बार-बार उसकी चौखट से पार होकर नानाजी के सामने नतमस्तक हुईं थी। इस भवन से अंदर जब नानाजी की देह ने प्रवेश किया था, सामने थे पंडित दीनदयाल उपाध्याय जिनको नानाजी ने अपना सारा जीवन ही सौंप दिया था।

दीनदयाल जी का एकात्म मानवदर्शन पर अमल करना ही नानाजी का ध्येय बना। इसलिए जब इस संस्थान में नानाजी का दीनदयाल जी से सामना हुआ तो विशिष्ट जनों के सामने दोनों महापुरूषों का जीवन एक साथ घूम गया। ऐसा लगता था कि दीनदयाल जी भी नानाजी की

अंतिम यात्रा

डीआरआई, दिल्ली पहुंचा नानाजी का पार्थिव शरीर

प्रतीक्षा कर रहे हों। लेकिन शांत नानाजी ने उनसे कुछ नहीं बोला और उनके समक्ष अपनी मौन उपस्थिति दर्ज कराकर झंडेवालान चले गए जो उनकी अंतिम बार प्रतीक्षा कर रहा था। लेकिन विदाई लेने से पहले नानाजी ने संस्थान को आखिरी प्रणाम किया। इस भवन के मुख्य द्वार पर मनी प्लांट के काफी पौधें हैं। उनकी पत्तियों को नानाजी ने कितनी बार अपनी स्नेहिल हाथ से स्पर्श किया था। उनसे भी विदाई ली और साथ ही उन सब चीजों से भी जो उनके उपयोग में आईं थी।

इस भावुक अवसर पर पूर्व राष्ट्रपति डा. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम आजाद और नानाजी के परिवारजनों तथा डीआरआई परिवार ने उन्हें श्रद्धांजलि दी। तत्पश्चात उनकी देह को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के झंडेवालान स्थित कार्यालय केशव कुंज ले जाया गया। नानाजी के अंतिम दर्शनों के लिए फिर यहां भी जनसैलाब टूट पड़ा। संघ के सरकार्यवाह श्री सुरेश जी जोशी, सह सरकार्यवाह श्री सुरेश सोनी, प्रचारक प्रमुख श्री मदनदास देवी, भाजपा अध्यक्ष श्री नितिन गडकरी, पूर्व उपप्रधानमंत्री श्री लालकृष्ण आडवाणी, भाजपा नेता डा. मुरली मनोहर जोशी, श्रीमती सुषमा स्वराज, श्री अरुण जेतली, विश्व हिंदू परिषद के अध्यक्ष श्री अशोक सिंहल, गुजरात के मुख्यमंत्री श्री नरेंद्र भाई मोदी, छत्तीसगढ़ के मुख्यमंत्री डा. रमन सिंह और उत्तराखंड के मुख्यमंत्री श्री रमेश चंद्र पोखरियाल, बिहार के उपमुख्यमंत्री श्री सुशील मोदी व झारखंड के उपमुख्यमंत्री श्री रघुवरदास सहित नानाजी के हजारों शुभचिंतकों ने अपने मार्गदर्शक के पार्थिव शरीर के दर्शन किए और उन्हें पुष्पांजलि अर्पित की।

नानाजी ने अपने इलाज के लिए दिल्ली आने से इनकार कर दिया था। लेकिन दूसरों के

रा. स्व. संघ कार्यालय, झंडेवाला में अंतिम दर्शनों हेतु रखी गई नानाजी की पार्थिव देह

उपचार के लिए उनकी देह का प्रयोग हो, यह उनकी तीव्र इच्छा थी। श्री आडवाणी, श्री गडकरी, श्रीमती स्वराज, श्री जेतली, श्री नरेंद्र मोदी, श्री शिवराज सिंह चौहान व श्रीमती वसुंधरा राजे समेत तमाम नेता नानाजी की इस अंतिम इच्छा की पूर्ति के लिए उनका पार्थिव शरीर सौंपने के लिए देश के सबसे प्रतिष्ठित अस्पताल अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान पहुंचे जिसका नानाजी ने काफी पहले ही बंदोबस्त कर दिया था। दधीचि देहदान समिति को अपना देहदान करके अपने जीवन के 81वें साल में नानाजी इस समिति के पहले देहदानी बने थे। उस वक्त दूरदर्शी नानाजी को यह भी लगा कि उनके अंतिम श्वांस लेने पर किस तरह उनका शरीर एम्स को सुपुर्द होगा, तब उन्होंने 11, 000 हजार रूपये का बैंक ड्राफ्ट देहदान समिति को सौंपा और कहा कि मेरे पार्थिव शरीर को दिल्ली लाने के लिए यह रकम काम आएगी।

लोग यह प्रेरणादायी खबर भूल चुके थे। इसलिए दिल्ली में 8 मार्च को नानाजी की श्रद्धांजलि सभा में जब देहदान समिति की तरफ से नानाजी की देहदान की इच्छा और उस बाबत रूपये की व्यवस्था का पत्र पढ़ा गया, तब लोग अतीत में खो गए और एक बार फिर सबने नानाजी को नमन किया जो निर्विकार रूप में मंच से सबको निहार रहे थे। शायद वह यह कहना चाह रहे थे कथनी-करनी में समरूपता रखना ही जीवन की असली कसौटी होनी चाहिए। इस अवसर पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरसंघचालक मोहनराव भागवत ने सलाह दी कि नानाजी सदैव सभी के साथ सामान्य व्यवहार रखने वाले व्यक्ति थे, इसलिए उनके आदर्श को अपनाते समय इस बात पर ध्यान देने की जरूरत है। नानाजी शुरू से ही सबसे संपर्क कायम रखने के मामले में काफी धनी थे, इसलिए समग्र परिवर्तन के वाहक बन सके। सांसद अनिल माधव दवे ने कहा कि देश ने

नानाजी की प्रतिभा एक राजनीतिज्ञ के रूप में भी देखी और एक सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में भी उनको लोगों ने प्रणाम किया।

इसको पुख्ता किया केंद्रीय कृषि मंत्री शरद पवार ने। उन्होंने कहा कि देश में परिवर्तन की लहर पैदा करने में नानाजी ने जो भूमिका निभाई थी, उसका असर मेरे मन में आज भी है। भाजपा नेता श्री लालकृष्ण आडवाणी, पार्टी अध्यक्ष श्री नितिन गडकरी, समाजवादी नेता श्री सुरेंद्र मोहन, गांधीवादी चिंतक श्री बिमल प्रसाद व कर्नाटक के मुख्यमंत्री श्री बी.एस. येदियुरप्पा ने नानाजी के साथ बिताए क्षणों को याद किया। विचारक श्री के.एन. गोविंदाचार्य व मध्य प्रदेश की पूर्व मुख्यमंत्री सुश्री उमा भारती ने नानाजी के साथ बिताए क्षणों को याद कर उनके प्रयोग और पहल का सारगर्भित पक्ष सबके समक्ष रखा। नानाजी के प्रसंशक मशहूर भजन गायक अनूप जलोटा ने नानाजी को श्रद्धांजलि देकर अपने भजनों से इस प्रेरणादायी माहौल में आध्यात्मिक शांति बिखेरी।

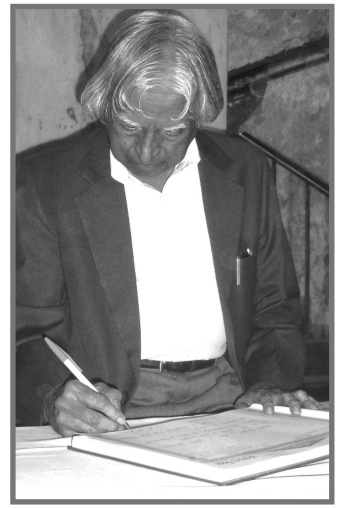

दीनदयाल शोध संस्थान, नई दिल्ली में शोक पुस्तिका में संदेश लिखते हुए पूर्व राष्ट्रपति डा. एपीजे अब्दुल कलाम

इधर दिल्ली नानाजी को श्रद्धांजलि की गवाह थी, तो उधर कर्मस्थली चित्रकूट में अंतिम संस्कार का क्रम जारी था। हिंदू विधि-विधान के साथ नानाजी की दसवीं और तेरहवीं की क्रियाएं यहां संपन्न की गईं। 9 मार्च को शुद्धि (दसवीं) संस्कार में डा. भरत पाठक सहित सैंकड़ों कार्यकर्ताओं व आसपास के ग्रामवासियों ने पिंडदान से लेकर तमाम औपचारिकताएं पूरी कीं। चित्रकूट में उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए विश्व हिंदू परिषद के अंतरराष्ट्रीय अध्यक्ष श्री अशोक सिंहल ने कहा कि नानाजी ने महात्मा गांधी का अनुसरण करते हुए उनकी ग्राम स्वराज की परिकल्पना को मूर्त रूप में उतारा।

यह नानाजी की तपस्या का ही परिणाम था कि लोग चित्रकूट की तरफ खिंचे आ रहे थे। 12 मार्च को नानाजी की तेरहवीं में मानों चित्रकूट में पूरा देश ही वहां उमड़ पड़ा। उसे देखकर हरेक ने महसूस किया कि नानाजी के चुंबकीय व्यक्तित्व का घनत्व समूचे देश में है जिसकी धुरी चित्रकूट बनी क्योंकि नानाजी ने ऐसा बरसों पहले तय कर लिया था। संघ नेताओं में श्री सुरेश सोनी व श्री मदनदास देवी के अलावा भाजपा नेता श्री लालकृष्ण आडवाणी, श्री राजनाथ सिंह, श्री शिवराज सिंह चौहान समेत कई नेता नानाजी की तेरहवीं में हिस्सा लेने के लिए चित्रकूट पहुंचे और नानाजी को श्रद्धांजलि देकर सभी ने ग्रामवासियों के साथ पंगत में बैठकर प्रसाद ग्रहण किया।

चित्रकूट में एक बार फिर शोकसभा की गई जिसे प्रेरणा सभा कहना ज्यादा श्रेयष्कर होगा क्योंकि नानाजी के संपूर्ण व्यक्तित्व में शोक नाम की कोई चीज नहीं थी। वह सुख-दुख से परे थे।

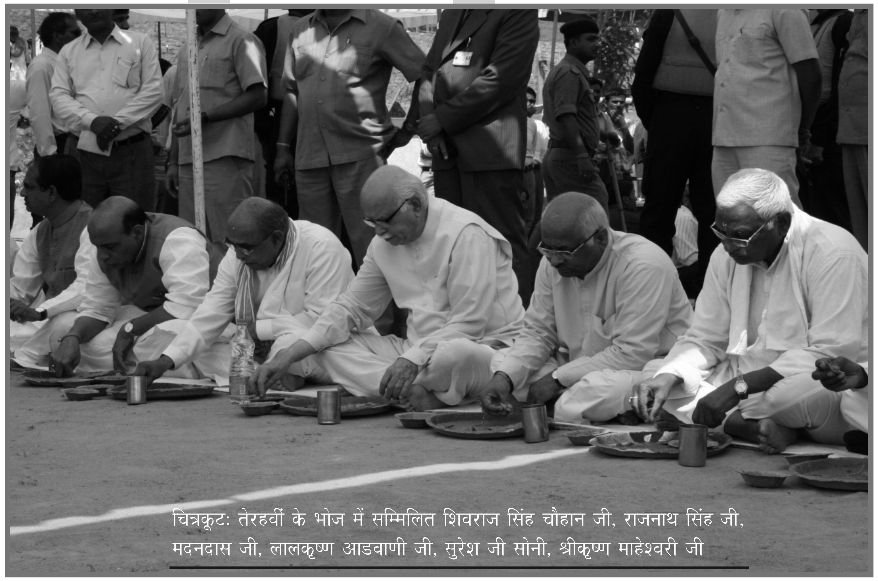

चित्रकूटः तेरहवीं के भोज में सम्मिलित शिवराज सिंह चौहान जी, राजनाथ सिंह जी, मदनदास जी, लालकृष्ण आडवाणी जी, सुरेश जी सोनी, श्रीकृष्ण माहेश्वरी जी

सभी नेताओं ने काफी समय आयोजन स्थल पर गुजारा और अपने अंतर्मन में नानाजी की अनुभूति महसूस करते रहे। इस पवित्र स्थल पर उन्होंने राजनीति पर चर्चा करने से परहेज रखा। अपने मानस पटल को कुरेदते हुए श्री आडवाणी ने बताया कि विभाजन के बाद जब वह इस देश में आए, तब जनसंघ की स्थापना हो चुकी थी। तब मैं पंडित दीनदयाल और नानाजी का ही नाम हर तरफ सुना करता था। वहां का माहौल देखकर कोई भी अंदाजा लगा सकता था कि आज भी नानाजी का नाम हर तरफ है। कर्मयोगी व द्रष्टा पंडित दीनदयाल उपाध्याय के साथ नानाजी ने अपने को ऐसा जोड़ा कि आजीवन उनके पूरक होकर रह गए।

उत्तर प्रदेश के ग्राम विकास मंत्री दद्दू प्रसाद तेरहवीं के अवसर पर नानाजी को श्रद्धांजलि देने चित्रकूट पहुंचे

अंतिम यात्रा

इस अवसर पर किया गया विशाल भंडारा भी एक मिसाल बना जिसने समूचे चित्रकूट को अपनी ओर खींच लिया। सुरेंद्रपाल ग्रामोदय विद्यालय का खेल मैदान दिन भर अतिथियों का स्वागत करता रहा। दोपहर से शाम तक हजारों लोगों ने भंडारे का प्रसाद ग्रहण किया। अगर हजारों लोगों ने प्रसाद ग्रहण किया तो इसकी व्यवस्था भी उन्हीं ग्रामवासियों ने की जिनका भविष्य उज्ज्वल बनाने के लिए नानाजी ने स्वयं को तपाया था। भोजन बनाने के लिए 2500 महिला-पुरुष

चित्रकूटः नानाजी की तेरहवीं में नानाजी के सहयोगी रहे आर.वी. पंडित

चित्रकूटः तेरहवीं में नानाजी के चित्र पर श्रद्धा सुमन अर्पित करतीं नंदिता पाठक

स्वप्रेरणा से गांवों से आए, भोजन वितरण हेतु 12 घंटे चित्रकूट के शैक्षणिक एवं सामाजिक संस्थानों ने जिम्मेदारी लेकर अनवरत कार्य किया। लोग अपने-अपने घरों से वे भोजन सामग्री लेकर आए थे।

प्रसाद ग्रहण कर नानाजी के मानस पुत्रों ने उन्हें सनातन ढंग से अंतिम विदाई दी और एक नए दिव्य रूप में नानाजी का स्वागत किया जो नानाजी को हमेशा चित्रकूट में रखेगा फिर चित्रकूट की परंपरा भी अपनाने की है, छोड़ने की नहीं। ऐसे नानाजी को शत-शत प्रणाम, सबके अंतर्मन से यही प्रकट हो रहा था। ऐसे राष्ट्र ऋषि को बार-बार प्रणाम। ■

श्रद्धांजलि सभा

नानाजी के जाने से सार्वजनिक जीवन के तपस्वी, कर्मयोगी और राजनीति में रहकर भी जल में कमल पत्रवत् पवित्र रहने वाले एक निष्ठावान स्वयंसेवक के प्रेरणादायी जीवन का अंत हुआ है। उनका जीवन समूचे देश की नई पीढ़ी को देशभक्ति, समर्पण व सेवा की प्रेरणा देता रहेगा।

मोहन राव भागवत
सरसंघचालक, रा.स्व.संघ

नानाजी अपने सिद्धांतों के पक्के थे। उन्होंने राजनीति में अपना योगदान देने के बाद समाजसेवा का मार्ग चुना और जीवनपर्यंत इसी काम में जुटे रहे। चित्रकूट में रहकर उन्होंने समाजसेवा की मिसाल पेश की जिसके लिए उन्हें सदैव याद किया जाएगा।

लालकृष्ण आडवाणी
पूर्व उपप्रधानमंत्री

नानाजी कर्मयोगी पुरुष थे। उन्होंने समाज निर्माण के क्षेत्र में इतना बड़ा काम किया है जो पुरुषार्थ के माध्यम से ग्रामीण विकास के लिए मील का पत्थर साबित होगा। सादगी भरा जीवन जीते हुए देश के लिए किया गया उनका कार्य सदैव प्रेरणादायी रहेगा।

करिया मुण्डा
लोकसभा उपाध्यक्ष

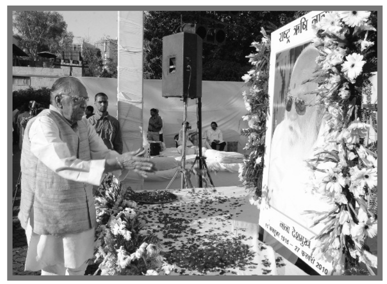

पुष्पांजलि: वरिष्ठ भाजपा नेता केदारनाथ साहनी

पुष्पांजलि: पूर्व सरसंघचालक कुप्.सी.सुदर्शन

पुष्पांजलि: सरकार्यवाह सुरेश जोशी

पुष्पांजलि: सहसरकार्यवाह सुरेश सोनी

पुष्पांजलिः विहिप नेता आचार्य गिरिराज किशोर

पुष्पांजलिः डीआरआई के उपाध्यक्ष प्रभाकर राव मुंडले

नानाजी के निधन से देश ने एक महान सपूत खो दिया है। वह भारत के आधुनिक ऋषियों में से एक थे। उन्होंने सच्चे मूल्यों पर आधारित राजनीति की। उनका साहस अनुकरणीय था। राजनीति से समाज कार्य के प्रति समर्पित होने का उनका उदाहरण हमेशा के लिए अनुकरणीय रहेगा।

नितिन गडकरी
अध्यक्ष, भाजपा

नानाजी पहल और प्रयोग के पक्षधर थे। राजनीति से लेकर ग्राम्य विकास की यात्रा तक उन्होंने नए-नए प्रयोग किए। ग्रामीण भारत को मजबूत करने की दिशा में उन्होंने जो पहल की, उसने पूरे देश का ध्यान खींचा। उनके साथ काम करने का मुझे मौका भी मिला। किसी बात पर विचार करते हुए उसके छोटे-छोटे बिंदुओं पर भी उनकी दृष्टि रहती थी।

के.एन. गोविंदाचार्य, स्वदेशी चिंतक

आपातकाल के समय संघर्ष करके प्रजातंत्र की मुक्ति के लिए उन्होंने जो कार्य किया, उसके कारण देश में परिवर्तन की लहर आई। इसके अलावा देश का नया चेहरा बनाने के लिए ग्रामवासियों के जीवन में परिवर्तन लाने के लिए एक नया रास्ता दिखाने का काम नानाजी ने अपनी अंतिम सांस तक किया। उनको सही मायने में श्रद्धांजलि देना, उनके दिखाए रास्ते पर चलना चाहिए।

शरद पवार, केंद्रीय कृषि मंत्री

नानाजी का संपूर्ण जीवन देश के लिए था। अपनी त्याग तपस्या से उन्होंने कई मानक स्थापित किए जिनसे समाज सदा प्रेरणा लेता रहेगा। राजनीति से परे जाकर सफलतम सामाजिक कार्य किए जा सकते है, ऐसी मिसाल नानाजी ने कायम की। गांव के विकास से ही देश का विकास हो सकता है. यह प्रयोग उन्होंने करके दिखा दिया।

बी. एस. येदियुरप्पा,
मुख्यमंत्री, कर्नाटक

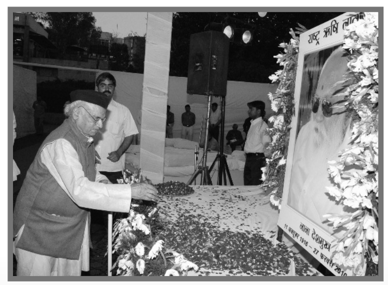
यादवराव देशमुख, पूर्व प्रधान सचिव, डी.आर.आई

पुष्पांजलिः भाजपा के संगठन मंत्री रामलाल

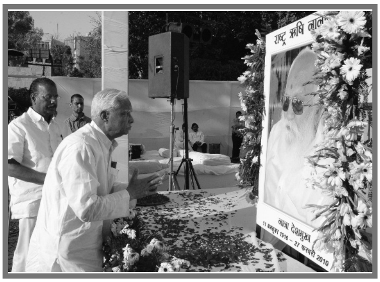

पुष्पांजलिः राज्यसभा सांसद बाल आप्टे

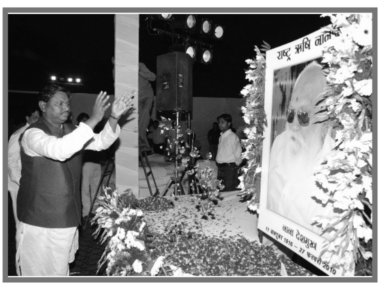

पुष्पांजलिः झारखंड के मुख्यमंत्री अर्जुन मुंडा

पुष्पांजलिः म.प्र. की पूर्व मुख्यमंत्री साध्वी उमा भारती

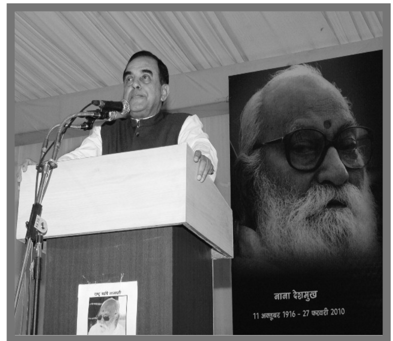

1970 में जनसंघ में जब मेरा प्रवेश हुआ, तब से लगातार नानाजी के साथ मेरा गहरा आत्मीय संबंध रहा। मैंने उनके जीवन से बहुत कुछ सीखा है। आपातकाल के दौरान नानाजी ने संगठन बनाने का जो काम किया, जयप्रकाश नारायण, मोरारजी देसाई जैसे लोगों को साथ लाकर जनता पार्टी बनाने की जो संभावना बनाई, वह अनुकरणीय है।

सुब्रह्मण्यम स्वामी
अध्यक्ष, जनता पार्टी

पुष्पांजलिः डीआरआई की उपाध्यक्ष डा. पूर्णिमा आडवाणी

नानाजी के निधन से सामाजिक क्षेत्र में उत्पन्न शून्य को सभी ओर महसूस किया गया। नानाजी का आभामंडल इतना विस्तृत था कि राजनीतिक, सामाजिक, उद्योग जगत सहित सभी क्षेत्रों से उन्हें श्रद्धांजलियां अर्पित की गईं। बहुत-से लोगों ने तो स्वयं उपस्थित होकर नानाजी को श्रद्धा-सुमन अर्पित किए और बहुत-से जो नहीं आ सके, उन्होंने लिख कर अपने उद्गार व्यक्त किए कुछ चुनींदा संदेश अगले पृष्ठों में ....

राष्ट्र ऋषि नानाजी

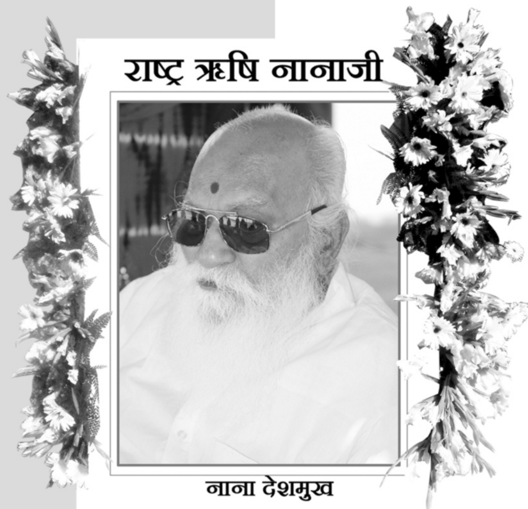

नाना देशमुख

नाना तुझे प्रणाम

Dr. A.P.J. Abdul Kalam

6 March, 2010

Nanaji Deshmukh: A pioneer in societal reform

I have personally known and worked with Shri Nanaji Deshmukhji for over two decades and I admire his vision for an integrated societal development in a challenging rural scenario. I have witnessed how the people of Chitrakoot pour their love towards this great soul.

Nanaji was a mission oriented leader with a unique sense of commitment. He devoted large part of his life to the development of Deendayal Research Institute that he established way back in 1969 for organized rural development in the Chitrakoot region. He established Chitarkoot Gramodya Vishwavidyalaya in Chitrakoot, India's first rural university and Nanaji was its first Chancellor. The innovative ideas of Samaj Shilpi Dampatti, and the conflict free villages, will go into the annals of history of rural development and . social t:mpowerment in India. His model of building on the core competence of the region for wealth generation for the masses is indeed a unique and sustainable economic development model.

Nanaji and his team have already developed 80 villages in 16 clusters consisting of about 50,000 people. The greatest tribute we can pay to Nanaji today would be work for the realization of developing one hundred village clusters having approximately five hundred villages around Chitrakoot covering over 300,000 people.

The message we derive out of the Nanaji's life, is that of nurturing nobility of the leadership and perseverance to accomplish the mission through continuous innovations in technology and management. We will always cherish the memories of Nanaji in the societal transformation he has accomplished. This is a great lesson from a noble soul which should be emulated by every Indian youth.

A.P.J. Abdul Kalam

(A.P. J. Abdul Kalam)
Former President of India

10, Rajaji Marg, New Delhi – 110011, India
Email : apj@abdulkalam.com

//श्री//

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

1 मार्च, 2010

स्वर्गीय नाना जी देशमुख के जाने से भारत के सार्वजनिक जीवन के तपस्वी कर्मयोगी, राजनीति में रहकर भी जल में कमलपत्रवत पवित्र रहने वाले एक निष्ठावान स्वयंसेवक के प्रेरणादायी जीवन का अंत हुआ है। परन्तु यह जीवन समूचे देश की नयी पीढ़ी को सतत् देशभक्ति, समर्पण व सेवा की प्रेरणा देता रहेगा।

उनका जीवन कृतार्थ जीवन था। इसलिये उनके पार्थिव का दृष्टि से ओझल होना, मात्र शोक की बात नहीं है, बल्कि हम सभी के लिये स्वयं कृतसंकल्पित होने की बात है। उनके जीवन का अनुकरण अपने जीवन में करना, यही उनको सच्ची श्रद्धांजलि होगी। मैं उनकी स्मृति में अपनी व्यक्तिगत तथा राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

मोहनराव भागवत
सरसंघचालक, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ

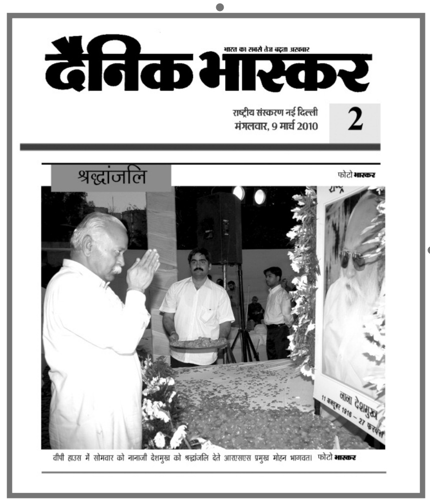

दैनिक भास्कर

राष्ट्रीय संस्करण नई दिल्ली
मंगलवार, 9 मार्च 2010

2

श्रद्धांजलि

फोटो भास्कर

सत्यमेव जयते

Murlidhar C. Bhandare
GOVERNOR. ORISSA

March 08, 2010

I am deeply grieved to learn about the sad demise of Shri Nanaji Deshmukh. Late Shri Deshmukhji had, a very pleasing personality and always believed in action. His multi-dimensional public life holds the true V picture of his character, conviction and commitment to the society. His association with Deendayal Research Institute had been quite significant as it led him towards evolving the models 9f holistic development which were part of his constructive efforts. ~

I had the pleasure of working and interacting with late Nanaji closely and he impressed' me with his enthusiasm and devotion and above all service to humanity. By donating his mortal remains to All India Institute of Medical Sciences for purpose of medical research, he continues to live immortal. His life will always be a source of inspiration particularly young as well as future generations to believe in themselves and serve the society to the fullest. His sad demise was a great loss for me personally and also for those who have ever come across him and associated with his work.

At this hour of grief, I pay my homage to late Shri Nanaji and also convey my heartfelt condolences to the bereaved family members. May his soul rest in peace.

Yours sincerely,

(MURLIDHAR C. BHANDARE)

SHIVRAJ V. PATIL
Governor of Punjab and
Administrator
Union Territory, Chandlgarh

सत्यमेव जयते

RAJ BHAVAN
CHANDIGARH

March 5 2010

I am deeply saddened at the passing away of Nanaji Deshmukh, Sangh Parivar Veteran and the former Rajya Sabha Member.

I express my heartfelt sympathies with the bereaved family members. In his death we have lost a seasoned politician and a very fine human being.

In this bour of bereavement, I offer my heartfelt condolences. May God give the strength and courage to bereaved family members, to bear this irreparable loss.

I offer my deepest prayers to Almighty to grant peace to the departed soul.

(Shivraj V. Patil)

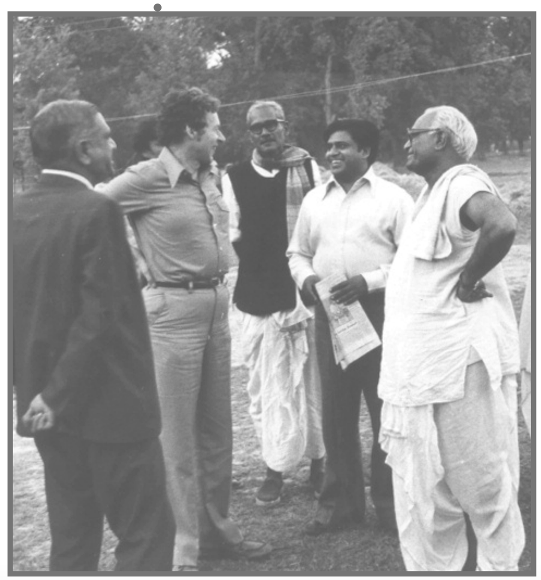

रामेश्वर ठाकुर

राजभवन
भोपाल-462 052

27 फरवरी, 2010

प्रिय श्री भरत पाठक जी,

देश के सुप्रसिद्ध महान, विचारक, समाजसेवी, शिक्षाविद, चिंतक एवं कर्मयोगी श्री नानाजी देशमुख के निधन से मुझे गहन दुःख हुआ है। देश के प्रथम ग्रामीण विश्वविद्यालय की मध्य प्रदेश में स्थापना में उनकी सक्रिय भूमिका के लिए वे सदैव स्मरणीय रहेंगे।

श्री नानाजी देशमुख सच्चे अर्थों में ग्रामीण विकास, नैतिक शिक्षा और भारतीय परंपराओं के संवाहक थे। उन्होंने सदैव निःस्वार्थ रहकर देश, समाज तथा मानवता की सेवा के लिए कार्य किया। श्री नानाजी देशमुख के निधन से देश को अपूरणीय क्षति हुई है।

मैं, श्री नानाजी देशमुख की दिवंगत आत्मा की शांति के लिए परमपिता परमेश्वर से प्रार्थना करता हूँ और शोक संतप्त स्वजनों के लिए गहन संवेदना व्यक्त करता हूँ।

भवदीय,
रामेश्वर ठाकुर
(रामेश्वर ठाकुर)

श्री भरत पाठक
सियारामकुटीर, चित्रकूट,
जिला सतना (म.प्र.)

28 फरवरी, 2010

आज का दिन हम सभी के लिए वेदनादायी रहा। 93 वर्ष पूर्व एक दिव्य आत्मा इस भूमि पर अवतरित हुई। देह धारण कर हमें सान्निध्य में रहने का अवसर प्रदान किया और अपने ईश्वर प्रदत्त दायित्व का निर्वाह करते हुए शांत मन से पुनः अपने मूल स्थान की ओर प्रस्थान कर गयी।

स्वर्गीय नानाजी "आदर्श जीवन" के कई मापदण्ड हमारे सम्मुख प्रस्तुत कर गए। राजनीति में रहकर उसे सत्ता तक पहुंचने की सीढ़ी न समझते हुए वास्तव में समाजसेवा का साधन माना।

सामाजिक पुनर्रचना का सफल प्रयोग हो सकता है, यह विश्वास सामाजिक क्षेत्र में कार्य करने वाले कार्यकर्ताओं को होना चाहिए, इस दृष्टि से मार्ग प्रशस्त बनाकर गए। समाज के प्रति आस्था उनके अंतःकरण की पारदर्शिता दर्शाती है, तो यह समाज आत्मगौरवयुक्त, स्वावलंबी, सुखी-सम्पन्न जीवन जीने वाला बनें, यही उनकी आकांक्षा थी।

सामाजिक कार्यकर्ताओं की मानसिकता, प्रयोगशीलता, कर्मशीलता एवं विजिगीषुवृत्ति कैसी हो, इसका उदाहरण स्वयं के जीवन से प्रस्तुत कर गए।

निरंतर कर्मशील बने रहेंगे यही उनके जीवन का संदेश है। उनकी पावन स्मृति को नमन! ईश्वर उन्हें अपने चरणों में पुनः स्थान प्रदान करें, यही प्रार्थना।

- भैयाजी जोशी, सरकार्यवाह, रा.स्व.संघ

राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ
"समिधा" संघ कार्यालय, ई-2/187, महावीर नगर, भोपाल-462016
दूरभाष (0755) 2410004 फैक्स नं. 2421055, अणुडाक : (email) kssudarshan2009@rediffmail.com
कुप्.सी. सुदर्शन

तिथि : चैत्र कृष्ण प्रतिपदा
कलियुग-5111

दिनांक 01.03.2010
भोपाल

शोक श्रद्धांजलि

चंडिकादास अमृतराव देशमुख याने अपने "नानाजी देशमुख" के दिनांक 27 फरवरी के देहावसान का समाचार सुनकर उन समस्त लोगों का शोकसंतप्त होना अत्यंत स्वाभाविक है जिन्होंने उनके चुंबकीय व्यक्तित्व के आकर्षण का अनुभव किया। माता-पिता दोनों का साया उनके पैदा होने के कुछ दिनों बाद ही हट गया था और अत्यंत दारिद्रय में जीवन-यापन कर रहे उनके मामा-मामी ने किसी प्रकार प्राथमिक विद्यालय की शिक्षा दिलाई। उनकी पढ़ने की ललक ने उन्हें भाजीपाला बेचने जैसे छोटे-मोटे कार्य करते हुए भी मैट्रिक तक की शिक्षा प्राप्त करने की प्रेरणा दी। किन्तु इस प्रक्रिया में उन्होंने जाना कि भूख की ज्वाला क्या होती है और इस अनुभव ने उन्हें परदुःखकरतर बना दिया जो उनके स्वभाव का अनिवार्य अंग बन गया और जब संघ-संस्थापक डाक्टर हेडगेवार के संपर्क में आए तो न केवल संघ के स्वयंसेवक बन गये अपितु उनके निधन पर अपना समग्र जीवन समाज और राष्ट्र की सेवा में लगाने का संकल्प ले लिया। प्रचारक बनकर अपने संगठन-कौशल्य से ने केवल सहस्रावधि युवकों को स्वयंसेवक बनने के लिए प्रेरित किया तथा उस जिले में संघ शाखाओं का जाल बिछाया अपितु उनमें से कुछ को प्रचारक बनने के लिए प्रेरित किया।

सन् 1947 में जब मासिक राष्ट्रधर्म, साप्ताहिक पाञ्चजन्य और दैनिक स्वदेश प्रारंभ होने पर पं. दीनदयाल जी उपाध्याय, नानाजी देशमुख तथा अटल बिहारी वाजपेयी का त्रिवेणी संगम हुआ तो राष्ट्रजीवन को पावन करने हेतु एक ऐसी पावन वैचारिक धारा बही जो आज राष्ट्र के राजैतिक जीवन में शुचिता, पारदर्शिता तथा जन-समस्याओं के प्रति जागरूकता लाने हेतु बद्धपरिकर है। पाश्चात्य राजनैतिक प्रणाली की अनुपयुक्तता और अपरिणामकारकता को एक बार उन्होंने लोकसभा के सदस्य तथा एक बार राज्यसभा के सदस्य रहकर भली-भाँति जान लिया था और इसलिए दलगत राजनीति से सन्यास लेकर समग्र ग्राम विकास के कार्य में अपने-आपको झोंक दिया और अनेक जिलों में कार्य करते हुए अन्त में चित्रकूट में एक सर्वागपरिपूर्ण, समृद्ध, आत्मनिर्भर तथा देश की सांस्कृतिक परम्परा के अनुरूप विकास का नमूना खड़ा कर दिखाया और वहीं पर उन्होंने सुखपूर्वक अंतिम साँस ली। यही नहीं, इस नवदधीचि ने अपनी काया का भी समर्पण कर हमें संदेश यही दिया-

किंतु अपनी देह को भी देह अपनी कह न पाई ।
राष्ट्रनौका की वही पतवार बनना है हमें तो ।।

कुप्. सी. सुदर्शन
पूर्व सरसंघचालक

शिवराज सिंह चौहान
मुख्यमंत्री

मध्य प्रदेश शासन
भोपाल

8 मार्च, 2010

संदेश

नानाजी देशमुख के निधन से देश ने एक समर्पित राजनेता एवं समाजसेवी को खो दिया है। नानाजी के निधन से रिक्त स्थान की पूर्ति संभव नहीं है। वे हम सभी के आदर्श थे।

सक्रिय राजनीति को तिलांजलि देकर उन्होंने देश की राजनीति में एक आदर्श उपस्थित किया है। इसके बाद दीनदयाल शोध संस्थान के माध्यम से उन्होंने विभिन्न क्षेत्रों में भारतीय परंपराओं के संरक्षण और संवर्धन के लिए अपना शेष जीवन समर्पित कर दिया।

कृषि, चिकित्सा, जैविक खेती, जल संरक्षण ग्रामीण विकास, पंचायती राज और अनेकानेक क्षेत्रों में भारतीय परंपराओं के संरक्षण और संवर्धन के लिए उन्होंने उत्तर प्रदेश के गोंडा जिले और उसके बाद मध्य प्रदेश के प्रसिद्ध तीर्थस्थल चित्रकूट क्षेत्र को अपनी कार्यस्थली बनाया।

नईदुनिया
नईदुनिया मीडिया प्रा.लि. का प्रकाशन
अंतिम दर्शन
मुख्यमंत्री शिवराज सिंह चौहान ने रविवार को नई दिल्ली के केशव कुंज में स्वर्गीय नानजी देशमुख की पार्थिव पर पुष्पचक्र अर्पित किया।

यह हमारा सौभाग्य रहा कि उन्होंने दीनदयाल शोध संस्थान के माध्यम से हमारे प्रदेश के चित्रकूट क्षेत्र में अनेकानेक प्रकल्प संचालित किए। उनकी प्रेरणा से मध्य प्रदेश में देश के पहले ग्रामीण विश्वविद्यालय को भी स्थापना हुई।

स्वर्गीय नानाजी ने राष्ट्रसेवा की शुरूआत राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के माध्यम से की थी। स्वर्गीय नानाजी ने अपने आदर्शों से राजनीति और समाजसेवा के क्षेत्र में एक उदाहरण प्रस्तुत किया है। उनके जीवन से प्रेरणा लेकर हम देश की राजनीति में सुधार ला सकते हैं और देश को तेजी से आर्थिक विकास की ओर ले जा सकते हैं।

आज इस अवसर पर मैं मध्य प्रदेश शासन तथा मध्य प्रदेश की साढ़े छः करोड़ जनता की ओर से विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

(शिवराज सिंह चौहान)

मुलायम सिंह यादव
राष्ट्रीय अध्यक्ष
समाजवादी पार्टी

5, विक्रमादित्य मार्ग, लखनऊ

07-3-2010

प्रिय अभय महाजन जी,

नानाजी देशमुख नेतृत्व की उस पंक्ति में अग्रणी थे, राजनीति जिनके लिए सेवा का माध्यम थी और व्यवसाय न होकर एक मिशन थी। मेरी उनसे भेंट चित्रकूट में समाजवादी पार्टी के प्रशिक्षण शिविर में हुई थी। उनमें गाँवों का समग्र विकास करने की गहरी आकाँक्षा थी। नानाजी ने राजनीति में 60 साल के बाद सन्यास लेकर अपने को समाज सेवा में समर्पित कर दिया था। यह अपने में एक मिसाल थी।

यह बात भुलाई नहीं जा सकती कि डा. राम मनोहर लोहिया के गैर कॉग्रेसवाद की लड़ाई में उन्होंने बढ़-चढ़ कर भूमिका निभाई थी। इसके फलस्वरूप 1967 में उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल सहित कई राज्यों में गैर कॉग्रेसी सरकारें बनी थी। आपातकाल के विरोध में जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में चले आंदोलन में भी उनकी भागीदारी बहुत महत्वपूर्ण थी।

नानाजी ऐसे नेता थे जिनका व्यक्तित्व बहुआयामी था। ग्रामों को स्वावलम्बी बनाने के प्रयासों के साथ उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में भी प्रशंसनीय कार्य किये थे। वे यद्यपि आजीवन संघ से जुड़े रहे तथापि उनके अन्य दलों के नेताओं के साथ भी अच्छे सम्बन्ध थे। उनकी बात सभी लोग बड़े गौर से सुनते थे। वह परिपक्व दृष्टि एवं विचारों के नेता थे। उनके निधन के साथ एक समर्पित एवं मिशनरी राजनीति का युग समाप्त हो गया है।

आपका ,

मुलायम सिंह यादव

श्री अभय महाजन,
संगठन सचिव
दीनदयाल शोध संस्थान, दिल्ली.

RAJYA SABHA 12th of March 2010

OBITUARY REFERENCES

MR. CHAIRMAN: Hon'ble Members, I refer with profound sorrow to the passing away of Shri M. S. Abdul Khader and Shri Nana Deshmukh, former Members of this House.

Shri Nana Deshmukh passed away on the 27th of February, 2010 at the age of 93 years.

Born in Kadoli in Parbhani District of Maharashtra in October, 1916, Shri Deshmukh had his education at Government High School, Washim in Akola District and Inter Commerce from Birla College, Pilani.

An agriculturalist by vocation, Shri Deshmukh was a renowned social worker, who worked for the realization of the dream of total transformation through total development with people's initiative and participation in a number of villages of Uttar Pradesh, Bihar, Maharashtra and Madhya Pradesh.

Shri Deshmukh founded the Saraswati Shishu Mandir, a chain of pre-primary and primary schools spread across India in 1950. He had set up the Deen Dayal Research Institute in 1969 with the primary objective of finding innovative, eco-friendly and sustainable models of development. He also established the Chitrakoot Gramodaya Vishwavidyalaya in Madhya Pradesh, India's first Rural University in 1991, and was its first Chancellor.

Shri Nana Deshmukh was honoured with many awards including the Padma Vibhushan in 1999, National Citizen Award in 2001, Jeewan Gaurav Purashkar in 2003 and the Doctor of Letters by several Universities for social service.

Shri Nana Deshmukh was a Nominated Member of this House from November 1999 to November, 2005. He was also a Member of the Sixth Lok Sabha.

In the passing away of Shri Nana Deshmukh, the country has lost an eminent social activist and an able parliamentarian.

We deeply mourn the passing away of Shri M.S. Abdul Khader and Shri Nana Deshmukh.

I request the Members to rise in their places and observe silence as a mark of respect to the memory of the departed.

लोक सभा

वाद-विवाद का सारांश

प्रश्नोत्तर के अतिरिक्त कार्यवाही

शुक्रवार, 12 मार्च, 2010 21 फाल्गुन, 1931 शक

निधन संबंधी उल्लेख

अध्यक्ष महोदया : मुझे सभा को अपने पूर्ववर्ती सहयोगी श्री नानाजी देशमुख के दुःखद निधन की सूचना देनी है।

श्री नानाजी देशमुख वर्ष 1977 से 1979 तक छठी लोक सभा के सदस्य रहे और उन्होंने उत्तर प्रदेश के बलरामपुर संसदीय निर्वाचन क्षेत्र का प्रतिनिधित्व किया। श्री नानाजी देशमुख वर्ष 1999 से 2005 तक राज्य सभा के नाम-निर्दिष्ट सदस्य भी रहे। पेशे से कृषक नानाजी देशमुख एक विख्यात सामाजिक कार्यकर्ता थे। उन्होंने उत्तर प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र और मध्य प्रदेश के गांवों में जनता के सहयोग और सहभागिता से सर्वतोमुखी विकास करके कायाकल्प करने के सपने को साकार करने के लिए कार्य किया। श्री नानाजी देशमुख ने सम्पूर्ण भारत में सरस्वती शिशु मंदिर खोले जो पूर्व प्राथमिक और प्राथमिक विद्यालयों की एक श्रृंखला थी। वह मध्य प्रदेश में दीन दयाल अनुसंधान संस्थान और चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय के संस्थापक भी थे। वह भारत के इस पहले ग्रामीण विश्वविद्यालय के प्रथम कुलाधिपति भी रहे। श्री नानाजी देशमुख को वर्ष 1999 में पद्म विभूषण, वर्ष 2001 में नेशनल सिटीजन अवार्ड और वर्ष 2003 में जीवन गौरव पुरस्कार से सम्मानित किया गया। उनकी सामाजिक सेवाओं के लिए अनेक विश्वविद्यालयों ने उन्हें डी.लिट. की उपाधि से भी विभूषित किया।

श्री नानाजी देशमुख का निधन 94 वर्ष की आयु में 27 फरवरी, 2010 को चित्रकूट, मध्य प्रदेश में हुआ।

हम अपने इस मित्र के निधन पर गहरा शोक व्यक्त करते हैं तथा मैं अपनी और इस सभा की ओर से शोक संतप्त परिवारों के प्रति संवेदना प्रकट करती हूँ।

तत्पश्चात् सदस्यगण कुछ क्षण के लिए मौन खड़े रहे।

Tribute to NANAJI DESHMUKH

from coffice@tata.com

to dridelhi1@gmail.com

date Fri, Mar 5, 2010 at 6:07 PM

Dear Mr. Mahajan,

Thank you for your email of March 4th. I am so sorry to know about the passing away of Nanaji. I would like to send the following message as a tribute to him- 'Nanaji was that rare politician who evolved into a statesman and nation-builder. He greatly valued his connection to the grassroots and was devoted to finding indigenous solutions to problems of livelihood and sustained income creation for the forgotten poor. I was privileged to know him and will greatly cherish our association.'

With regards,

Yours sincerely,

RATAN N. TATA

अश्विनी कुमार

स्थानीय सम्पादक

पंजाब केसरी

The Daily PUNJAB KESARI, Delhi
2-Printing Press Complex, Wazirpur, Ring Road, Delhi-35
फोन आफिस : 011-27194459, 27194559, 27194430, 27194489, 27194475, 27102493, 27102394, 27103016.
फैक्स : 91-11-27194470, 27194520.
Email : pnjkesri@vsnl.com,
Ashwinikumar001@gmail.com, www.punjabkesari.com

दिनांक : 07.03.2010

भाई श्री अभय महाजन जी,

नानाजी देशमुख का अवसान समूचे राष्ट्र के लिए अपूरणीय क्षति है। बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी नानाजी आदर्श प्रचारक, नेता व कार्यकर्ता थे। सेवा व शिक्षा के माध्यम से समाज में परिवर्तन लाने का जो बीड़ा उन्होंने उठाया, उसमें काफी हद तक सफल रहे। आज देश को एक नहीं, अनेक नाना जी की जरूरत है। उनके प्रकल्प हमारे मार्गदर्शक हैं। उनका आचरण हम सबके लिए अनुकरणीय है। सेवा के क्षेत्र में आकर वह ऋषि बन गए।

मैं सर्वशक्तिमान ईश्वर से उनकी आत्मा की शांति के लिए प्रार्थना करता हूँ।

अश्विनी कुमार

अश्विनी कुमार
सम्पादक

मध्यप्रदेश विधान सभा

सोमवार, दिनांक 8 मार्च, 2010 (फाल्गुन 17, 1931)
की कार्यवाही से उद्धरण

निधन का उल्लेख

अध्यक्ष महोदय : मुझे सदन को सूचित करते हुए अत्यन्त दुःख हो रहा है। कि सुप्रसिद्ध समाज सेवक, श्री नानाजी देशमुख का दिनांक 27 फरवरी, 2010 को निधन हो गया है।

श्री नानाजी देशमुख का जन्म 11 अक्टूबर, 1916 को कडोली, जिला परभणी (महाराष्ट्र) में हुआ था।

श्री देशमुख 1928 से राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ से सम्बद्ध रहे. आप भारतीय जनसंघ के संस्थापक सदस्य थे. 1948-51 में आपने राष्ट्रधर्म प्रकाशन के प्रबंध निदेशक के रूप में कार्य किया. श्री देशमुख ने सन् 1974 में श्री जयप्रकाश नारायण के संपूर्ण क्रांति आंदोलन में मुख्य संयोजक के रूप में कार्य किया और जनता पार्टी के महासचिव रहे. आप साढ़े तीन वर्ष तक चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय के प्रथम कुलाधिपति भी रहे. श्री देशमुख 1977-79 में छठी लोक सभा के सदस्य निर्वाचित हुए और नवम्बर, 1999 में राज्यसभा के लिए नाम निर्दिष्ट हुए, आपको पदम विभूषण और पुणे तथा अजमेर विश्वविद्यालय द्वारा डॉक्टर ऑफ लेटर्स से विभूषित किया गया था।

श्री देशमुख एक निष्काम कर्मयोगी और समाजसेवी थे. ग्राम और ग्रामीणों की दशा और दिशा बदलने में आपने अपना पूरा जीवन समर्पित किया. आपके अवसान से देश एवं प्रदेश के सार्वजनिक जीवन की अपूरणीय क्षति हुई है.

श्रीमती जमुना देवी, नेता प्रतिपक्ष : मा. अध्यक्ष महोदय, आपने भाषण में नानाजी देशमुख के बारे में जो विचार व्यक्त किये हैं, उन विचारों से सहमत होते हुए मैं कहना चाहूंगी कि श्री नानाजी देशमुख 1928 से राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से संबद्ध होकर अपने क्षेत्र में काम करते रहे. इसके अलावा नानाजी ने अपने जीवन को समाजसेवा में समर्पित करके जो समाज की सेवा की है, वह तो राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को भी अनुसरण करना चाहिए, चित्रकूट में उन्होंने ग्रामोदय विश्वविद्यालय की स्थापना में भी वे कुलाधिपति रहे और मैं सोचती हूँ कि चित्रकूट का बहुत कुछ उनके कार्यों से एक नक्शा बदला है वहां पर लोगों में जागृति और समाज सेवा के काम भी उन्होंने किये हैं, राज्यसभा, लोकसभा और विधान सभा में भी अपनी सेवाएं दी हैं, नानाजी को खोकर देश और प्रदेश के सार्वजनिक जीवन की अपूरणीय क्षति हुई है. उनके कामों को आज भी हम याद करते हैं. वे बहुत अच्छे समाजसेवक थे. मैं अपने दल की ओर से उनको विनम्र श्रद्धांजलि अर्पित करती हूँ और शोकसंतप्त परिवार को ईश्वर यह कष्ट सहन करने की ताकत दे.

विधान सभा सचिवालय
उत्तर प्रदेश
(कार्यवाही अनुभाग)

प्रेषक,

श्री प्रदीप दुबे,
प्रमुख सचिव।

विधान भवन,
लखनऊ।
दिनांक : 31 अगस्त, 2010

सेवा में,

प्रधान सचिव,
दीनदयाल शोध संस्थान
7-ई, स्वामी रामतीर्थ नगर झण्डेवाला,
एक्सटेंशन, नई दिल्ली -110055

महोदय

उत्तर प्रदेश विधान सभा के दिनांक 9 अगस्त, 2010 उपवेशन में प्रसिद्ध समाजसेवी श्री नानाजी देशमुख के दुखद निधन पर भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की गयी तथा हार्दिक संवेदनाएं व्यक्त की गयी। तत्पश्चात दिवंगत आत्मा की शान्ति के लिए सदन में सभी सदस्यगण दो मिनट मौन खड़े हुए।

सदन में व्यक्त की गयी श्रद्धांजलि एवं हार्दिक संवेदनाओं की सूचना माननीय अध्यक्ष, विधान सभा के आदेशानुसार आपको प्रेषित की जा रही है।

भवदीय

प्रदीप दुबे
प्रमुख सचिव

बिहार विधान परिषद्

सत्र - 164

शोक - पुस्तिका

भाग - 2

22 फरवरी, 2010 - 31 मार्च, 2010

श्री ताराकांत झा सभापति बिहार विधान परिषद्

स्वर्गीय नानाजी देशमुख

27 फरवरी, 2010 को सुप्रसिद्ध समाजसेवी एवं पूर्व सांसद, पद्मविभूषण माननीय श्री नानाजी देशमुख का निधन हो गया। मृत्यु के समय उनकी उम्र लगभग 94 वर्ष थी।

श्री देशमुख का जन्म 11 अक्तूबर, 1916 को महाराष्ट्र के परभणी जिले के कडोली गांव में हुआ था। श्री नानाजी देशमुख का पूरा नाम श्री चंडीराव देशमुख था।

श्री देशमुख 1977 से 1979 तक लोकसभा के सदस्य एवं 1999 में राज्य सभा के सदस्य बने।

श्री देशमुख 1928 से आजीवन राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से जुड़े रहे। संघ की ओर से वे बिहार के प्रभारी भी रहे। उनमें संगठन क्षमता गजब की थी।

श्री देशमुख ने "राष्ट्रधर्म', "पाञ्चजन्य' एवं "दैनिक स्वदेश' का प्रकाशन शुरू कर समाज में अपनी पहचान बनाई। लोकनायक जयप्रकाश नारायण के संपूर्ण क्रांति आंदोलन में उनकी भूमिका बहुत महत्वपूर्ण रही। 4 नवम्बर, 1974 को पटना के आयकर गोलंबर के समीप लोकनायक जयप्रकाश नारायण पर पुलिस द्वारा लाठियों के प्रहार को उन्होंने अपने हाथों से रोका जिससे उनके हाथ की हड्डी टूट गई थी।

1977 में तत्कालीन प्रधानमंत्री द्वारा मंत्री पद के प्रस्ताव को श्री देशमुख ने अस्वीकार कर दिया था। उनका मानना था कि 60 वर्षो के बाद स्वेच्छा से राजनीति छोड़ देनी चाहिए।

पंडित दीनदयाल शोध संस्थान एवं सरस्वती शिशु मंदिर के वे संस्थापक भी रहे। श्री देशमुख ने गोंडा एवं चित्रकूट के लगभग 500 गांवों को चुनकर उनकी खुशहाली, उन्नति एवं विकास के लिए कार्य किया जिसमें लगभग 100 गांव आज प्रगति की राह पर हैं। वे चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय के कुलाधिपति भी रहे।

श्री देशमुख कई वर्षो तक भारतीय जनसंघ के अखिल भारतीय संगठन सचिव थे। उन्होंने कई देशों की यात्रा भी की। उन्होंने अपना संपूर्ण जीवन समाज-सेवा में समर्पित कर दिया। उनके निधन से हम सभी को अपार दुःख है।

ईश्वर दिवंगत आत्मा को चिर शांति प्रदान करें तथा शोक संतप्त परिवार को धैर्य एवं शक्ति दें।

नए अवतार में नानाजी

उच्चतम स्थान को रिक्त करने के बाद शून्य से प्रारंभ कर फिर उसी ऊंचाई पर पहुंचने के लिए आवश्यकता होती है संकल्प की, तपस्या की। राजनीतिक क्षेत्र की उन ऊंचाइयों पर पहुंचने के बाद उन्हें एक ही झटके में त्याग देने का माद्दा सिर्फ नानाजी जैसे व्यक्ति में ही हो सकता था। सत्ताकेंद्रित राजनीति से समाजकेंद्रित गतिविधियों को अपने जीवन का उद्देश्य बना कर उन्होंने दीनदयाल जी के एकात्म मानवदर्शन को मूर्त रूप देने के लिए जेपी की समग्र क्रांति की राह पकड़ ली थी। एक नए अवतार में आ गए थे नानाजी।

8 अक्तूबर, 1978 को राजनीति छोड़, राष्ट्र नवरचना की दिशा में उन्होंने जो वक्तव्य दिया वह ऐतिहासिक बन गया ....

संकल्प -

(राष्ट्र नवरचना की दिशा में पहल)

"जय मातृभूमि' साप्ताहिक के उद्घाटन अवसर पर, लोकनायक श्री जयप्रकाश नारायण की उपस्थिति में तथा बिहार के मुख्यमंत्री माननीय श्री कर्पूरी ठाकुर की अध्यक्षता में, 8 अक्टूबर 1978 को पटना में श्री नानाजी देशमुख का भाषण।

""नानाजी ने सत्ता और पद का मोह त्याग कर जनसेवा का जो निर्णय लिया है उसका मैं हृदय से स्वागत करता हूँ। वर्तमान परिस्थिति में यह निर्णय विशेष महत्वपूर्ण और अधिक उपयोगी है। मैं आशा करता हूँ कि राष्ट्र के प्रति सेवा भाव रखने वाले युवा-राजनीतिज्ञ नानाजी का अनुसरण करेंगे।"

- जय प्रकाश नारायण

दीनदयाल शोध संस्थान
७-ई स्वामी रामतीर्थ नगर,
नई दिल्ली - ११००५५

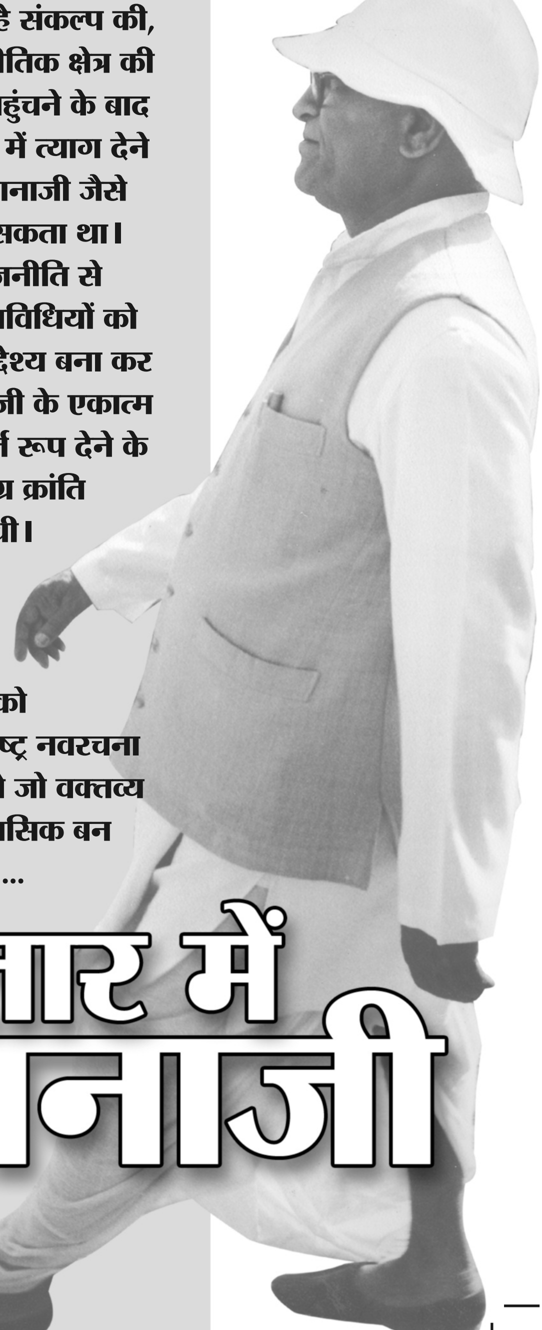

नए अवतार में नानाजी

नए अवतार में नानाजी

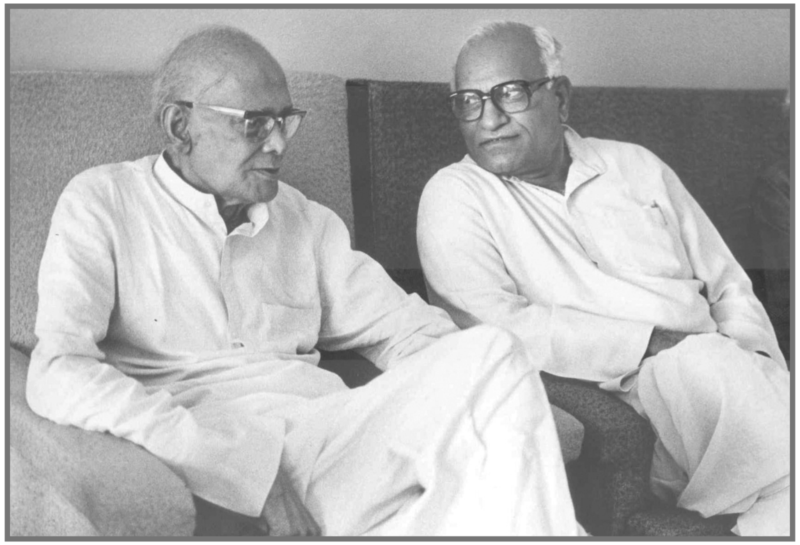

"नानाजी ने सत्ता और पद का मोह त्याग कर जनसेवा का जो निर्णय लिया है उसका मैं हृदय से स्वागत करता हूँ। वर्तमान परिस्थिति में यह निर्णय विशेष महत्वपूर्ण और अधिक उपयोगी है। मैं आशा करता हूँ कि राष्ट्र के प्रति सेवा भाव रखने वाले युवा-राजनीतिज्ञ नानाजी का अनुसरण करेंगे।"
- जय प्रकाश नारायण

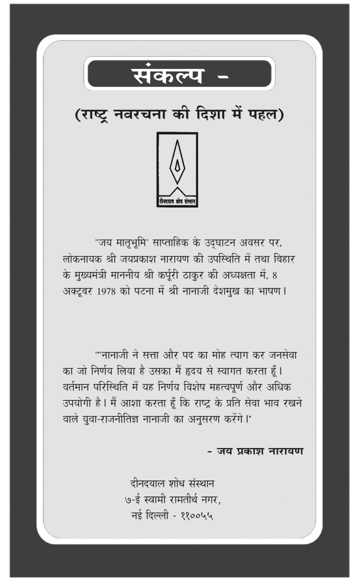

संकल्प -

(राष्ट्र नवरचना की दिशा में पहल)

"जय मातृभूमि' साप्ताहिक के उद्घाटन अवसर पर, लोकनायक श्री जयप्रकाश नारायण की उपस्थिति में तथा बिहार के मुख्यमंत्री माननीय श्री कर्पूरी ठाकुर की अध्यक्षता में, 8 अक्टूबर 1978 को पटना में श्री नानाजी देशमुख का भाषण।

""नानाजी ने सत्ता और पद का मोह त्याग कर जनसेवा का जो निर्णय लिया है उसका मैं हृदय से स्वागत करता हूँ। वर्तमान परिस्थिति में यह निर्णय विशेष महत्वपूर्ण और अधिक उपयोगी है। मैं आशा करता हूँ कि राष्ट्र के प्रति सेवा भाव रखने वाले युवा-राजनीतिज्ञ नानाजी का अनुसरण करेंगे।"

- जय प्रकाश नारायण

दीनदयाल शोध संस्थान
७-ई स्वामी रामतीर्थ नगर,
नई दिल्ली - ११००५५

'जय मातृभूमि' साप्ताहिक के उद्घाटन अवसर पर, लोकनायक श्री जयप्रकाश नारायण की उपस्थिति में तथा बिहार के मुख्यमंत्री माननीय श्री कर्पूरी ठाकुर की अध्यक्षता में, 8 अक्टूबर, 1978 को पटना में श्री नानाजी देशमुख का भाषण।

20 अप्रैल 1978 को मैंने राजधानी के पत्रकार बंधुओं के समक्ष अपने मन का यह भाव प्रकट किया था कि युवा-पीढ़ी की कार्य-शक्ति को रचनात्मक दिशाओं में प्रवाहित करने के लिए कुछ वरिष्ठ एवं प्रभावशाली नेताओं को राजसत्ता से अलग होकर रचनात्मक कार्य का प्रत्यक्ष उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए। उसी समय मैंने अपना यह व्यक्तिगत संकल्प भी घोषित किया था कि एक साधारण कार्यकर्ता के नाते मैं अपनी शेष आयु को युवा-पीढ़ी के साथ सहयोग करते हुए देश की सामाजिक-आर्थिक पुनर्रचना की दृष्टि से कुछ रचनात्मक प्रयोगों में व्यतीत करना चाहूँगा।

मेरे लिए यह बहुत संतोष और उत्साह की बात है कि मेरी इस विनम्र घोषणा की ओर सम्पूर्ण देश का ध्यान आकर्षित हुआ। देशभर के समाचारपत्रों, युवा संगठनों, राजनीतिक तथा बुद्धिजीवी क्षेत्रों में उस पर प्रतिक्रिया और चर्चा हुई। इस राष्ट्रीय बहस का मैं स्वागत करता हूँ क्योंकि यह मेरे लिए बहुत ही उद्बोधक एवं प्रेरक सिद्ध हुई है। इस बहस का गंभीर अध्ययन करने पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि मेरे मूल विचार का स्वागत करते हुए भी कुछ लोगों को यह विश्वास नहीं हो पा रहा है कि अपने जीवन का लम्बा भाग राजनीति में खपा देने एवं राजनीति में आगे बढ़

जाने के पश्चात् क्या कोई राजनीतिज्ञ सचमुच रचनात्मक कार्य में लगने का विचार कर सकता है? ऐसे विचार को सच्चे हृदय से क्रियान्वित कर सकता है? कुछ लोगों को यह शंका हुई कि कहीं इस कथन के पीछे कोई राजनीतिक चाल तो नहीं है। कुछ बंधुओं ने इसे सत्तारूढ़ दल की आंतरिक स्पर्धा राजनीति से जोड़कर कुछ नेताओं को सत्ता से हटाने की सुनियोजित व्यूहरचना ही मान लिया। मैं इन शंकालु बंधुओं को इसके लिए कतई दोषी नहीं ठहराता। उनके मन की ये शंकाएं भारत की राजनीतिक कार्यप्रणाली, उस कार्यप्रणाली में से निकले नेतृत्व और उपजी राजनीतिक संस्कृति के प्रति जनमानस में व्याप्त गहरी अनास्था का ही परिचायक है। इस अनास्था को उत्पन्न करने के लिए समाज नहीं, राजनीतिक नेतृत्व स्वयं दोषी है।

तर्क नहीं कृति चाहिए

मैं समझता हूँ कि इन शंकाओं का निवारण केवल शाब्दिक तर्कवाद द्वारा संभव नहीं है। इसके लिए कथनी-करनी में विद्यमान अंतर को दूर करना होगा। मैं अन्य राजनीतिक कार्यकर्ताओं की ओर से कुछ कह सकने की स्थिति में नहीं हूँ। किन्तु अपनी ओर से देशवासियों को यह बताना आवश्यक समझता हूँ कि मेरे संकल्प को कार्यरूप में परिणत करने का समय आ पहुँचा है। 11

मेरे मनोभाव की सार्वजनिक अभिव्यक्ति को लेकर जो राष्ट्रीय बहस छिड़ी थी, उसके अध्ययन से मुझे यह आवश्यक प्रतीत होता है कि देशवासियों को अपने इस निश्चय से अवगत कराते समय मुझे अपनी उस विचार-प्रक्रिया को भी विस्तारपूर्पक देशवासियों के समक्ष रखना चाहिए जिसने मुझे इस निर्णय पर पहुँचाया है।

अक्तूबर, 1978 को मेरी आयु के 62 वर्ष पूरे हो रहे हैं। गत वर्ष आयु के 61 वर्ष पूरे होने पर मैंने अपने मन ही मन यह संकल्प किया था। तभी से मैं अपने मन, मस्तिष्क को इस दिशा में तैयार करने एवं अपने वर्तमान राजनीतिक दायित्वों से धीरे-धीरे मुक्त होने की दिशा में आगे बढ़ता रहा हूँ। अब मैं यह सार्वजनिक घोषणा करने की स्थिति में हूँ कि 11 अक्तूबर से मैं सत्ता और दलगत राजनीति से अलग होकर अपने समय को पहले से प्रारंभ हुए एवं आवश्यकतानुसार नवीन रचनात्मक कार्यों में लगा सकूँगा।

गत अप्रैल मास में मेरे मनोभाव की सार्वजनिक अभिव्यक्ति को लेकर जो राष्ट्रीय बहस छिड़ी थी, उसके अध्ययन से मुझे यह आवश्यक प्रतीत होता है कि देशवासियों को अपने इस निश्चय से अवगत कराते समय मुझे अपनी उस विचार-प्रक्रिया को भी विस्तारपूर्पक देशवासियों के समक्ष रखना चाहिए जिसने मुझे इस निर्णय पर पहुँचाया है। यह एक प्रकार से मेरे 20 अप्रैल 1978 के

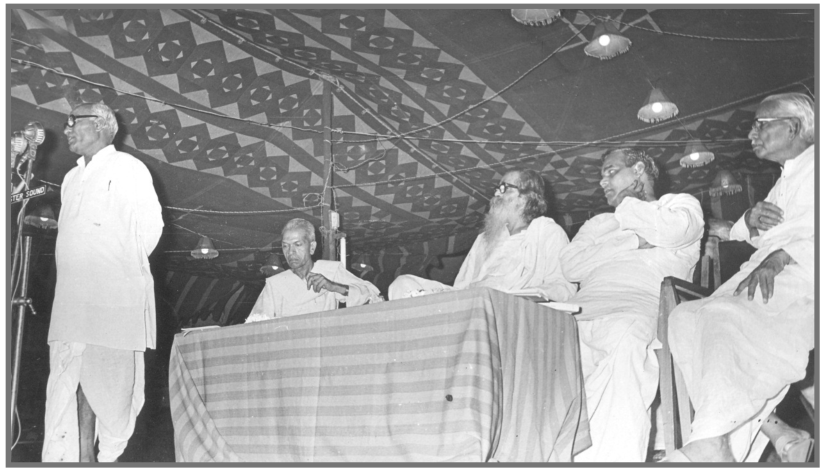

सूत्रमय वक्तव्य की व्याख्या मात्र होगी।

आज से 44 वर्ष पूर्व सन् 1934 में एक छात्र के रूप में मेरा जीवन सार्वजनिक कार्य से जुड़ा था। तब देश के वायुमंडल में स्वाधीनता आंदोलन के नारे गूँज रहे थे। भावुक युवा अन्तःकरण में देश की स्वाधीनता के लिए छटपटाहट सर्वव्यापी थी। स्वाधीन भारत के कितने ही उदात्त और आकर्षक सपने उस संघर्षयुग की युवा आँखों में तैर रहे थे। स्वतंत्रता प्राप्ति के 31 वर्ष पश्चात् जब मैं स्वाधीन भारत के वर्तमान दृश्य पर दृष्टिपात करता हूँ तो मन में सहसा ही यह प्रश्न खड़ा हो जाता है कि क्या स्वाधीन भारत का यही चित्र है जिसका निर्माण करने के लिए देश ने अनेक पीढ़ियों तक स्वाधीनता के लिए लम्बी और विकट लड़ाई लड़ी थी? दयानन्द, विवेकानन्द से लेकर गाँधी तक और तिलक से लेकर नेताजी सुभाष बोस तक महापुरुषों की वह मालिका, जिसने हमारे स्वाधीनता संग्राम का जीवनदर्शन गढ़ा, उसके लिए त्याग और बलिदान की नींव तैयार की और अन्ततः उसे सफलता प्राप्त करा दी, यदि स्वाधीन भारत में एकाएक अवतरित हो जाएं तो आज का दृश्य देखकर उन्हें कैसा लगेगा? इस दृश्य में उन्हें अपने सपनों की पूर्ति दिखेगी अथवा समाधि?

स्वाधीनता की लड़ाई क्यों?

इन प्रश्नों की भूलभुलैया में उलझकर जब मैं स्वाधीनता आन्दोलन की मूल प्रेरणाओं को टटोलने की कोशिश करता हूँ तो निम्न सूत्र मेरी पकड़ में आते हैं:-

- स्वाधीनता की हमारी लड़ाई केवल राजनीतिक लड़ाई नहीं थी जिसका लक्ष्य राजसत्ता को विदेशी हाथों से छीनकर देशी हाथों को सौंपने तक सीमित हो, अपितु यह दो सभ्यताओं का संघर्ष था, सच्चे अर्थों में एक सांस्कृतिक युद्ध था। भारत में ब्रिटिश साम्राज्यवाद की स्थापना के साथ ही पश्चिम में उपजी औद्योगिक सभ्यता का भी प्रवेश हुआ था। और उन्नीसवीं शती की भारतीय

मनीषा ने इसे सभ्यता की चुनौती के रूप में स्वीकार किया था। स्वाधीनता संग्राम के दार्शनिकों और अग्रणियों ने स्पष्ट शब्दों में घोषणा की थी कि भारत इस औद्योगिक सभ्यता की बाढ़ में प्रवाह पतित के समान कदापि नहीं बहेगा अपितु अपने पूर्वजों द्वारा प्रदत्त श्रेष्ठ जीवनदर्शन, वैज्ञानिक समाज रचना तथा अखंड अनुभव परंपरा के प्रकाश में अपनी मौलिक प्रतिभा से मानवीय मूल्यों पर आधारित तथा विज्ञान के आधुनिक आविष्कारों को ध्यान में रखकर युगानुकूल एक ऐसी नवीन सामाजिक एवं आर्थिक रचना खड़ी करेगा जो शेष विश्व के लिए भी अनुकरणीय बन सके। विवेकानन्द, अरविन्द, तिलक एवं गाँधी आदि मनीषियों ने बार-बार दोहराया था कि नियति द्वारा निर्धारित अपने इस जीवन लक्ष्य की पूर्ति के हेतु ही भारत स्वाधीनता के लिए संघर्ष कर रहा है। अतः भारत की स्वाधीनता केवल उसके अपने हित में नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व के लिए आवश्यक है।

- स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करते हुए भी भारतीय मनीषा भावी समाज रचना के नियामक सिद्धान्तों व आदर्शों की खोज में लगी रही। गरीबी की रेखा के नीचे जी रहे कोटि-कोटि भारतवासियों को जीवन की न्यूनतम आवश्यकताएँ उपलब्ध कराते हुए उच्चतर जीवन की ओर बढ़ने की सुविधा प्रदान करना। शताब्दियों से चली आ रही सामाजिक और आर्थिक विषमता की खाई को पाटना। आधुनिक विज्ञान द्वारा प्रदत्त शरीर सुख के अनेक नये-नये उपकरणों का उपयोग करते हुए भी "सादा जीवन उच्च विचार" के सनातन आदर्श को सामने रखकर ही व्यक्तिगत एवं पारिवारिक जीवन स्तर का मापदण्ड निर्धारित करना ओर व्यक्ति के भौतिक व आध्यात्मिक विकास में संतुलन कायम करना।

- धर्म, भाषा, क्षेत्रीयता व जातिवाद के कारण उत्पन्न भेदों को आसेतु हिमाचल सम्पूर्ण राष्ट्र के प्रति भक्ति की गंगा में डुबोकर एकरस शक्तिशाली राष्ट्र जीवन खड़ा करना।
- एक ऐसी राजनीतिक एवं संवैधानिक रचना को खड़ा करना जो राष्ट्रीय एकता को पुष्ट करने के साथ-साथ प्रत्येक भारतीय को राष्ट्र-निर्माण और राष्ट्र-जीवन के संचालन की प्रक्रिया में सहभागी होने का अवसर प्रदान कर सके।
- **राष्ट्र की नवीन आर्थिक** - सामाजिक व राजनीतिक रचना को प्रतिबिम्बित करने वाले नागरिकों का विकास करने वाली शिक्षाप्रणाली का आविष्कार करना।

किन्तु स्वाधीनता संघर्ष काल के इन प्रेरणासूत्रों के प्रकाश में जब हम स्वाधीन भारत के आज के चित्र पर दृष्टि डालते हैं तो क्या दिखाई देता है? क्या हम उपरोक्त राष्ट्रीय लक्ष्यों की पूर्ति की दिशा में एक पग भी आगे बढ़े हैं? राष्ट्रजीवन के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक,

बनी-बनायी आयातित विचारधाराओं के दायरे में बहस के द्वारा कभी भी नवस्वतंत्र राष्ट्र का नवनिर्माण नहीं हुआ करता। उसके लिए व्यक्तिगत, पारिवारिक एवं सामूहिक आचरण के क्षेत्र में लंबे एवं बहुविध प्रयोगों की प्रक्रिया से गुजरना अनिवार्य होता है। प्रत्यक्ष आचरण की प्रयोगशाला की भट्टी में तपकर ही नवनिर्माण का साँचा तैयार हुआ करता है।

शैक्षणिक आदि किसी भी क्षेत्र में क्या हम अपने राष्ट्रीय आदर्शों के अनुरूप कोई भी मौलिक रचना खड़ी कर पाये हैं? विगत 30 वर्षों में जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रगति के नाम पर जो कुछ हुआ है, उसे पश्चिमी अर्थरचना के अन्धानुकरण के अलावा और क्या कहा जा सकता है? प्रत्यक्ष कृति के क्षेत्र में स्वाधीन भारत द्वारा स्वाधीनता आंदोलन की मूल प्रेरणाओं से इस संबंधविच्छेद का कारण क्या है? क्या स्वाधीन भारत की ये प्रेरणाएं ही गलत थीं अथवा स्वाधीन भारत उनके प्रति शाब्दिक निष्ठा का बार-बार उद्‌घोष करते हुए गलत मार्ग पर भटक गया है?

युगानुकूल समाजरचना के आविष्कार का कार्य केवल बौद्धिक व्यायाम द्वारा पूरा होना संभव नहीं है। बनी-बनायी आयातित विचारधाराओं के दायरे में बहस के द्वारा कभी भी नवस्वतंत्र राष्ट्र का नवनिर्माण नहीं हुआ करता। उसके लिए व्यक्तिगत, पारिवारिक एवं सामूहिक आचरण के क्षेत्र में लंबे एवं बहुविध प्रयोगों की प्रक्रिया से गुजरना अनिवार्य होता है। प्रत्यक्ष आचरण की प्रयोगशाला की भट्टी में तपकर ही नवनिर्माण का साँचा तैयार हुआ करता है। इसीलिए हम देखते हैं कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद के साथ भारत की लड़ाई के दौरान दो धाराएं साथ-साथ बहती रही हैं। एक राजनीतिक आंदोलन की तो दूसरी रचनात्मक प्रयोगों की। बंगभंग आंदोलन के समय से ही राष्ट्रीय शिक्षा के क्षेत्र में आहार-विहार से लेकर आर्थिक-सामाजिक रचना तक सर्वांगीण राष्ट्रीय पुनर्निर्माण की दिशा में अनेक प्रयोग प्रारंभ किये गये थे।

वस्तुतः गाँधी जी की दृष्टि में इन रचनात्मक प्रयोगों का स्थान राजनीतिक संघर्ष से कम महत्व का नहीं था। राजसत्ता उनके लिए राष्ट्र निर्माण के अनेक साधनों में से एक साधन थी, सर्वस्व नहीं। अतः राजनीति उनकी गतिविधियों का केन्द्रबिन्दु न होकर एक पूरक अंग मात्र थी।

सत्ताकेन्द्रित राजनीति का उदय

स्वाधीनताप्राप्ति के पश्चात् सत्ता को ही राष्ट्र निर्माण का एकमात्र साधन मान लिया गया। इसीलिए सत्ताभिमुखी राजनीति संपूर्ण सार्वजनिक जीवन पर छा गई। परिणामस्वरूप गत 30 वर्ष में सामाजिक, शैक्षणिक या राष्ट्रीय जीवन के अन्य किसी भी क्षेत्र में नेतृत्व का विकास नहीं हो पाया। सत्ता के आंगन में प्रवेश करना ही प्रत्येक का लक्ष्य बन गया। संसद और विधानसभाओं की 5000

सीटों के लिए छीनाझपटी और जोड़तोड़ का नाम ही स्वाधीन भारत की राजनीति बन गयी। येन-केन-प्रकारेण चुनाव जीतना, विधानसभा या लोकसभा में प्रवेश हो जाने के पश्चात् मंत्रिपदों की ओर बढ़ने का रास्ता खोजना, यही है संक्षेप में राजनीतिक कार्यकर्ता की प्रातः से रात्रि तक की दौड़धूप का मर्म। सत्ता प्राप्त करना और प्राप्त सत्ता को किसी भी प्रकार अपने हाथ से निकलने न देना, यही आज अधिकांश भारतीय राजनीतिज्ञों की मुख्य प्रेरणायें हैं। स्वाभाविक ही, इस मानसिकता ने ऐसी कार्यप्रणाली को जन्म दिया, जिसमें जनजीवन से प्रत्यक्ष नाता जोड़कर जनसहयोग से सामाजिक आर्थिक परिवर्तन की प्रक्रिया को खड़ा करने की बजाय सस्ती प्रदर्शनकारिता, विरोध के लिए विरोध एवं जोड़-तोड़ के द्वारा चुनाव जीतने को ही सर्वोपरि महत्व दिया जाने लगा। प्रेस, प्लेटफार्म और प्रोटेस्ट पर आधारित कार्यप्रणाली ने ऐसे-ऐसे नेताओं को उभारकर सामने लाया है जो राष्ट्र के सामने विद्यमान सामाजिक-आर्थिक समस्याओं में गहरे पैठकर उनका व्यावहारिक हल खोजने की बजाय भेदों पर पलने वाली, संकुचित निष्ठाओं को उभारने, जनमानस को भ्रमित करने के लिए आकर्षक वादों और उत्तेजक नारे उछालने को ही राजनीतिक सफलता की एकमात्र कुँजी मानने लगा है। निश्चय ही, जोड़तोड़ और आंदोलन की राजनीतिक कार्यशैली में से उभरे हुए नेतृत्व के हाथों राष्ट्रनिर्माण के लिए सत्ता का रचनात्मक उपकरण बन पाना असंभव है। राष्ट्रनिर्माण हेतु सत्ता का रचनात्मक प्रयोग करने के लिए आवश्यक है कि सत्ताधारी को प्रत्यक्ष जनसहयोग, गहन चिन्तन एवं रचनात्मक प्रयोगों के माध्यम से समस्याओं के स्वरूप एवं उनके हल का व्यवहारिक ज्ञान हो। दुर्भाग्य से वर्तमान राजनीतिक कार्यशैली में इस

संसद और विधानसभाओं की 5000 सीटों के लिए छीनाझपटी और जोड़तोड़ का नाम ही स्वाधीन भारत की राजनीति बन गयी। येन-केन-प्रकारेण चुनाव जीतना, विधानसभा या लोकसभा में प्रवेश हो जाने के पश्चात् मंत्रिपदों की ओर बढ़ने का रास्ता खोजना, यही है संक्षेप में राजनीतिक कार्यकर्ता की प्रातः से रात्रि तक की दौड़धूप का मर्म।

रचनात्मक दृष्टि की कोई उपयोगिता ही नहीं रह गई, क्योंकि येन-केन-प्रकारेण चुनाव जीत जाना ही राजनीतिक सफलता की एकमात्र कसौटी बन गई है।

इसका ही परिणाम है कि विगत तीस वर्षो में राष्ट्र के सामाजिक-आर्थिक पुनर्निर्माण की दिशा में स्वाधीनता की मूल प्रेरणाओं एवं आदर्शों के अनुरूप आधारशिला तो रख नहीं पाये, उल्टे स्वतंत्रता-संग्राम के दौरान उपजी राष्ट्रीय एकता को दुर्बल बनाने तथा सामाजिक एवं धार्मिक भेदों का पोषण करने की, भारतीय राजनीतिज्ञों द्वारा भयंकर भूल हो रही है। अब तो यह लगने लगा है कि सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक भेद कायम रखने में ही राजनीतिज्ञों का निहित स्वार्थ निहित है। अतः वर्तमान राजनीतिक प्रक्रिया के द्वारा राष्ट्र के सामाजिक-आर्थिक पुनर्निर्माण के लक्ष्य की पूर्ति तो दूर, बची-खुची राष्ट्रीय एकता भी खतरे में पड़ गई है। वस्तुतः इस संकट के लिए किसी विशिष्ट विचारधारा, दल अथवा व्यक्ति विशेष को दोषी नहीं ठहराया जा सकता। यह संकट प्रचलित राजनीतिक कार्यशैली की ही देन है।

समग्र क्रान्ति आंदोलन क्यों

सर्वप्रथम लोकनायक जयप्रकाश जी ने राष्ट्र के इस रोग की जड़ को पकड़ा। उन्होंने अनुभव किया कि विगत 30 वर्ष में हमारी राष्ट्रीय यात्रा एक भटकाव की यात्रा रही है। उसका स्वाधीनता आन्दोलन के दौरान निरूपित राष्ट्रीय लक्ष्यों से संबंधविच्छेद हो चुका है और वह सत्ता के चारों ओर घूमने वाली बाँझ शैली के भंवर में फंस चुकी है। उसके भीतर से श्रेष्ठ, अनुशासित एवं उद्देश्यपूर्ण राष्ट्रजीवन का निर्माण असंभव है। इसलिए लोकनायक ने संपूर्ण क्रान्ति का नारा देकर जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में राष्ट्रीय आदर्शो की पुर्नव्याख्या की आवश्यकता प्रतिपादित की। लोकनायक जयप्रकाशजी के संपूर्ण क्रान्ति आंदोलन का लक्ष्य एक दल को हटाकर किसी दूसरे दल को सत्तारूढ़ करना नहीं था, अपितु सत्ताभिमुखी रानीतिक कार्यशैली का स्वस्थ विकल्प ढूँढ़ना था और एक प्रबल रचनात्मक आंदोलन की सृष्टि कर राजशक्ति पर रचनात्मक लोकशक्ति की महत्ता को पुर्नप्रतिष्ठित करना था।

जयप्रकाशजी के रूप में स्वतंत्रता संग्राम की प्रथम पंक्ति में लड़ने वाले एक तपोपूत सत्ताविमुख, दल से निरपेक्ष एवं निस्पृह व्यक्तित्व के मैदान में कूद पड़ने से जनमानस में विशेषकर युवा पीढ़ी में अभूतपूर्व आशावाद एवं उत्साह का संचार हुआ। जयप्रकाशजी जिन्हें राजनीतिक दृष्टि से लगभग निष्प्राण घोषित कर दिया गया था, रातों-रात भारत के सार्वजतिक जीवन के आकाश पर सबसे प्रबल शक्ति, ध्रुव बनकर उदित हो गये। उनका उपहास करने वाले राजनीतिज्ञों एवं दलों को भी उनके पीछे खड़े होने का निर्णय लेना पड़ा। जयप्रकाशजी का यह आकस्मिक पुनरोदय इस बात का प्रमाण है कि राष्ट्रीय मानस विगत 30 वर्ष की राजनीतिक कार्यशैली एवं उसमें से जन्मी राजनीतिक संस्कृति के प्रति तिरस्कार से भरा हुआ था और उसके विकल्प की खोज में व्याकुल था।

जयप्रकाशजी का व्यक्तित्व जुड़ जाने के कारण भारतीय राजनीति को कुछ समय के लिए पुनः एक नैतिक अधिष्ठान प्राप्त हुआ। उनके नैतिक बल के कारण ही प्रबल जनान्दोलन की सृष्टि हुई, सत्ता का आसन डोल गया और आत्मरक्षा में उसे लोकतंत्र की पीठ में आपातस्थिति की घोषणा का छुरा भोंकने का सहारा लेना पड़ा। आपातकालीन अत्याचारों की तीव्र प्रतिक्रिया तथा जे. पी. के

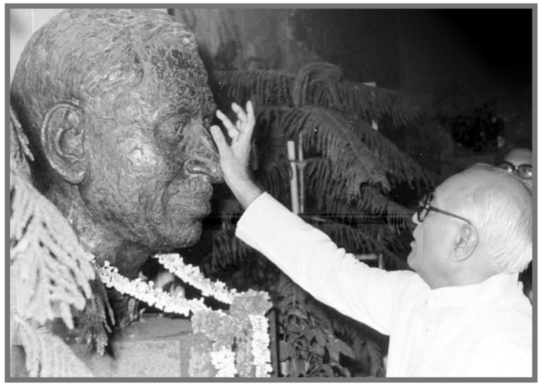

आंदोलन से उत्पन्न नैतिक वातावरण के फलस्वरूप ही केन्द्र में सत्ता परिवर्तन का अभूतपूर्व व अकल्पित चमत्कार घटित हो सका।

सत्ता बदली पर कार्यशैली वही

जयप्रकाशजी के नेतृत्व और समग्र क्रान्ति आंदोलन की पृष्ठभूमि में घटित सत्तापरिवर्तन ने राष्ट्र के उज्ज्वल भविष्य के प्रति एक बार फिर वैसी ही उमंग, उत्साह एवं आशावाद का वातावरण उत्पन्न कर दिया था जैसा कि सन् 1947 के पूर्व स्वतंत्रता प्राप्ति के समय प्रगट हुआ था। निश्चय ही भावविह्वलता की इस मन:स्थिति का लाभ उठाकर राष्ट्र की कर्मशक्ति को रचनात्मक दिशाओं में प्रवाहित किया जा सकता था। जागृत लोकशक्ति पर अधिष्ठित एक स्वच्छ एवं उदात्त सार्वजनिक जीवन को खड़ा करना संभव था। किन्तु इसे राष्ट्र के दुर्भाग्य के अतिरिक्त और क्या कहा जा सकता है कि इस सत्तापरिवर्तन में ही लोकनायक के समग्र क्रान्ति आंदोलन की इतिश्री मानी गई और देश का राजनीतिक नेतृत्व सत्ता प्राप्ति की उठा-पटक में व्यस्त हो गया। परिणामस्वरूप, जागृत लोकशक्ति के निर्माण के लिए राष्ट्र के नाम लोकनायक का आहवान अरण्यरोदन मात्र बनकर रह गया। सत्ता और दलों की राजनीति का विकल्प ढूँढने वाला समग्र क्रान्ति आन्दोलन भी मानो सत्ता और दलगत राजनीति की भंवर में फंसकर रह गया। वरिष्ठ नेतृत्व की देखा-देखी समग्र क्रान्ति आंदोलन की रीढ़ कहलाने वाला युवा शक्ति भी टिकटों और मंत्रिपदों के लंबे क्यू में खड़ा हो गई। राजसत्ता को ही सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन के एकमात्र माध्यम के रूप में फिर से प्रस्तुत किया जाने लगा और पुनः सत्ताभिमुखी राजनीति सम्पूर्ण सार्वजनिक जीवन का केन्द्रबिन्दु बन गई। फिर वही टिकटों और मंत्रिपदों के लिए जोड़-तोड़ और राजनीतिक स्वार्थो की पूर्ति के लिए जातिवाद, भाषावाद, क्षेत्रीयता, साम्प्रदायिकता के दानव को उभाड़ने के राष्ट्रघाती प्रयत्न और वही चरित्रहनन की ओछी प्रक्रिया चल पड़ी। इससे अधिक और पीड़ा की बात क्या हो सकती है कि आपातकाल की भट्ठी में भुन जाने के बाद भी भारत की राजनीतिक संस्कृति में कोई गुणात्मक परिवर्तन नहीं हुआ और वही पुरानी घिनौनी राजनीति ज्यों की त्यों वापस लौट आई। वस्तुतः प्रत्यक्ष जनसहयोग पर आधारित रचनात्मक कार्यशैली के अभाव में आत्मप्रचार, आंदोलन और जोड़तोड़ पर आधारित वर्तमान राजनीति के गर्भ से इससे भिन्न चरित्र की राजनीतिक संस्कृति का जन्म असंभव है।

समय की पुकार

राष्ट्रीय राजनीति के इस पतन और दिशाभ्रम का युवा पीढ़ी पर जो परिणाम होना चाहिए था, वही हुआ। युवा पीढ़ी जो समग्र क्रान्ति आंदोलन में उभरकर आगे आई, आपातकालीन

अधिनायकवाद के विरूद्ध हुए संघर्ष में जिसने साहस ओर बलिदान का परिचय दिया, हताश और थके हुए विपक्षी नेतृत्व को सत्ता के सिंहासन पर आरूढ़ करने में अपना योगदान किया, वही युवा पीढ़ी आज फिर से अपने पथ से भटक गई है। योग्य रचनात्मक नेतृत्व के अभाव में वही पुनः निरूद्देश्य आंदोलन, उछृंखलता और विध्वंस के पथ पर बढ़ रही है। युवा पीढ़ी की कर्मशक्ति को रचनात्मक कार्यो में लगाना है तो उसके सामने प्रत्यक्ष आचरण का उदाहरण प्रस्तुत करना होगा। युवा पीढ़ी को यह विश्वास दिलाना होगा कि राज-काज के लिए सत्ता ही सर्वस्व नहीं है। इसी बात को ध्यान मे रखकर मैंने अपने 20 अप्रैल, 1978 के वक्तव्य में विनम्रतापूर्वक सुझाव दिया था कि इस आत्मघाती दिशा को नया मोड़ देने के लिए कुछ वरिष्ठ एवं प्रभावशाली राजनेताओं को स्वेच्छा से सत्ता छोड़कर रचनात्मक कार्य का ठोस उदाहरण युवा पीढ़ी के सम्मुख प्रस्तुत करना चाहिए। विगत 30 वर्षो के अनुभवों के प्रकाश में अब हमें उपर्युक्त कटु सत्य को सार्वजनिक रूप में और

योग्य रचनात्मक नेतृत्व के अभाव में वही पुन: निरूद्देश्य आंदोलन, उछृंखलता और विध्वंस के पथ पर बढ़ रही युवा पीढ़ी की कर्मशक्ति को रचनात्मक कार्यों में लगाना है तो उसके सामने प्रत्यक्ष आचरण का उदाहरण प्रस्तुत करना होगा। युवा पीढ़ी को यह विश्वास दिलाना होगा कि राज-काज के लिए सत्ता ही सर्वस्व नहीं है।

खुले मन से स्वीकार कर, आत्मविश्वास तथा दृढ़ निश्चय के साथ रचनात्मक कार्यशैली के विकास में जुट जाना चााहिए। जनमानस तीव्रता से अनुभव कर रहा है कि उसे अब आन्दोलनात्मक या जोड़तोड़ में प्रवीण नेतृत्व की नहीं, रचनात्मक प्रवृत्ति के एवं रचनात्मक प्रयोगों की अनुभूति की भट्ठी में पके नेतृत्व की आवश्यकता है। अतः हमें रचनात्मक कार्यप्रणाली का ही अवलंबन करना होगा। यह कार्यप्रणाली समाज में से रचनात्मक प्रवृति के युवा नेतृत्व को आकर्षित कर सकेगी। आज यही देश की आवश्यकता है।

मेरा संकल्प

यहाँ प्रश्न खड़ा होता है कि आज की स्थिति में इस कठिन दायित्व को कौन संभाले? लोकनायक के स्वास्थ्य की वर्तमान स्थिति को देखते हुए उन पर यह बोझ डालना उनके प्रति अन्याय होगा। लोकनायक के आदर्शो के प्रति सच्ची आस्था रखने वाले लोगों को ही अब यह दायित्व ग्रहण करना होगा और अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगाकर उनके जीवनकाल में ही रचनात्मक लोकशक्ति के निर्माण के उनके स्वप्न को साकार करना होगा। यह स्मरण कर मुझे बड़ा गर्व और संतोष का अनुभव होता है कि लोकनायक के समग्र क्रान्ति के आह्वान की ओर सर्वप्रथम आकर्षित

होने वाले मुट्ठी भर राजनीतिक कार्यकर्ताओं में मैं भी एक था। अनेक वर्षो से चुनाव राजनीति की प्रक्रिया का अभिन्न अंग होने के बाद भी समग्र क्रान्ति के आह्वान की ओर अपने आर्कषण का मूल खोजने की दृष्टि से जब मैं अपने अतीत को टटोलने की कोशिश करता हूँ तो मुझे दिखाई देता है कि जिस संगठनात्मक प्रक्रिया के माध्यम से सार्वजनिक जीवन में मेरा प्रवेश हुआ था वह मूलतः रचनात्मक तथा उदात्त जीवनमूल्यों के आधार पर सर्वागीण राष्ट्रनिर्माण के एकमेव लक्ष्य से प्रेरित था। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सन् 1950 में मैंने यदि राजनीति में प्रवेश किया तो स्वयं चुनाव लड़कर सत्ता प्राप्त करने के हेतु से नहीं, अपितु राजनीति और राजसत्ता को राष्ट्रनिर्माण का रचनात्मक माध्यम बनाने के प्रयत्नों में अपना विनम्र योगदान देने की इच्छा से मार्च 1977 में पहली बार मुझे श्रध्देय जेपी के आदेश के कारण चुनाव के मैदान में उतरना पड़ा। वह भी आपातकालीन अधिनायकवाद के द्वारा उत्पन्न आतंक और भय की चुनौती को स्वीकार करने की विवशता के कारण ही।

वर्तमान राजनीतिक कार्यप्रणाली का 28 वर्ष तक अंतरंग परिचय प्राप्त कर लेने के पश्चात् अब मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि प्रचलित राजनीति के माध्यम से न तो रचनात्मक नेतृत्व का उभरकर आना संभव है और न राजसत्ता का रचनात्मक उपकरण बन पाना। इसके हल के लिए वर्तमान दलगत राजनीतिक कार्यप्रणाली के स्थान पर किसी वैकल्पिक रचनात्मक कार्यप्रणाली की खोज करनी होगी। अपनी अल्प क्षमता और दुर्बलताओं से अवगत होते हुए भी मैं अपनी शेष आयु को इस खोज कार्य के लिए ही समर्पित करने की इच्छा रखता हूँ। स्वाभाविक ही, इसके लिए मुझे वर्तमान राजनीतिक दायित्वों से स्वयं को मुक्त करना होगा और चुनाव राजनीति से संबंध-विच्छेद करना होगा। मैं जानता हूँ कि यह कहने में जितना सरल, करने में उतना ही कठिन है।

मेरी ईश्वर से प्रार्थना है कि वह मेरे इस कठिन व्रतपालन के संकल्प को आवश्यक बल प्रदान करे।

यहाँ प्रश्न उठ सकता है कि मेरे रचनात्मक प्रयोगों का स्वरूप एवं कार्यक्षेत्र क्या होगा? मेरी भावी कार्यप्रणाली क्या रहेगी? इस संबंध में मुझे यह जानकारी देते हुए प्रसन्नता होती है कि ईश्वरीय प्रेरणा से उत्तर प्रदेश के गोण्डा जिले में कुछ माह पूर्व एक रचनात्मक प्रयोग प्रारंभ कर चुका हूँ। इन सब रचनात्मक गतिविधियों के केन्द्र का नाम जयप्रभा ग्राम रखा गया है।

"ग्रामोदय" के इस प्रयोग के निम्नलिखित लक्ष्य निर्धारित किये गये हैं :-

- श्रमप्रधान विकेन्द्रित अर्थव्यवस्था के राष्ट्रीय आदर्श को ध्यान में रखते हुए कृषि एवं औद्योगिक उत्पादन वृद्धि के लिए आधुनिक विज्ञान एवं टेक्नोलॉजी को भारतीय स्थिति के अनुरूप विकसित करना।
- आर्थिक विषमता को मिटाते हुए समृद्ध एवं आत्मनिर्भर ग्रामजीवन की रचना करने की दृष्टि से भूमि संबंधों का पुनर्निर्धारण करना एवं कुटीर उद्योगों को लोकप्रिय बनाना।
- जातिवाद, साम्प्रदायिकता एवं अस्पृश्यता आदि के भेदों को मिटाकर समरस, सौहार्दपूर्ण एवं परस्पर सहयोगी सामाजिक जीवन का निर्माण करना।
- प्रत्येक व्यक्ति की भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए, नैतिक विकास के पथ पर बढ़ने के लिए अनुकूल वातावरण उत्पन्न करना।

व्यक्ति के आर्थिक, सामाजिक एवं नैतिक विकास के विविध लक्ष्यों पर आधारित उपरोक्त कार्यक्रम को एक वाक्य अर्थात् "सर्वागीण विकास के माध्यम से समग्र परिवर्तन" के अन्तर्गत रखा जा सकता है।

हमारा प्रयत्न है कि गोण्डा जिले के प्रयोग के माध्यम से कृषि विकास एवं ग्रामीण औद्योगीकरण के माध्यम से बेकारी उन्मूलन कर विषमतारहित समृद्धिशाली जनजीवन का विकास का अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत करना। इसी प्रकार के अनेक अन्य प्रयोगों को प्रारंभ करने की आवश्यकता है। इन सभी प्रयोगों का दायित्व युवा पीढ़ी के कन्धों पर सौंपना होगा। इसके लिए उसमें समाज के पिछड़े, उपेक्षित एवं दुर्बल वर्गो की जिन्दगी में झांकने, उनके साथ समरस होने एवं उनके सुख-दुख में सहभागी बनने की तड़पन जगानी होगी। इस कार्य में मुझे कितनी सफलता मिल पाएगी, यह कह पाना कठिन है। किन्तु यदि राष्ट्रीय पुनर्निमाण के इस कार्य को करते हुए मैं कुछ संवेदनशील युवा अन्तःकरणों को इन रचनात्मक प्रयोगों के अभियान के पथपर आकर्षित कर सका तो मैं अपने जीवन को सार्थक मानूँगा और मेरे सन्तोष के लिए यही र्प्याप्त होगा। इन्हीं शब्दों के साथ मैं स्वयं को रचनात्मक कार्यो के लिए समर्पित करता हूँ और राजनीतिक क्षेत्र के अपने उन सभी सहयोगियों से क्षमा मांगता हूँ जिन्हें अनजाने में मेरे किसी शब्द प्रयोग, व्यवहार या निर्णय से कोई मानसिक कष्ट पहुँचा हो। मुझे विश्वास है कि राष्ट्रसेवा के इस दुर्गम और अनजाने पथ पर कदम बढ़ाते समय मेरे आज तक के सभी सहयोगियों, मित्रों और समस्त देशवासियों के स्नेह और सहयोग का वरदहस्त मेरी पीठ पर सदैव विद्यमान रहेगा। अपनी जीवनयात्रा के इस अन्तिम चरण में वही मेरा एकमात्र पाथेय होगा।

।। जय भारत।।

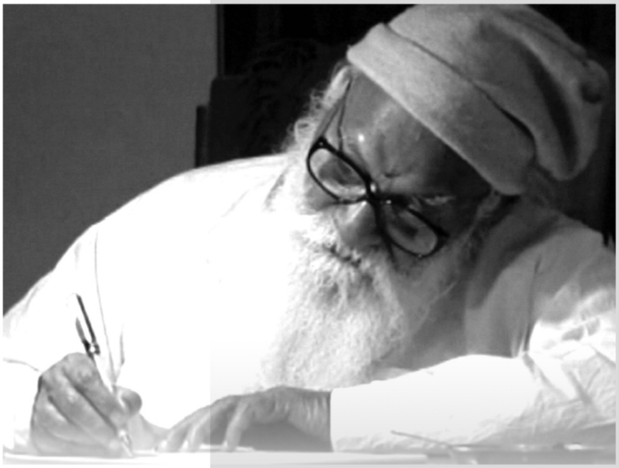

युवा वर्ग पर नानाजी को बहुत भरोसा था उनका मानना था कि देश के युगानुकूल व समयानुकूल पुनरोत्थान की वाहक सिर्फ युवा पीढ़ी ही हो सकती है। अपने जीवनकाल के अंतिम पांच वर्षों में नानाजी ने बार-बार, अलग-अलग विषयों पर युवाओं का आह्वान किया, आओ बदलाव के वाहक बनो! कुछ चुने हुए पत्र विचार-मंथन के लिए ....

नानाजी की पाती युवाओं के नाम

1

प्रिय युवा बंधुओं और बहनों, 24 दिसंबर, 2004

मैं यह पत्र गहरे दुःख और क्षोभ के साथ, परंतु पूरी जिम्मेदारी के भाव से लिख रहा हूं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए हमारा संघर्ष काफी यातनापूर्ण था और बहुत लंबे काल तक चलता रहा। इसके लिए देश के लाखों नौजवानों ने अपने प्राणों की आहुति दी। परंतु, इस सबके बावजूद इसकी परिणति खंडित भारत के रुप में हुई।

हमने संसदीय लोकतंत्र को चुना और मानव अधिकार के मूल तत्वों को अपने संविधान में शामिल किया। इसी संविधान ने केंद्र तथा राज्यों में विधायिका की व्यवस्था दी जो देशभर में एक संवदनशील तथा उत्तरदायी शासन सुनिश्चित कर सके। दुर्भाग्य से इसकी परिणति एक ऐसे राजनीतिक नेतृत्व के रुप में हुई जिसने लोकतंत्र की मूल भावना से ही धोखा किया। यह राजशाही के संस्थानों की याद दिलाता है। स्थिति शायद उससे भी बुरी बनी है।

हमारे एक तिहाई से ज्यादा देशवासी अत्यंत गरीबी से जुझ रहे हैं। वे अपने मूलभूत अधिकारों से भी वंचित है। लगभग आठ करोड़ युवक-युवतियां बेरेजगारी की यातनाएं सहने के लिए मजबूर हैं। वहीं दूसरी ओर हमारे राजनीतिक नेतागण, विशेषकर हमारे चुने हुए प्रतिनिधि अधिकाधिक धनवान बनते जा रहे हैं। इसने निश्चित रुप से हमारे लोकतंत्र की प्रतिष्ठा को मिट्टी में मिलाया है।

हमारे एक तिहाई से अधिक देशवासी अत्यंत गरीबी से जूझ रहे हैं। वे अपने मूल भूत अधिकारों से भी वंचित हैं। वहीं दूसरी ओर हमारे राजनीतिक नेतागण अधिकाधिक धनवान बनते जा रहे हैं।

इस सबके ऊपर विडंबना यह है कि ऋण के बोझ तले दबती सरकार जहां बजट घाटे को नियंत्रित करने में नाकाम है वहीं जनता के तथाकथित प्रतिनिधि बेशर्मी से अपनी सुख-सुविधाओं का बोझ देश पर लादते चले जा रहे हैं। चूंकि विभिन्न राज्य सरकारों की राजस्व व गैर-राजस्व आय विभिन्न उत्तरदायित्वों की पूर्ति में चुक जाती है, इसलिए उन्हें विकास कार्यों के लिए आंतरिक व बाहरी कर्ज का सहारा लेना पड़ता है। इस तरह सरकारों के लिए विकास की प्राथमिकता दूसरे पायदान पर आती है।

वर्ष 2003-04 में केंद्र सरकार का आंतरिक व विदेशी कर्ज क्रमशः 11,34,020.35 करोड़

रुपये था। वहीं इस राशि पर केवल ब्याज के रुप में वर्ष 2003-04 में 1,24,554-92 करोड़ रुपये की मोटी रकम खर्च की गई थी।

राज्य सरकारों पर भी इस समय 7,91,400 करोड़ रुपये की भारी भरकम कर्ज का बोझ है। प्रतिवर्ष इन राज्यों को अन्य गैर उत्पादक कार्यों के अलावा ऋण के इस बोझ को कम करने के लिए भी भारी भरकम धनराशि खर्च करनी पड़ती है। इसने एक ऐसे दुष्चक्र को जन्म दिया है जिससे न केन्द्र सरकार और न ही राज्य सरकारें बाहर आ पा रही हैं।

आगामी अनुच्छेद इस दुःखद स्थिति की कहानी बयान करते हैं। संसद सदस्यों के वेतन और भत्तों के लिए 1954 में लागू किए गए कानून में 2002 तक 25 संशोधन किए जा चुके हैं। जाहिर है, इनका एकमात्र उद्देश्य तथा भावना सांसदों के वेतन, भत्तों, पेंशन व अन्य सुविधाओं में बढ़ोतरी करना ही था। कभी भी इस कानून की समीक्षा का प्रयास नहीं किया गया। ना ही सरकारी कर्मचारियों के वेतन निर्धारण के लिए वेतन आयोगों द्वारा हर दस वर्ष में अपनाई जाने वाली नीति की तरह मध्यम व दीर्घकालिक दृष्टि से निर्णय किया गया। इसकी निरंतरता में तदर्थवाद की झलक ही मिलती है जिसका सीधा लाभ इन संसद सदस्यों को ही मिलता है। कोई भी परिवर्तन (बेशक उत्तरोत्तर वृद्धि) करने के लिए केवल संसद के दोनों सदनों की संयुक्त समिति की अनुशंसा की जरुरत होती है। बिना किसी अपवाद के इस मामले में संसद की अनुमति महज औपचारिकता होती है। आम आदमी की समस्याओं और जनकल्याण से जुड़े मामलों पर विभिन्न राजनैतिक मतों में भले ही कभी आमराय न बनती हो, परंतु यह एक ऐसा विषय है जिस पर सभी राजनीतिक दल, चाहे वामपंथी हों, दक्षिण पंथी या मध्यमार्गी, सभी एक सुर में बोलते नजर आते हैं। आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि पिछले 50 सालों में सांसदों के वेतन और भत्तें 90 गुना बढ़ गए हैं। यह लोकतंत्र का मजाक नहीं तो और क्या है?

यह न केवल आर्थिक व्यवहार के नियमों का उल्लंघन है बल्कि प्रशासनिक विधान की भी अवहेलना है। किसी भी ऐसी आवश्यकता जिसके लिए सरकारी खजाने से धन जाता हो, उसकी जाँच व अनुमति का काम ऐसी इकाई को करना चाहिए जिस पर इन निर्णयों का सीधा प्रभाव न पड़ता हो। नियम बदलने के अधिकारों से लैस कुछ सौ लोग इनका इस्तेमाल अपने निजी लाभ के लिए भी करने में नहीं हिचकते। दुनिया में कहीं

भी संसदीय लोकतंत्र के अपहरण की इतनी घिनौनी मिसाल शायद ही कहीं मिलेगी।

पत्र के साथ संलग्न आंकड़ों पर नजर डालें तो मालूम पड़ता है कि सरकार हर महीने सांसदों को वेतन व भत्तों के रुप में लगभग 36,000 रुपये देती है, जिसमें से केवल 12,000 रुपये का वेतन ही आयकर के दायरे में आता है। इसे भी सरकारी बचत योजनाओं में थोड़े से निवेश से बचाया जा सकता है। सांसद दिल्ली में रहने के लिए नाममात्र का लायसेंस शुल्क अदा करते हैं जो इन आवासों की बाजार किराया दरों का नगण्य अंश है। यदि मुत आवास, फोन कॉल्स (एसटीडी कॉल सहित) मोबाइल फोन, मुफ्त बिजली, पानी चिकित्सा सुविधा, निशुल्क उच्चतम श्रेणी की हवाई तथा रेल यात्रा का आर्थिक मूल्य जोड़ें तो एक सांसद पर मासिक खर्च कम-से-कम तीन लाख रुपये होता है। मोटे तौर पर यह एक भारतीय की सालाना प्रतिव्यक्ति आय का 150 गुना है। इसके अलावा कई अन्य प्रत्यक्ष खर्च भी है।

राज्य सरकारें भी चूंकि केन्द्र का ही प्रतिबिंब हैं अतः यदि राज्यों द्वारा वर्तमान व भूतपूर्व विधायकों के वेतन, भत्ते, पेंशन व अन्य सुविधाओं पर खर्च की जाने वाली राशि जोड़ें तो भारतीय लोकतंत्र की कीमत का आंकड़ा बहुत ही विराट होगा, सुरसा के मुंह से भी बड़ा, क्योंकि इस समय विभिन्न राज्यों की विधानसभाओं तथा विधान परिषदों में सदस्यों की संख्या 5,269 है। इस तरह की फिजूलखर्ची लाकतंत्र के मूलभूत सिद्धांत के खिलाफ है, जो आम आदमी के लिए शांति, सुख समृद्धि और न्याय सुनिश्चित करने वाली प्रशासनिक व्यवस्था स्थापित करने की बात करता है। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि राजशाही उस समय अलोकप्रियता तथा घृणा का केन्द्र बन गई थी, जब राजा द्वारा अपने अधिकारों का दुरुपयोग प्रजा के लिए असहनीय हो गया था। शासकों ने राजस्व आय का बड़ा भाग अपने ऐशो-आराम और भोग विलास के लिए खर्च करना शुरु कर दिया था जबकि लोगों की परेशानियां वहीं-की-वहीं थी।

साठ के दशक में भारत सरकार ने प्रिवी पर्स इस तर्क के साथ खत्म कर दिया था कि इसे जारी रखना औचित्यहीन है क्योंकि वर्तमान व्यवस्था में राजा/राजकुमार लोक कल्याण के किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति नहीं करते हैं। लेकिन आज सांसदों, पूर्व सांसदों, पूर्व प्रधानमंत्रियों व पूर्व राष्ट्रपतियों और पूर्व उपराष्ट्रपतियों को मिलने वाले भत्ते व सुख सुविधाएं भी इसी 'प्रिवी पर्स' का ही नया अवतार नजर आते हैं।

यहां यह उल्लेखनीय है कि पिछले वर्ष मंत्रिपरिषद व प्रधानमंत्री पर खर्च की गई धनराशि 122.52 करोड़ रुपये थी, जो लोकसभा के कुल खर्च का आधा और राज्य सभा पर खर्च होने वाली राशि से 30.39 करोड़ रुपये ज्यादा था। इस पर यदि एसपीजी (विशेष सुरक्षा समूह) पर होने वाले 79.46 करोड़ रुपये के खर्च को भी जोड़ा जाए तो यह लोकतंत्र हमारी मंत्रिपरिषद, संसद और राष्ट्रपति कार्यालय को बेहद खर्चीले लोक संस्थान बना देता है।

मैं राष्ट्रपति को इस विवाद में नहीं घसीटना चाहता। अतः उनके व्यक्तिगत वेतन व सुविधाओं पर कुछ नहीं कहूंगा परंतु मैं इस बात पर दुःखद आश्चर्य जरूर प्रकट करूंगा कि जब देश में एक ओर करोड़ों लोग बिना किसी छत के जीने को मजबूर हैं, ऐसे में राजप्रासादनुमा राष्ट्रपति भवन के रखरखाव पर इतना धन खर्च किया जाए। मैं इसमें कोई औचित्य नहीं देखता कि रहने के लिए एक व्यक्ति या परिवार को 350 कमरों वाला घर दिया जाए।

उपरोक्त तथ्यों व स्थितियों ने लोगों के मन में संसद के प्रति सम्मान को कम करने में अपना योगदान दिया है। इस संदर्भ में इस बात पर भी जोर देना होगा कि संसद की व्यवस्था का निर्धारण करने वाले संविधान के अनुच्छेद 79 से 123, जिसमें संसद का विशेषाधिकार भी शामिल है, ऐसी किसी व्यवस्था की बात नहीं करते जो इसके नियंत्रण व संतुलन को भीतर की बजाए बाहर से संचालित कर सके। दुःख है कि अभी यह काम होना बाकी है, अतः इस दिशा में पहला कदम उठाने की जरूरत है। इसमें सांसदों को केवल लाभ उठाने वाला बनाने से रोकने के लिए एक आम बहस शुरु करने की जरूरत है। साथ ही इनके वेतन व भत्तों के संबंध में पड़ताल करने की भी आवश्यकता है। ताकि लोगों की नजरों में संसद की खोई गरिमा व प्रतिष्ठा को पुनर्स्थापित किया जा सके।

मेरी यह स्पष्ट धारणा है कि यदि इस तरह की दखलंदाजी पर रोक नहीं लगाई गई तो यह लोकतंत्र की चूलें हिला देगा और जनता के मन में इसके प्रति आस्था कम करेगा। अतः आप सभी बुद्धिजीवियों एवं विचारनायकों से मेरी विनम्र प्रार्थना है कि इस विषय पर गहराई से सोचें और इस मुद्दे को उचित मंच पर उठाएं। ताकि इस संबंध में एक

आज सांसदों, पूर्व सांसदों, पूर्व प्रधानमंत्रियों, पूर्व राष्ट्रपतियों व पूर्व उपराष्ट्रपतियों को मिलने वाले भत्ते व सुविधाएं भी इसी 'प्रिवि पर्स' का नया अवतार नजर आते हैं।

निश्चित परंपरा और संस्थानिक तंत्र स्थापित किया जा सके, जो वैधानिक हो।

परंतु निश्चय ही मैं अपनी बात को निराशा के बिंदु पर खत्म नहीं करना चाहता। दीनदयाल शोध संस्थान द्वारा तैयार व लागू किए गए सामुदायिक व व्यक्तिगत प्रयासों से स्वावलंबन पर आधारित ग्रामीण विकास के चित्रकूट मॉडल ने यह स्पष्ट कर दिया है कि यदि समुचित संस्थनिक सहयोग दिया जाए तो हमारा ग्रामीण समुदाय अपनी आंतरिक समस्याओं से निजात पा सकता है। इतना ही नहीं यह निरंतर विकास के नए सोपान चढ़ सकता है और समकालीन बाजार तथा नवीन तकनीकों का सहारा लेकर स्वरोजगार के नए अवसरों को भी बढ़ावा दे सकता है।

अब समय आ गया है कि विकास की ऐसी नीति अपनाऐं जिसमें जनसक्रियता सुनिश्चित हो और लोकहित के कर्तव्यों को पूरा करने के लिए ऐसा शासन तंत्र हो जिसमें जिम्मेदारी का भाव समाहित हो। इससे हमें अपने लोगों की आंतरिक क्षमताओं तथा कुछ नया करने की उनकी ललक को बढ़ाने में मदद मिलेगी। इसी के द्वारा सामाजिक समानता एवं न्याय आधारित विकास प्राप्त किया जा सकता है। इससे लोकतंत्र पुष्ट हो सकेगा जिसके सहारे विकास के ऊंचे सोपान न्यूनतम खर्च में चढ़ना भी संभव होगा।

मेरा निवेदन है कि गरीबी, अशिक्षा, बेरोजगारी, बीमारियों व सामाजिक बुराईयों को जड़ से खत्म करने के लिए देश कौन सा विकास मॉडल अपनाएं, इस बारे में एक सार्थक आम बहस शुरु की जानी चाहिए। दीनदयाल शोध संस्थान ने एक ऐसा मॉडल विकसित किया है जिसमें आम लोगों की पहल और उनके पुरुषार्थ को बढ़ावा दिया जाता है। इसी भावना और उत्साह को लेकर यह संभव हुआ है कि आज चित्रकूट के आस-पास के 80 गांवों ने-

- *शून्य बेरोजगारी*
- *शून्य गरीबी*
- *शून्य कुपोषण*
- *शून्य मुकदमेबाजी*
- *और साफ-सुथरे व हरे-भरे गांवों*

के सपने को सच कर दिखाया है। वह भी निर्धारित समय सीमा से पूर्व।

उल्लेखनीय है कि दीनदयाल शोध संस्थान द्वारा चलाई जाने वाली योजनाओं में गरीब परिवारों, चाहे वो किसी भी जाति या संप्रदाय से क्यों न हों, की सक्रिय भूमिका से उन्हें स्वावलंबी बनाने के प्रयासों में दुर्लभ पूरकता भी हासिल कर ली है। यह भी महत्त्वपूर्ण है कि इन लक्ष्यों को संस्थान ने निर्धारित समय सीमा से पहले ही पूरा कर लिया। संस्थान अब इस दशक के अंत तक इन लक्ष्यों को 500 गांवों में प्राप्त करने की ओर अग्रसर है। और यह चमत्कार किसी सरकारी एजेंसी ने नहीं किया है। इलाके के लोगों ने दीनदयाल शोध संस्थान के निस्वार्थी व उत्साही कार्यकर्ताओं के निकट सहयोग से इस महती लक्ष्य को पूरा किया है। संस्थान तो केवल प्रेरणा देने का काम करता है। वास्तविक ऊर्जा व क्षमता तो लोगों के भीतर है।

पुरानी पीढ़ी के कई उद्योगपतियों को याद होगा कि सन् 1977 में सक्रिय राजनीति से सन्यास लेते समय मैंने उनसे सामुदायिक विकास के कार्यों में सक्रिय भागीदारी देने का आग्रह किया था। मेरा हमेशा से मानना रहा है कि देश के उद्योगपतियों में विलक्षण प्रबंधकीय प्रतिभा और क्षमताएं हैं। औद्योगिक घरानों की उत्तरोत्तर प्रगति में उनके ये गुण परिलक्षित भी होते हैं। लेकिन सामाजिक व सामुदायिक गतिविधियों में उनका इस्तेमाल नहीं हो रहा है। 1977 में मैंने जब फिक्की के तत्कालीन अध्यक्ष श्री हरिशंकर सिंघानिया से अपने संगठन के माध्यम से उद्योगपतियों को सामुदायिक विकास गतिविधियों के लिए प्रेरित और संगठित करने का निवेदन किया था। उसके परिणामस्वरूप कई उद्योगपति अपनी व्यक्तिगत क्षमताओं व प्रयासों के साथ इसके लिए आगे भी आए थे। परंतु दुर्भाग्य से यह प्रयास एक सामूहिक गति नहीं प्राप्त कर पाया। मैं एक बार पुनः सभी औद्योगिक व व्यापारिक संगठनों का आह्वान करता हूं कि वे आगे आएं और विकास के इस महायज्ञ में योगदान देने के लिए अपने सदस्यों को प्रेरित करें।

शुभाकांक्षी

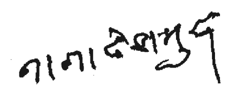

(नाना देशमुख)

प्रिय युवा बंधुओं और बहनों,

2

24 दिसंबर, 2004

गुलामी के पूर्व हमारी न्याय व्यवस्था बहुत सरल, तत्काल निर्णायक एवं संतोषप्रद हुआ करती थी। वह ''पंचमुखी परमेश्वर'' के नाम से जानी जाती थी। फलस्वरुप, ग्रामीण जीवन सद्भावनापूर्ण, सहयोगात्मक और सामंजस्यपूर्ण था।

मुस्लिम हुकूमतों के काल में शासकों ने शहरों एवं कस्बों में न्याय-व्यवस्था में कुछ परिवर्तन अवश्य किए थे। किन्तु ग्रामीण न्याय-व्यवस्था पूर्ववत् चलती रही।

सन् 1765 के बक्सर युद्ध में प्राप्त विजय के बाद अंग्रेजों ने अपनी शासन प्रणाली लागू करना प्रारंभ किया। राजस्व वसूली तथा न्याय-व्यवस्था पर अपना शिकंजा जमाना शुरू किया। बंगाल, बिहार और उड़ीसा को मिलाकर विशाल भू-भाग को जिलों की इकाईयों में बांटा गया। हर जिले के लिए अंग्रेज कलेक्टर नियुक्त किए गए। वे राजस्व वसूली के साथ जिला मजिस्ट्रेट का भी काम करने लगे। आगे चलकर दीवानी और फौजदारी अदालतों की जिला स्तर पर स्थापनाएं हुईं। सभी कचहरियों में अंग्रेजी भाषा प्रचलित की गई। वकीलों की आवश्यकता जरूरी हुई। 1828 से लार्ड विलियम बेंटिंग के जमाने से वकीलों का व्यवसाय नियमित रुप से चल पड़ा। वही सिलसिला अबाधित गति से आज भी चल रहा है। अंग्रेजी भाषा का प्रभुत्व स्वतंत्र भारत में भी बना हुआ है।

सुदैव से मेरा जन्म छोटे से ग्राम में हुआ और मेरा जीवन-कार्य भी ग्रामीण अंचल ही बना हुआ है। फलस्वरुप, मेरा जिला कचहरियों में जाना-आना होता रहा है।

जिला कचहरियों में 94 प्रतिशत से भी अधिक भीड़ ग्रामवासियों की ही रहती है। वे अपना-अपना मुकदमा लेकर वकीलों को घेरे रहते हैं।

वकील वर्ग सुशिक्षित, कानूनों का जानकार, वाद-विवाद में पटु तथा नेतृत्व में अग्रणी है। महात्मा गांधी, मोतीलाल नेहरु, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद आदि अनेक वकीलों ने स्वातंत्र्य संग्राम का नेतृत्व किया था। आजादी पाने के बाद भी यह वर्ग राजनीति में प्रमुखता प्राप्त किए हुए है।

ग्रामवासी आपस में मुकदमेबाजी के द्वारा स्वयं को बर्बाद कर रहे हैं, यह देखते हुए भी वकील वर्ग उन्हें समझाता नहीं कि वे इस मुकदमेबाजी की बर्बादी से स्वयं को बचा लें। अपितु उनकी मुकदमेबाजी में ही वह अधिक रूचि रखता है। कारण, वही उसने आजीविका का साधन बना रखा है। ग्रामीणों की दयनीय दशा जानते हुए भी वह उनसे अधिक मेहनताना वसूलने में लगा रहता है। ग्रामवासी कर्जदार होते हुए भी हजारों वकीलों के सुखमय जीवन का बोझ ढोते आ रहे हैं। यह वकील वर्ग 1828 से गरीब ग्रामीण आबादी का सतत् शोषण करता आ रहा है। इस गंभीर समस्या की ओर हमारे नेतृत्व ने अपनी आँखें मूंद रखी हैं। यदि यही स्थिति बनी रही तो सरकारों द्वारा बनाई गई ग्राम विकास की योजनाएं क्या कभी देश की सत्तर प्रतिशत से अधिक ग्रामीण आबादी को खुशहाल बना पाएंगी?

देश की लगभग तीन-चौथाई आबादी की परवाह न करने वाली राजनीति में बने रहना मुझे असह्य हुआ और मैं ग्रामोदय की दिशा में चल पड़ा। ग्राम विकास के काम की मुझे जानकारी नहीं थी। उस दिशा में मैंने कभी काम किया ही नहीं था। अतः ग्रामवासियों के बीच रहकर उनकी समस्याएं समझना तथा आवश्यकताओं को पूर्ण करना जरूरी था। अतः मैंने अपनी गतिविधियों का केन्द्र ग्रामों को बनाया।

गांव-गांव घूमकर मैं ग्रामवासियों से विचार-विनिमय करने लगा। गांवों में कृषि ही प्रमुख व्यवसाय है। ग्रामवासी दिन में अपने-अपने खेतों में काम करने जाते हैं। उनसे विचार-विनिमय करने का समय रात में ही संभव होता है। अतः मुझे ज्यादातर रातें गांवों में ही बितानी पड़ती थी।

एक दिन एक वृद्ध ग्रामवासी ने मुझसे कहा, ''आप बेकार परेशान हो रहे हैं। आप

सरकार द्वारा चलाई गई 'राजीव गांधी जल प्रबंधन योजना' जैसी उपयोगी योजनाएं व्यावहारिक धरातल पर साकार नहीं होतीं। कारण, राजनेता और नौकरशाह इसे सफल बनाने में रूचि नहीं रखते।

समझ नहीं पाते कि जिन्हें भग.वान ने ही कंगाल बनाया है, उन्हें क्या इंसान खुशहाल बना सकता है? आप इस काम में मत पड़िए।'' ग्रामवासियों को अपने भाग्य को कोसते हुए नि.राशाग्रस्त होकर बैठे देख मैं बहुत दुःखी हुआ किन्तु हताश नहीं। मैं ग्रामोदय के मार्ग की खोज में लगा रहा।

मई का महीना था। चारों ओर सूखे का माहौल था। गोण्डा से लगभग 17 कि.मी. पर मुझे एक हरी-भरी बगिया नजर आई। मैं उसमें पहुंचा। वह एक माली की बगिया थी। वह माली अपनी लगभग एक एकड़ जमीन से सालभर में विभिन्न प्रकार की सब्जियों की अनेक फसलें उगाता था। अपनी ताजी सब्जियां गोण्डे की सब्जी मंडी में रोज बेचता था। अपनी कमाई में से उसने गोण्डा सब्जी मंडी में एक छोटा-सा मकान बनाकर किराए पर चढ़ाया था। वह खुशहाली की जिंदगी बिता रहा था। उसकी जीवन-गाथा ने मुझे बहुत उत्साहित किया।

दूसरे दिन मैं उस गांव पहुंचा, जहां के बूढ़े किसान ने मुझे बेकार परेशानी से बचने के लिए कहा था। मैंने उस बूढ़े किसान से कहा, ''बाबा! मैं कल एक अचरज देखकर आया हूँ। एक एकड़ भूस्वामित्व वाला बनारसी प्रसाद खुशहाली की जिंदगी जी रहा है।'' संयोगवश वह बूढ़ा बनारसी प्रसाद से पुराना परिचित था। उस बूढ़े ने मुझसे कहा, ''नाना जी! आप शहरी लोग हम ग्रामीणों की हालत समझ नहीं पाते। उस माली के पिता ने अपनी ससुराल से पक्के कुंए सहित वह जमीन पाई थी। वह माली सिंचाई की सुविधा पाकर खुशहाल हो गया है। यदि हमें भी सिंचाई के साधन मिलें तो हम भी उसी प्रकार से खुशहाली की जिंदगी पा सकते हैं।'' उस बूढ़े किसान ने दीनदयाल शोध संस्थान को 'ग्रामोदय' का मार्ग दिखाया। गरीब किसानों के लिए सिंचाई के साधन खोजने में शोध संस्थान जुट गया।

गोण्डा जिले में हिमालय से निकली बारों माह बहने वाली नदियां हैं। वह जिला पानी पर तैरता है। जिले में पचास हजार ट्यूबवैल्स लगाने पर भी भूगर्भ जलस्तर घटेगा नहीं। इसकी जानकारी पाकर दीनदयाल शोध संस्थान ने पांच एकड़ या उससे छोटे जोत वाले बीस हजार किसानों के खेतों में ट्यूबवैल्स लगाने का संकल्प लिया।

जनता पार्टी की सरकार थी। बैंकों से गरीब किसानों को सात हजार रुपयों तक कर्ज पाने की मंजूरी प्राप्त कराई गई। दो साल में सत्ताईस हजार पांच सौ सोलह नलकूप लग गए। जमीन में हजार फुट तक पत्थर का नामोनिशान नहीं है। 98 प्रतिशत से अधिक किसानों ने बैंकों का कर्ज वापस कर दिया।

किन्तु चित्रकूट इलाके की परिस्थिति एकदम भिन्न है। इसका अधिकांश इलाका विंध्याचल पहाड़ियों से घिरा है। वर्षा का पानी बह जाता है। अनेक गांवों में पीने का पानी भी उपलब्ध नहीं होता।

गांव के सभी ग्रामवासी सामूहिक प्रयास करें, तभी बरसात का पानी रोककर साल भर के लिए पानी का संचय किया जा सकता है। लेकिन गांवों में मुकदमेबाजी और पार्टीबाजी के कारण सामूहिक प्रयास संभव नहीं होते।

अभी तक चित्रकूट के चारों ओर के 80 गांव विवादमुक्त हुए हैं। गांव के लोगों ने तय किया है कि वे अपना विवाद लेकर अब कचहरी में नहीं जाएंगे, आपस में ही मिल-बैठ कर सुलझा लेंगे।

सरकार के द्वारा चलाई गई ''राजीव गांधी जल प्रबंधन योजना'' जैसी उपयोगी स्कीमस् व्यावहारिक धरातल पर साकार नहीं होती। कारण, राजनेता और नौकरशाही इस स्कीम को सफल बनाने में तनिक भी रूचि नहीं रखती। दीनदयाल शोध संस्थान ने चित्रकूट इलाके में इस योजना का सदुपयोग करने का निश्चय किया। गांव-गांव में ग्रामवासियों की बैठकें की, उन्हें यह योजना समझाई। ग्रामवासियों को मिलकर काम करने के लिए राजी किया। प्रयोग सफल हुए। परिणामस्वरुप, ऐसे गांवों में जहां पीने का पानी भी उपलब्ध नहीं था, वहां भी सबके खेतों की सिंचाई संभव हुई। निराशाग्रस्त किसानों के जीवन में सिंचाई के प्रबंध के कारण खुशहाली के दिन दिखाई देने लगे। वर्षा के भरोसे जहां एक फसल भी ठीक से उगाना अनिश्चित था, वहां सिंचाई के प्रबंध के कारण सभी किसान आराम से साल में दो फसलें उगाने लगे हैं। सभी ग्रामवासियों द्वारा मिलकर काम करने का लाभ ग्रामवासियों को दिखाई देने लगा है।

हर गांव के ग्रामवासियों के मुकदमें कचहरियों में चल रहे थे। आपसी अनबन से

सबका मिलकर काम करना कठिन था। दीनदयाल शोध संस्थान के ''समाजशिल्पी दम्पतियों'' ने गांव के बुजुर्गों द्वारा ग्रामवासियों को समझाया कि मुकदमों में लगे रहने से जनजीवन में तरक्की संभव नहीं है। अतः आपस में मिल बैठकर हम आपसी विवादों को सुलझा लें। एक बार जब सभी विवाद सुलझा लिए जाएंगें, तब उन सिंचाई परियोजनाओं पर मिलकर काम करना संभव होगा, जिनसे सभी ग्रामवासियों को लाभ होगा।

गांव के लोगों को बुजुर्गों की सलाह जंच गई। गांवों में होड़ लग गई कि हम अपने गांव को विवादमुक्त बनाएंगे। परिणामस्वरुप, अभी तक चित्रकूट के चारों ओर के 80 गांव विवादमुक्त हुए हैं। गांव के लोगों ने सर्वसम्मति से तय किया है कि हम अपना विवाद लेकर अब कचहरी में नहीं जाएंगे, आपस में ही मिल बैठकर सुलझा लेंगे। गांवों में फैली मुकदमेबाजी की सालों से चली आ रही महामारी से मुक्ति पाने का मार्ग सुलभ हो गया है। सन् 2010 तक चित्रकूट के चारों ओर के 500 गांव इसी रुप में विकसित होंगे।

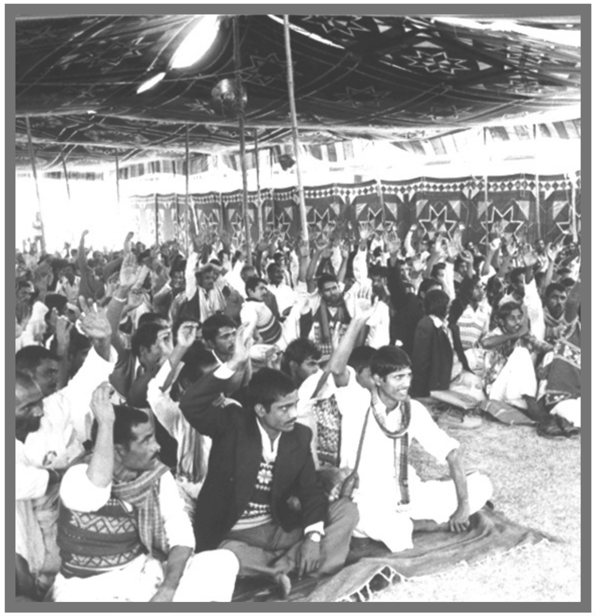

शुभाकांक्षी

(नाना देशमुख)

3

प्रिय युवा बंधुओं और बहनों,

24 दिसंबर, 2004

विदेशी शासकों के प्रति आक्रोश और संघर्ष अधिकाधिक उग्र बनाने के लिए व्यापक जन-आंदोलन करना आवश्यक था। शौर्यपूर्ण गीतों की रचना करना और प्रभावी ढंग से गाना तथा जोशीले भाषणों से नौजवानों में उत्साह, त्याग और बलिदान की भावनाएं जगाना जरुरी था। विदेशी शासकों के दमनकारी कदमों में अवरोध निर्माण करने के लिए संचार माध्यमों में खराबी उत्पन्न करना भी युक्तिसंगत था। ये सब कार्य स्वराज्य प्राप्ति तक ही सीमित होने चाहिए थे।

स्वराज्य प्राप्ति के बाद ''निर्माण युग'' प्रारंभ होना चाहिए था। राष्ट्र नवरचना में हर नागरिक को सहयोगी बनाना आवश्यक था। देश सदियों तक गुलामी में जकड़ा हुआ था। स्वतंत्र देश के नागरिकों के कर्तव्य की जानकारी उपलब्ध कराना नेतृत्व का दायित्व था। स्वावलंबन का स्वभाव विस्मृत हुआ था। सहअस्तित्व एवं सामाजिक दायित्व की भावना लुप्त हुई थी। आबादियों में परस्पर सहयोग की आदत शेष नहीं थी। पारतंत्र्य के कारण नागरिक सत्ताभिमुखी बने थे।

स्वराज्य पाते ही देश के नागरिकों में गुलामी के कारण आयी इन खराबियों को दूरकर सहअस्तित्व, परस्पर पूरकता एवं स्वावलंबन का स्वभाव विकसित करने के कार्य को प्राथमिकता दी जानी चाहिए थी। दुर्भाग्य से आजादी के गत उनसठ सालों में इस अनिवार्य कार्य की घोर उपेक्षा की गई और अपनी ही सरकार को विदेशी सरकार जैसा मानकर स्वातंत्र्य संग्राम के काल के विध्वंसात्मक कार्यक्रमों को जारी रखा गया है। कारण, स्वतंत्र भारत के राजनेताओं का लक्ष्य राष्ट्रोन्नति न होकर सत्ता प्राप्ति मात्र बन गया है।

राजसत्ता के लोभ में हमने अपनी मातृभूमि का विभाजन तक स्वीकार किया। सत्य और अहिंसा के पुजारियों ने लाखों निरीह लोगों की हत्याएं होने दीं। असंख्य परिवारों को परंपरागत घरों से उजड़ते हुए शरणार्थी बनने के लिए विवश किया।

सत्ता पाने के लिए अपने ही समाज का विघटन करने में संकोच नहीं किया। इसका

प्रतिफल सभी दलों को भुगतना पड़ रहा है। हर एक दल टूट-फूट का शिकार बना है। इन दलों के चोटी के नेता भी एक-दूसरे को अपराधी घोषित कर रहे हैं। यह बना है स्वतंत्र भारत की राजनीति का चरित्र।

अब चुनाव में लालू वाद, मुलायम वाद, नीतिश कुमार वाद, चौटाला वाद, मायावती वाद, क्षेत्रीयवाद आदि सत्ताप्राप्ति के प्रभावी साधन बने हैं। हिन्दुत्व का अभिमान रखने वालों के पास हिन्दुओं में बढ़ रहे इस बिखराव को रोकने का तथा उसमें एकात्मता निर्माण करने का कोई व्यावहारिक उपक्रम दिखाई नहीं देता। मुस्लिम-तुष्टिकरण के खिलाफ हिन्दू रथ-यात्राएं निकाली जा रही हैं। फलस्वरुप, परोक्ष रुप से मुस्लिम वोट-बैंक की ही कीमत और अधिक बढ़ाने का काम हो रहा है।

1947 के पूर्व नौजवानों में देश के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करने की प्रबल आकांक्षाएं थी। किन्तु स्वतंत्र भारत के नेतृत्व के आचरण के कारण स्वार्थसिद्धि की वृत्ति सर्वव्यापी बन गई है।

स्वतंत्र भारत में सामाजिक और राजनीतिक अवस्था में ही खराबी नहीं आई है, अपितु आर्थिक स्थिति भी बहुत बिगड़ गई है। जोर-शोर से प्रचार किया जा रहा है कि भारत विश्व की एक महाशक्ति बनने की ओर बढ़ रहा है। अमेरिका के राष्ट्रपति भी ऐसा ही प्रमाण-पत्र दे रहे हैं। किन्तु देश में अनेक स्थानों पर किसान दारिद्रय से तंग आकर आत्महत्याएं करने लगे हैं। क्या इन दोनों बातों में कोई मेल है?

स्वतंत्रता पाने के बाद हमने अपने देश की वास्तविकता समझने की आवश्यकता ही अनुभव नहीं की। दूसरे विश्वयुद्ध के बाद अमेरिका और रशिया विश्व की महानतम् शक्तियों के रुप में उभरे थे। स्वतंत्र भारत के नेतृत्व ने इन दोनों की प्रगति की दिशा को अपनाना श्रेयस्कर समझा। उसे मिश्रित अर्थव्यवस्था का नाम दिया। इन दोनों महाशक्तियों में से रशिया अपनी ही नीतियों का शिकार बन प्रतिस्पर्धा में विफल रहा।

अपनाई गई अर्थव्यवस्था भारत की वस्तुस्थिति के आधार पर खड़ी नहीं हुई थी। हमारे पास जनशक्ति का भरपूर भण्डार था। अमेरिका में पूंजीगत शक्ति का आधिक्य था। अतः पूंजी आधारित अर्थव्यवस्था हमारे लिए अनुकूल नहीं हो सकती थी। वैसे भी पूंजी आधारित अर्थव्यवस्था मानवीयता के प्रतिकूल होती है। इसमें इने-गिने लोग ही तरक्की कर पाते हैं। उनकी संपत्ति बेतहाशा बढ़ती है। इसके बावजूद आजकल विश्व में

यही हवा बह रही है। यह जानकर आश्चर्य होगा कि साम्यवादी कहलाने वाले चीन में भी अरबोंपति अस्तित्व में आए हैं, जबकि चीन के देहाती क्षेत्रों में बेकारों एवं गरीबों की संख्या बेकाबू हो रही है। स्वयं अमेरिका में अरबपतियों की संख्या अब 371 हुई है। समाज में बढ़ रही यह बेहिसाब विषमता धीरे-धीरे वहां भी असंतोष के स्वर उठा रही है।

भारत में भी अरबोंपतियों की संख्या बहुत तेजी से बढ़ रही है। वर्ष 2004 में भारत में अरबोंपतियों की संख्या 12 थी, जो वर्ष 2005 के अंत तक 23 अर्थात् दुगनी हो गई है। हमारी आर्थिक प्रगति कुछ ही लोगों के लिए वरदान सिद्ध हो रही है। शेष समाज बेकारी और गरीबी से जूझ रहा है। क्या यह वस्तुस्थिति भारत के महाशक्ति बनने के संकेत दे रही है?

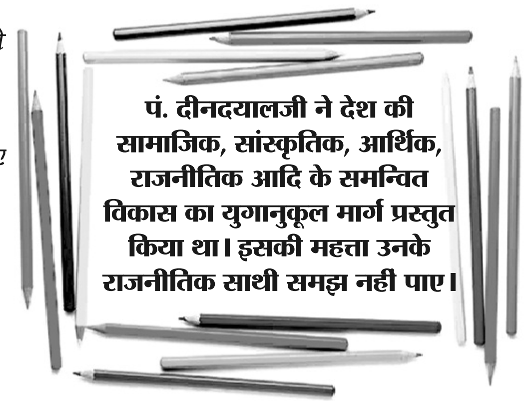

उपर्युक्त विवरण किसी को दोष देने के हेतु से अंकित नहीं किया है। भारत का चतुर्दिक विकास करने के लिए पृष्ठभूमि के रुप में उपर्युक्त परिस्थिति प्रस्तुत है। मानव के नवजात शिशु का विकास एकात्म रुप में होता है। एक-एक अवयव का अलग-अलग विकास नहीं होता। सभी अंग एक-दूसरे के लिए पूरक अर्थात् एकात्म रुप में विकसित होते हैं। उसी को बच्चे का स्वास्थ्यपूर्ण विकास माना जाता है। राष्ट्र-जीवन का विकास भी एकात्म रुप में ही होना चाहिए। इसी मर्म की अनुभूति कर पं. दीनदयाल जी ने ''एकात्म मानव दर्शन'' की खोज की थी। देश की सामाजिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि के समन्वित विकास का युगानुकूल मार्ग उन्होंने प्रस्तुत किया था। इसकी महत्ता उनके राजनीतिक एवं गैर राजनीतिक साथी समझ नहीं पाए, अन्यथा स्वतंत्र भारत की यह अवस्था नहीं होती।

शुभाकांक्षी

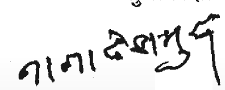

(नाना देशमुख)

4

प्रिय युवा बंधुओं और बहनों,

24 दिसंबर, 2004

आदि काल से ही भारत में लोकतांत्रिक जीवन प्रणाली प्रचलित थी। वह केवल शासन व्यवस्था तक सीमित न होकर सामाजिक जीवन के हर अंग में व्याप्त थी। बहुसंख्य समाज कृषि-कार्य में लगा रहा। अतः अन्नदाता किसान लोकतंत्र का आधारस्तंभ था। उसने अपना स्वावलंबन अंग्रेजों के शासन काल में भी बनाए रखा।

किन्तु 1947 में प्राप्त स्वतंत्रता के बाद हमारी अपनी सरकारों ने लोकतंत्र के प्रहरी किसानों के स्वावलंबन पर भी कुठाराघात किया।

पश्चिम का पूंजीवाद और रूस-चीन का साम्यवाद समान रूप से लोकतंत्र के प्रतिकूल हैं। भारत की सरकारें इन्हीं के झूलों पर झूल रही हैं। लोकतंत्र के मूलभूत आधार को समझने का हमारे शासकों ने प्रयास ही नहीं किया। वे केवल सत्ता-संघर्ष में ही लगे हुए हैं।

पश्चिमी प्रभाव में आकर औद्योगीकरण की धुन में हमारी सरकारों ने खेती का भी अधिकाधिक मशीनीकरण करना श्रेयस्कर समझा। वे बड़े-बड़े किसानों से घिरे रहते हैं। उन्हीं के लिए कृषि के फायदेमंद तौर-तरीके अपनाते हैं। बड़े-बड़े किसानों को मशीनों के आधार पर कृषि-कार्य करना अधिक सुविधाजनक होता है। वही भारत के सरकारों की कृषि-नीति बन गई तथा भारत की कृषि का मशीनीकरण तेजी से बढ़ता गया।

मशीनीकरण के साथ खाद की आवश्यकता पूर्ण करनी थी। औद्योगीकरण के प्रेमी देश हर बात के लिए वैज्ञानिक विश्लेषण कर कदम बढ़ाते हैं। उन्होंने खेती की उर्वरा शक्ति बढ़ाने के लिए कृषि-भूमि का रासायनिक विश्लेषण किया और रासायनिक खादों का आविष्कार कर उसका प्रचलन किया।

इन रासायनिक खादों का तत्कालीन लाभ अवश्य दिखाई देता है, जैसा शराबी को प्रारंभ में अधिक स्फूर्ति अनुभव होती है। किन्तु रासायनिक खादों से फसलों पर कई प्रकार की नई बीमारियों का प्रकोप बढ़ता है। इन बीमारियों के निराकरण के लिए रासायनिक कीटनाशकों का उत्पादन किया जाने लगा। इस प्रकार, औद्योगिक देशों में रासायनिक कृषि-पद्धति प्रचलित हुई।

कृषि-मशीनों का, रासायनिक खादों का तथा रासायनिक कीटनाशकों का उत्पादन पूंजीपतियों के विशालकाय कारखानों में होता है। परिणामस्वरूप, किसानों को अपने स्वावलंबन का बलिदान कर कृषि-उपकरणों के लिए पूंजीपतियों पर निर्भर रहने के लिए मजबूर होना पड़ता है। यह कृषि-पद्धति किसानों के प्रतिकूल तथा पूंजीपतियों के अनुकूल है। पूंजीपतियों को असंख्य किसानों का सहज में शोषण करने की सुविधा उपलब्ध हुई है। अमेरिका में इसका दुष्परिणाम दिखाई नहीं पड़ता है। कारण, वहां कुल आबादी के

मुश्किल से चार-पांच प्रतिशत ही लोग कृषि-कार्य में संलग्न हैं। किन्तु भारत में कुल आबादी की 70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर ही निर्भर करती है। परिणामस्वरूप, कृषि का औद्योगीकरण भारत के लिए अभिशाप सिद्ध हो रहा है।

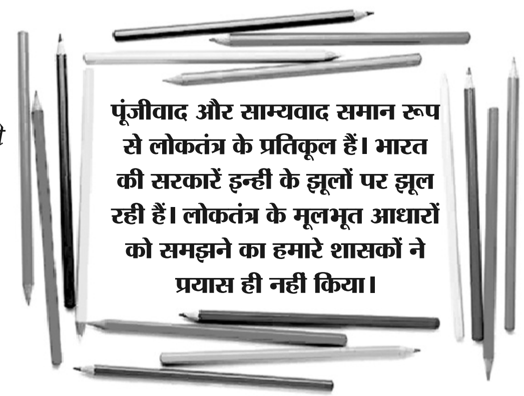

पश्चिम के सम्पन्न देशों ने औद्योगिक विकास को प्राथमिकता दी है। वे उसी आधार पर अधिकाधिक समृद्ध हो रहे हैं। उन्होंने कृषि-कार्य को भी औद्योगिक प्रक्रिया माना था। इस कारण, उन्हें कृषि-कार्य की विशेषता समझ में नहीं आई थी।

अपने देश में कृषि-कार्य आदि काल से होता आया है। दीर्घ काल के अनुभवों के फलस्वरूप हमारी कृषि-पद्धति प्राकृतिक आधार पर विकसित हुई थी।

कृषि-उपज का विकास जैविक प्रक्रिया है। उसका रासायनिक विश्लेषण तो किया जा सकता है, किन्तु रासायनिक आधार पर कृषि-कार्य करना अप्राकृतिक है। इस तथ्य को पश्चिमी वैज्ञानिक समझ नहीं पाए थे।

कृषि-कार्य रासायनिक आधार पर करने के निम्न दुष्परिणाम अब उजागर हो रहे हैं :-

- *यह पद्धति लोकतंत्र के प्रतिकूल और पूंजीपतियों के अनुकूल है।*
- *इससे किसानों का स्वावलंबन समाप्त होता है और उन्हें पूंजीपतियों का हमेशा के लिए मुखापेक्षी बना रहना पड़ता है।*
- *रासायनिक खाद कृषि-भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ाते नहीं, अपितु उर्वरा शक्ति का शोषण कर भूमि को कमजोर बना डालते है। फलस्वरूप, रासायनिक खादों की मात्रा प्रति फसल बढ़ानी पड़ती है। अंत में जमीन की उपजाऊ शक्ति नष्ट होती है।*
- *रासायनिक खादों और कीटनाशकों के उपयोग के कारण कृषि-उपज में विषैले तत्वों का प्रवेश होता है, जो मानव के लिए अनेकानेक रोगों का कारण बनता है।*
- *रासायनिक तत्वों का भूमि में ही नहीं, अपितु भूगर्भ-जल में भी प्रवेश होकर पेयजल प्रदूषित होता है।*

उपर्युक्त दुष्परिणामों के फलस्वरूप उद्योग आधारित सम्पन्न देश अब अपनी कृषि-नीति बदलने के लिए मजबूर हुए हैं। उन देशों में जैविक कृषि-उपज को अधिक दाम देकर खरीदना प्रारंभ हुआ है। किन्तु आधुनिकता के नाम पर पश्चिमी देशों का अंधानुकरण करने वाले हमारे नेतागण अब असमंजस में पड़े हैं। किन्तु क्या वे बड़े-बड़े किसानों और पूंजीपतियों के प्रभाव से स्वयं को मुक्त करा पाएंगे?

भारतीय सभ्यता और संस्कृति विश्व में अपनी अनोखी विशेषता रखती है। वह मानव में कृतज्ञता का भाव अंकुरित व पल्लवित करती है। फलस्वरुप, भारतीय परंपरा सभी उपकारक तत्वों को पूज्य मानती है। वह हिमालय को देवता, गंगा को गंगा-माता, भूमि को भूमाता और गाय को गो-माता के रुप में अनुभव करती है। इस प्रकार, भारतीय संस्कृति प्रकृति का स्वार्थसिद्धि के लिए शोषण करना नहीं सिखाती। अपितु स्वयं को प्रकृति की संतान मानकर प्रकृति का शोषण नहीं - दोहन करती है, मानो बच्चा माँ का दूध पीकर स्वयं को बलवान बनाते हुए माँ को भी सुख पहुंचाता है।

भारतीय परंपरा के अनुसार किसान की कृषि-भूमि के प्रति पूज्य भाव होने के कारण उसका व्यवहार कृषि-भूमि के प्रति संतानवत् रहता रहा है। कृषि-भूमि से प्राप्त धन-धान्य के कारण वह उसकी उर्वरा शक्ति सदा-सर्वदा कायम रखने के लिए जी-जान से जुटा रहता रहा है।

अंग्रेजी शिक्षाप्राप्त उपभोगप्रवण लोग अपनी देशी गायों की महत्ता समझ नहीं पाए। वे गाय को एक दूध देने वाला प्राणी मात्र मानने लगे। ठंडे देशों की गायें अधिक दूध देती हैं। इस कारण, हमारे नेताओं का उन गायों के प्रति आकर्षण बढ़ा। उन्होंने होलस्टिन, स्विस ब्राउन और जर्सी नस्ल के विदेशी सांडों का वीर्य आयात कर अपने देशी गायों का कृत्रिम गर्भाधान करना प्रारंभ किया। वह अभियान व्यापक स्तर पर चलाया। इस कारण, अपने देश के गायों की मूल नस्ल मिलना कठिन हो गया है। उपर्युक्त अभियान के कारण अपने देश का कितना नुकसान हुआ, इसका अनुमान लगाना कठिन है।

देशी गायें भारत की अर्थव्यवस्था की आधारशिला रही हैं। गाय और कृषि एक-दूसरे के

अभिन्न हैं। गायों से मानव को दूध अवश्य मिलता है। किन्तु जैविक कृषि का मूल आधार गोवंश ही है। यह विशेषता हमारे आधुनिक शिक्षा प्राप्त लोगों को ज्ञात नहीं है।

देशी गायों द्वारा प्राप्त बछड़े केवल जैविक कृषि-कार्य के आधार ही नहीं, अपितु यातायात में भी उनका योगदान उल्लेखनीय है। व्यापक स्तर पर बने रेलमार्ग तथा रोडवेज के विशाल विस्तार के बावजूद देश का लगभग पचास प्रतिशत यातायात आज भी बैलों द्वारा ही होता है।

गोवंश खेती के सभी कार्य सम्पन्न करते हुए आवश्यक मात्रा में जैविक खाद भी उपलब्ध कराता है। उसके लिए किसान को अतिरिक्त धन खर्च करना नहीं पड़ता। किसानों को स्वावलंबी बनाने में गोवंश आधारभूत साधन है। खेती के उपकरण गांव के ही बढ़ई और लोहार बना देते रहे हैं। इस कारण, किसान को किसी का मुखापेक्षी बनना नहीं पड़ता था। इस प्रकार, किसान लोकतंत्र का सर्वप्रमुख आधार था।

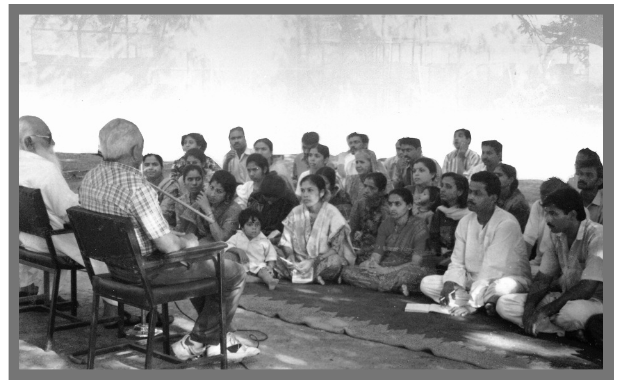

देशी गायों का मूत्र (गोमूत्र) फसलों की बीमारियों का निराकरण करने में समर्थ है। यदि फसलों पर अधिक प्रबल कीटाणुओं का आक्रमण हुआ तो गोमूत्र में कड़वे नीम की पत्तियां दस दिन सड़ाने के बाद वह मिश्रण पानी में तीन प्रतिशत मिलाकर उसका छिड़काव किया तो घातक से घातक रोगों के कीटाणुओं का सफाया होता है। इसके अतिरिक्त फसलों पर बोने के एक माह बाद से फसल में फूल आने तक पानी में दो प्रतिशत शुद्ध गोमूत्र मिलाकर पंद्रह-बीस दिन में एक बार छिड़काव किया गया तो फसल का विकास अधिक गति से होता है, फसल अधिक सतेज और तगड़ी बनती है तथा अधिक उपज प्रदान करती है। ये सब प्रयोगसिद्ध तथ्य हैं। ये गुण देशी गायों के मूत्र में ही पाए जाते हैं।

विदेशी सांडों के वीर्य से संकरित गायों के बछड़े अपने देश की जलवायु में न खेती के काम आ पाते हैं, न यातायात के। पश्चिमी देशों में बछड़ों का माँस लोकप्रिय है। अपने देश में उसे अपनाना संभव नहीं है।

हमारी परंपरा में हर किसान गोपालक रहा है। भारत में गऊ के बिना किसान ढूंढ़ने से भी नहीं मिलता था। हर किसान के यहां दूध, दही, मट्ठा आदि उपलब्ध होता था। फलस्वरूप, देश में कुपोषण की समस्या का नामोनिशान नहीं था। हमारे देश में दूध बेचने की प्रथा थी ही नहीं।

गोवंश धन-धान्य उत्पादन का आधार था। गोवंश का उदर-भरण उन पदार्थों से होता है, जो मानव के लिए अखाद्य हैं। बूढ़ी गाय और बैल कामलायक न रहने पर भी किसान के लिए बोझ नहीं बनते थे। प्रति बूढ़ी गाय या बैल केवल चारा-पानी पाकर रोज कम से कम 13 कि.ग्रा. गोबर देते हैं। इस गोबर का बायो-गैस संयंत्र में उपयोग करने पर ऊर्जा प्रदान करने वाली गैस तथा उत्तम खाद प्राप्त होती है। मरने पर चमड़ा, हड्डियाँ, सींग और खुर के अलग से दाम मिलते हैं। हड्डियों का चूरा जैविक खाद की शक्ति बढ़ाता है।

जैविक खाद से खेती की प्रति एकड़ उपज भी आधुनिक कृषि से अधिक होती थी, इसके प्रमाण इतिहास में मौजूद हैं। अब विश्व में जैविक कृषि-पद्धति अपनाना प्रारंभ हुआ है।

अपने देश के युवाओं को जैविक कृषि का विश्व के लिए अनुकरणीय नमूना प्रस्तुत करने का अनोखा मौका मिला है।

शुभाकांक्षी

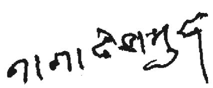

(नाना देशमुख)

5

प्रिय युवा बंधुओं और बहनों,

24 दिसंबर, 2004

सन् 1977 के आम चुनाव में श्रीमती इंदिरा जी की तानाशाही से देश मुक्त हुआ। पार्टी डेमोक्रेसी पूर्ववत् चलने लगी। श्री मोरारजी भाई के नेतृत्व में जनता पार्टी की सरकार बनी। इस क्रांतिकारी परिवर्तन के प्रणेता जयप्रकाश जी' के प्रति सत्ता के मजनुंओं के मन में कृतज्ञता का अपेक्षित भाव दिखाई नहीं दिया। आपातकाल का संकट झेलने के बावजूद वे सत्तासुख भोगने में ही कृतार्थता अनुभव करने लगे। सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक जीवन में आवश्यक परिवर्तन करने की किसी को चिंता नहीं हुई।

दीनदयाल शोध संस्थान ने 1977 की 25 सितम्बर को स्व. दीनदयाल जी की जयंती पर गोण्डा जिले में ''जयप्रभा ग्राम'' की स्थापना की।

जयप्रकाश जी के ''समग्र-क्रांति'' अभियान को आगे बढ़ाए बिना भारत का भविष्य उज्ज्वल बनाना संभव नहीं है, यह दीनदयाल शोध संस्थान की धारणा थी। दीनदयाल जी द्वारा प्रणीत ''एकात्म मानवदर्शन'' की अवधारणा एवं जे.पी. की ''समग्र क्रांति'' की अवधारणा में विशेष अंतर नहीं था। दीनदयाल जी ने एक और पहलू उसमें जोड़ा था। वह था अपनी गतिशील संस्कृति को यथास्थितिवादियों के चंगुल से छुड़ाकर पूर्ववत् गतिमान बनाना। अतः दीनदयाल शोध संस्थान देश के ग्रामीण अंचल में जयप्रकाश जी एवं दीनदयाल जी की अवधारणाओं को साकार करने के प्रयोगों में जुट गया।

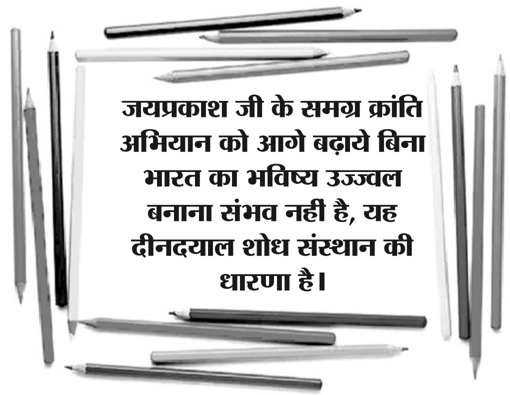

सत्ता-प्राप्ति की आकांक्षा से प्रेरित विभिन्न पार्टियों से बनी जनता पार्टी का अस्तित्व टिकाए रखने की चिंता की अपेक्षा स्वयं सत्ता में शीर्ष पद पाने की ही प्रवृत्ति अधिक प्रबल थी।

1978 के अप्रैल माह के प्रारंभ में मैंने प्रधानमंत्री श्री मोरारजी भाई से सविनय अनुरोध किया था कि वे अब प्रधानमंत्रीत्व का दायित्व स्वयं न लेकर अपने पसंद के किसी योग्य युवा नेता को सौंप दें। इससे उनकी कीर्ति सदा-सर्वदा बनी रहेगी।

मेरे इस प्रस्ताव से मोरारजी भाई नाराज हुए। वे प्रधानमंत्री पद से हटना नहीं चाहते थे। मैंने उनसे विनम्रतापूर्वक कहा कि जनता पार्टी की सरकार अब आपके नेतृत्व में

अधिक दिन टिक नहीं पाएगी। मेरे इस कथन से वे और अधिक क्रुद्ध हुए। मेरे इस प्रस्ताव का पत्र उन्होंने फाड़कर फेंक दिया।

मेरे इस प्रस्ताव से मेरे पुराने जनसंघी साथी भी नाराज हुए। उन्होंने श्री कवंरलाल गुप्ता को मेरे पास भेजा। मैं अपना प्रस्ताव वापस लूं, इसका उन्होंने आग्रह किया।

मैंने उन्हें स्पष्ट शब्दों में कहा कि ''आप लोग बहुत बड़े नेता हैं। आपको अपने पैरों तले से खिसकती जमीन दिखाई नहीं देती। श्रीमती इंदिरा जी ने आपकी पार्टी की कमजोरी पहचान ली है। आपकी पार्टी में संजय गांधी ने जबरदस्त सेंध लगाई है। अतः मोरारजी भाई के नेतृत्व में आपकी सरकार अधिक समय तक चलने वाली नहीं है।'' मेरी बात पर उन्होंने भरोसा नहीं किया। अतः जो होना था, हो गया।

चौधरी चरण सिंह प्रधानमंत्री पद की लालसा में श्रीमती इंदिरा जी के झांसे में आए। मोरारजी भाई की सरकार को धराशायी किया। सब भौंचक्के रह गए। चापलूस अधिकारियों तथा स्वार्थी साथियों की सलाह से देश की हुकूमत चलाने वालों की यही दुर्गति होती है।

सत्ता से वंचित होते ही जनता पार्टी का बिखरना अवश्यंभावी था। भारतीय जनसंघ के नेताओं ने ''भारतीय जनता पार्टी'' के नाम से कार्य करने का निर्णय लिया। 1980 में मुम्बई में ''भारतीय जनता पार्टी'' का प्रथम अधिवेशन हुआ। उसमें दीनदयाल जी के ''एकात्ममानव दर्शन'' को तिलांजली दी गई। गांधीवादी समाजवाद का दर्शन अपनाया गया। इस पर संघ-नेतृत्व ने कोई आपत्ति नहीं की। परिणामस्वरुप, ''भारतीय जनता पार्टी'' अन्य दलों के समान एक और सत्ता-पिपासु पार्टी अस्तित्व में आई।

11 फरवरी, 1968 की प्रातः मुगलसराय स्टेशन की रेल पटरियों से सटा पड़ा दीनदयाल जी का शव पाया गया। संयोगवश, परमपूज्य गुरु जी उस समय बनारस में ही थे। वे पोस्टमार्टम के स्थान पर दीनदयाल जी के शव का अंतिम-दर्शन करने पहुंचे। प. पू. गुरु जी दीनदयाल जी को बहुत मानते थे। उनके मुंह से अनायास शब्द निकल पड़े, ''तुम तो नहीं रहे, तुम्हारे ''एकात्ममानव दर्शन'' का क्या होगा?'' प. पू. गुरु जी

के ये शब्द मेरे अंतःकरण को सतत् चुभते रहते हैं।

संघ-कार्य से लगभग प्रारंभ से जुड़े मा. बाबासाहेब आप्टे परमपूज्य डॉक्टर जी के साथ छाया के समान जुड़े हुए थे। प. पू. डॉक्टर जी की आकांक्षाओं को साकार करना मा. आप्टे जी का जीवन-व्रत था। अपने देशव्यापी समाज को अपना परिवार मानकर तदनुसार संघ स्वयंसेवक अपनी जीवन-रचना करें, यह प. पू. डॉक्टर जी की आकांक्षा थी। संघ-कार्य की इस विशेषता को मा. आप्टे जी ने आत्मसात् कर लिया था।

1946 के 16 अगस्त को मुस्लिम लीग ने कलकत्ते से अपना ''डायरेक्ट एक्शन'' प्रारंभ कर हिन्दुओं का कत्लेआम किया था। देश भर में हिन्दू-मुस्लिम दंगे भड़क उठे थे।

संयोगवश, उन्हीं दिनों मा. आप्टे जी अपने प्रवास के कार्यक्रम के अनुसार गोरखपुर पहुंचे थे। मैं उस समय गोरखपुर विभाग का संघ-प्रचारक था।

संस्थाएं तो आती-जाती रहती हैं। समाज स्थायी तत्व है। यदि वह स्वयं समर्थ और स्वावलंबी न बना और किसी न किसी के आश्रय का मुखापेक्षी बना रहा हो तो उसका अस्तित्व ही खतरे में पड़ेगा।

गोरखपुर में संघ की शाखाएं बहुत अच्छी थीं। नगर की 6 शाखाओं में एक हजार से अधिक दैनिक उपस्थिति रहती थी। अधिकांश संख्या तरुणों की ही होती थी।

गोरखपुर में मुस्लिम आबादी काफी थी। अतः गोरखपुर में दंगे की आशंका से लोग भयभीत थे। शहर के पढ़े-लिखे और प्रतिष्ठित लोग 40-50 की संख्या में मा. आप्टे जी से मिलने आए थे। उन सबने मा. आप्टे जी से आग्रह किया था कि वे संघ द्वारा हिन्दुओं की रक्षा करने का दायित्व संभालें।

मा. आप्टे जी ने इन लोगों से कहा, ''आपकी यह अपेक्षा स्वाभाविक है। किन्तु संघ यह दायित्व स्वीकार नहीं कर सकता।'' इस पर गोरखपुर के सबसे बड़े वकील श्री हरिहर प्रसाद दुबे ने खड़े होकर कहा, ''यदि आपका संघ यह दायित्व स्वीकार नहीं करेगा तो आपके हिन्दू-संगठन की आवश्यकता ही क्या है?'' इसी अर्थ के तर्क अन्य लोगों ने भी प्रकट किए।

मा. आप्टे जी ने इन लोगों से प्रार्थना की, ''आप कृपया शांति से संघ की भूमिका

समझने का प्रयास करें। संघ-निर्माता प. पू. डॉक्टर जी ने सब प्रकार के अनुभवों के बाद संघ की नीति-निर्धारित की है। अभी तक हिन्दुओं की सुरक्षा एवं उत्थान का दायित्व कोई न कोई संस्था निभाने के लिए सामने आती रही। समाज स्वयं असंगठित और निर्बल बना रहता था। संस्थाएं तो आती-जाती रहती हैं। समाज स्थायी तत्व है। यदि वह स्वयं समर्थ और स्वावलंबी न बना और किसी न किसी के आश्रय का मुखापेक्षी बना रहा तो उसका अस्तित्व ही खतरे में पड़ेगा।

संघ हिन्दू समाज को समर्थ एवं स्वावलंबी बनाना चाहता है। संघ हिन्दू समाज के संरक्षण का श्रेय लेकर वाहवाही लूटना नहीं चाहता।

आप सब हिन्दुओं के नाते समाज की सुरक्षा करने के लिए स्वयं सिद्ध हों, तो संघ के स्वयंसेवक संघ के स्वयंसेवक के नाते नहीं, अपितु हिन्दू होने के नाते हर प्रकार के संकट में सबसे आगे दिखाई देंगे।''

मा. आप्टे जी के विचारों से सब सहमत हुए। सबने तय किया कि वे नगर के सभी मोहल्लों में मा. आप्टे जी की सलाह के अनुसार सिद्धता करेंगे। फलस्वरुप, गोरखपुर दंगे से पूर्णतः बच गया था।

संघ की इस घटना ने मेरे अंतःकरण पर संघ के मर्म की अमिट छाप छोड़ी है।

मा. आप्टे जी संघ-कार्य को संकुचित दायरे में जकड़ना नहीं चाहते थे। प.पू. डॉक्टर जी की आकांक्षा के अनुसार संपूर्ण समाज को अपना परिवार मानने की अवधारणा को व्यावहारिक धरातल पर साकार करना ही संघ का एकमेव कार्य मानते थे।

राजनीतिक पार्टी बनाने से संघ परोक्ष रूप से ही क्यों न हो, एक पार्टी बने बिना नहीं रहेगा। यह प.पू. डॉक्टर जी की अवधारणा के पूर्णतः प्रतिकूल है। परोक्ष रूप से भी दलगत राजनीति में पड़ने से संघ संपूर्ण समाज का रूप खो बैठेगा। अतः वे अपनी अंतिम सांस तक संघ को दलगत राजनीति से पूर्णतः अलिप्त रखने का आग्रह करते रहे हैं।

50 साल के अनुभव के बाद यह सिद्ध हुआ है कि मा. आप्टे जी का चिंतन वास्तविकता की कसौटी पर खरा उतरा है।

शुभाकांक्षी

(नाना देशमुख)

6

प्रिय युवा बंधुओं और बहनों,

24 दिसंबर, 2004

विशाल भारत प्राकृतिक विविधताओं से भरा पड़ा है। एक ही समय अपने देश में उष्ण, शीत व मध्यम जलवायु विद्यमान रहती है। विभिन्न अंचलों में बहुविध प्रकार की वन-सम्पदा उपलब्ध है। अनेक प्रकार के खनिज द्रव्यों से भारत का भूगर्भ सम्पन्न है। खाद्यान्नों एवं फलों-फूलों के कई प्रकारों का देश में उत्पादन होता है। रहन-सहन में और रुप-रंग में भी बहुत अंतर है। बोलियों और लिपियों की विविधताएं भारत की अपनी ही विशेषता है।

इतनी विविधताओं के बावजूद हजारों सालों से देशवासियों में एकात्मता की अखण्ड परंपरा चली आ रही है। यह हमारे पूर्वजों की कठोर साधना का अनोखा प्रतिफल है। कुंभ मेलों, चारों धामों की यात्राओं और अमरनाथ के दर्शन जैसे असंख्य देशव्यापी श्रद्धा-केन्द्रों का जाल सामाजिक एकात्मता का प्रतीक है।

काल के प्रबल प्रवाह, नेतृत्व की ढलती क्षमता, अनेक विदेशी आक्रमणों व गुलामी के कारण इनमें अंतर्निहित एकात्मता की भावना पर लगातार प्रहार होते रहे हैं। चराचर में आत्म-तत्व के बोध की जीवन-दृष्टि भी कमजोर पड़ती गई है। फलस्वरुप, समाज में विघटन, अशांति, अनाचार और आपसी कलह बढ़ता जा रहा है।

विकसित कहे जाने वाले सम्पन्न देशों में आत्म-तत्व का बोध दुर्लभ है। उन्होंने उपभोग पूर्ति को ही जीवन का चरम लक्ष्य माना है। उपभोगवादी वृत्ति व्यक्तिगत सुख-सुविधाओं में ही समाधान मानती है। वह मानव की प्राकृतिक विशेषता अर्थात् मानवीयता को उभरने नहीं देती।

उन देशों में कौटुंबिक जीवन में आत्म-तत्व की भावना पाना कठिन है। पति-पत्नी के आजीवन साथ-साथ रहने की वहां अवधारणा ही नहीं है। ऐसी स्थिति में वहां की नई पीढ़ी में व्यक्तिवादी जीवन-दृष्टि ही पनपना स्वाभाविक है।

उन देशों के उपभोग प्रधान जीवन का प्रभाव स्वतंत्र भारत में तेजी से बढ़ रहा है।

आह्वान

उससे पं. दीनदयाल जी चिंतित हुए थे। उपभोग का प्रबंध करना शरीरधारी मानव की प्राकृतिक आवश्यकता है। किन्तु मानव का जन्म केवल उपभोग पूर्ति के लिए नहीं हुआ है। वह जन्म से ही संवेदनशील होता है। अन्यों के सुख-दुःख में वह सहभागी होता है। दुखियों का दुःख दूर करने पर उसे अनोखा सुख मिलता है। इस दिशा में गतिशील होने में ही मानव जीवन की सार्थकता निहित है। इस संवेदना के अभाव में वह पशु-तुल्य बन जाता है।

लेकिन दुर्भाग्यवश, अपना देश भी उपभोगप्रधान देशों के संवेदनहीन मार्ग पर चल पड़ा है। इससे भारत, भारत न रहकर, उपभोगप्रवण देशों का अनुगामी बन रहा है। इससे विश्व से मानवीयता ही मिटने का खतरा खड़ा हुआ है।

इस खतरे को भांपकर स्व. दीनदयाल जी ने ''एकात्म मानव दर्शन'' का उपाय प्रस्तुत किया था। उन्होंने इस दर्शन को देश के अनेक प्रतिष्ठित विचारकों के सम्मुख रखा था। उनसे विस्तृत विचार-विनिमय किया था। स्व. श्री राजगोपालाचारी ने भी इसे सराहा था। प.पू. गुरु जी ने इसे ''सामाजिक संजीवनी'' कहा था। भारतीय जनसंघ के विजयवाड़ा अधिवेशन में इसे सर्वसम्मति से स्वीकृत किया था। किन्तु दीनदयाल जी की हत्या के बाद उनके ''एकात्म मानव दर्शन'' को भी सबने तिलांजलि दे डाली है।

''एकात्म मानव दर्शन'' भारतीय जीवन दर्शन का ही नया नामकरण माना जा सकता है। भारतीय जीवन दर्शन मानव-मानव में भेद नहीं करता। अन्यथा चराचर में आत्म-तत्व अनुभव करने की संभावना ही नहीं होती। वह हर एक नागरिक को मानव मानकर ही व्यवहार करता है। किसी से भी उसकी उपासना पद्धति, भाषा, क्षेत्रीयता, जातीयता या ऊंच-नीचता के आधार पर भेदभाव को अमानवीय मानता है।

भारतीय जीवन दर्शन की अपनी ही आर्थिक जीवन-दृष्टि है। अन्य देशों में व्यक्तिगत समृद्धि के लिए ही काम करने की प्रेरणा मिलती है। व्यक्तिगत समृद्धि के लिए ही वहां व्यवसायिक-संगठन खड़े होते हैं।

किन्तु भारत में बिल्कुल अलग ही आर्थिक जीवन-दृष्टि रही है। यहां जातियां व्यवसाय के आधार पर अवश्य संगठित हुई थीं। हरेक जाति का लक्ष्य संपूर्ण समाज की एक न एक आवश्यकता पूर्ण करना था। व्यक्तिगत समृद्धि के लिए जातियों का गठन नहीं हुआ था।

हर व्यक्ति संपूर्ण समाज को अपना व्यापक परिवार मानकर उसे सुखी और समृद्ध बनाने के लिए अपना जीवन लगाता था। उसी में उसका कुटुंब भी पला करता था। संत कबीर का जीवन उसी का एक नमूना था। भारत में ऐसे संत लगभग हर जाति में हुए हैं। इस विशेषता के कारण ही भारत में 'वर्ग-संघर्ष' की कल्पना उद्भव ही नहीं हुई थी। 'वर्ग-संघर्ष' समाज में विद्वेष, विघटन और कलह पैदा करता है। वह एकात्मता के पूर्णतः विपरीत है। इस वस्तुस्थिति का बोध न होने के कारण जो व्यक्ति समाज में एकात्मता का प्रतिपादन करता है, वही व्यक्ति 'वर्ग-संघर्ष' मूलक यूनियन बाजी की भी वकालत करता है। ऐसे परस्पर विरोधी कार्य 'भारतीयता' के नाम पर स्वतंत्र भारत में चलाए जा रहे हैं।

भारत की औद्योगिक नीति एकात्मता के आधार पर चला करती थी। उद्योग के तीन अंग हैं - पूंजी, श्रम और प्रबंध। उद्योग की सफलता इन तीनों अंगों की परस्पर पूरकता पर निर्भर करती है। उद्योग का लक्ष्य समाज की आवश्यकता पूर्ण करना था। बचत पर तीनों अंगों का समान अधिकार होता था। उद्योगों की इकाई परिवार होती थी। परिणामस्वरुप, समाज में न विषमता की भीषणता उपस्थित होती थी, न बेकारी की संभावना। स्वतंत्र भारत को उसी आधार पर औद्योगिक नीति विकसित करनी चाहिए थी।

जयप्रकाश जी की ''समग्र-क्रांति'' और दीनदयाल जी के ''एकात्म मानव दर्शन'' का एक ही लक्ष्य है - भारतीय सामाजिक जीवन-दृष्टि को पुनर्प्रस्थापित करना।

प.पू. गुरु जी के आशीर्वाद से दीनदयाल शोध संस्थान का जन्म हुआ था। उन्हीं के करकमलों से इसका उद्घाटन हुआ था। उद्घाटन समारोह को पाण्डिचेरी के अरविंद आश्रम की पूज्य माता जी ने अपना शुभाशीर्वाद भेजा था। दीनदयाल शोध संस्थान ''एकात्म मानव दर्शन'' को व्यवहारिक धरातल पर साकार करने के लिए कृतसंकल्पित है।

संस्थान ने इस कार्य को अनेक ग्रामीण अंचलों में प्रयोगात्मक रुप में आजमा कर देखा है। इन प्रयोगों के अनुभवों के निचोड़ को चित्रकूट क्षेत्र में अधिक विकसित किया जा रहा है।

इन अनुभवों ने ''एकात्म मानव दर्शन'' की व्यवहारिकता को रेखांकित किया है।

शुभाकांक्षी

नाना देशमुख

(नाना देशमुख)

7

प्रिय युवा बंधुओं और बहनों,

24 दिसंबर, 2004

लोकतांत्रिक शासन प्रणाली से हम अनभिज्ञ नहीं थे। ढाई हजार साल पूर्व भी अपने यहां गणतंत्र के रुप में लोकतांत्रिक शासन प्रचलित था।

1947 में स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद हमें अपने देश के लिए शासन-व्यवस्था का स्वयं निर्माण करना आवश्यक था। हम समयानुकूल अपनी शासन व्यवस्था स्वयं खड़ी कर सकते थे। भूतकाल में हम केवल स्वतंत्र ही नहीं थे, अपितु सर्वाधिक सभ्य राष्ट्र के रुप में प्रतिष्ठित थे। मानव मात्र के सुखमय जीवन निर्माण करने वाली संस्कृति के हम अधिष्ठाता थे। कौटुम्बिक अवधारणा के आधार पर हमारी शासन-व्यवस्था प्रचलित थी। अपनी गतिशील सामाजिक जीवन-दृष्टि के आधार पर स्वतंत्र भारत की शासन व्यवस्था हमें स्वयं निर्माण करनी चाहिए थी।

सांसदों की अधिकांश संख्या ग्रामीण क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करती है। वह ग्रामीण क्षेत्र 60 साल के बाद बेकारी और भुखमरी का इलाका बन रहा है और शहर अधिकाधिक गुलजार बनते जा रहे हैं।

किन्तु स्वतंत्र हुए भारत के नेतृत्व ने अमानवीय सभ्यता के अधीन किन्तु सम्पन्न देशों में प्रचलित शासन-व्यवस्था को ''रेडिमेड'' व्यवस्था के नाते अपना लिया। दुर्भाग्य से अपनी प्रतिभा का सदुपयोग करने की बुद्धि समय पर काम नहीं आई।

भारत को डेढ़ सौ साल गुलाम बनाकर उसका सब प्रकार से सतत शोषण करने वाले अंग्रेजों की संसदीय शासन प्रणाली हमने अपनाई। उसी से देश और समाज का भविष्य निर्माण करने की हम अपेक्षा कर रहे हैं।

चतुराई से भारत का विभाजन करने वाले ब्रिटिश कूटनीतिज्ञ लॉर्ड माउंट बैटन को ही हमने स्वयं स्वतंत्र भारत का प्रथम 'गवर्नर जनरल' बनाया। अंग्रेजों की हुकूमत उखाड़ने के लिए फांसी के फंदों पर झूलने वाले युवा देशभक्तों की भावनाओं की यह घोर अवमानना थी।

गत 60 वर्षों में हम संसार में सबसे बड़े लोकतंत्र का डंका पीट रहे हैं। किन्तु क्या लोकतंत्र की तनिक भी भावना हम कार्यान्वित कर रहे हैं? लोकतंत्र में समाज के सभी लोगों को स्वतंत्रता की अनुभूति होनी चाहिए। सभी नागरिक देश की उन्नति के लिए जुटने चाहिए। उन्हें अपने देश का उज्ज्वल भविष्य-निर्माण करने की चिंता होनी चाहिए।

तभी वह राष्ट्र स्थाई उन्नति कर सकता है। किन्तु इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया, किन्तु देश के नागरिक हर बात के लिए शासन की ओर टकटकी लगाए हुए हैं। वे स्वयं अपनी और अपने देश की उन्नति का मार्ग अपना नहीं रहे हैं। क्या इसे हम लोकतंत्र मानेंगे? जिसमें देश के नागरिक स्वावलंबी नहीं होंगे, उस देश में स्वाभिमान क्या कभी आ सकेगा? स्वाभिमान स्वावलंबन के बिना कभी भी संभव नहीं है। स्वतंत्र देश का नागरिक स्वयं स्वावलंबी हो, तभी देश की स्वतंत्रता सार्थक है। अन्यथा, स्वतंत्रता और गुलामी में कोई अंतर नहीं रह जाता।

देश में 543 निर्वाचित सांसद हैं, इनमें 321 ग्रामीण क्षेत्र से चुनकर आते हैं। 138 ऐसे चुनाव क्षेत्र से निर्वाचित होते हैं, जिनमें से केवल शहरी क्षेत्र से सांसद निर्वाचित होते हैं। इसका अर्थ है, सांसदों की अधिकांश संख्या ग्रामीण क्षेत्र का प्रतिनिधित्व करती है। वह ग्रामीण क्षेत्र 60 साल के बाद बेकारी और भुखमरी का इलाका बन रहा है और शहर दिन-प्रतिदिन अधिकाधिक गुलजार बनते जा रहे हैं। क्या यह लोकतंत्र का रुप है?

वस्तुतः स्वतंत्र भारत में सतत् एकाधिपत्य चल रहा है। देश में सभी पार्टियां एकाधिपत्य की शिकार हैं। नेहरु से लेकर श्रीमती सोनिया गांधी तक सभी शासक अपनी-अपनी मनमानी चलाते रहे हैं। उनका केन्द्र हमेशा दिल्ली या प्रदेश की राजधानियां रही हैं। अतः देश का सारा ऐश्वर्य इन राजधानियों में समाता गया। प्रत्येक सांसद या शासकों की ओर देखकर अवतरण करता है। सभी सांसद दिल्ली में और विधायक शहरों में अपने निवास-स्थान बना रहे हैं। अपने बच्चों की अच्छी पढ़ाई के लिए वे अपनी संतान को शहरी वातावरण में पाल रहे हैं। हर एक सांसद या विधायक का लक्ष्य अपनी आर्थिक स्थिति सुधारने का है। उसके लिए वह विधि-निषेध का विचार नहीं करता। परिणामस्वरुप, देश में जनप्रतिनिधि स्वार्थमूलक भावना के शिकार हुए हैं। उनमें देशभक्ति की तनिक भी गुंजाईश दिखाई नहीं देती। परिणामस्वरुप, देश में भ्रष्टाचार पनपने के अतिरिक्त उदात्त भावना का अस्तित्व ही खत्म हो रहा है।

देश की हर पार्टी सबको नौकरी और खुशहाली प्रदान करने की बात कर रही है। कोई भी पार्टी लोगों को स्वावलंबी बनाने का पाठ नही पढ़ाती है।

हमने पश्चिमी जीवन-प्रणाली को अपनाया है। वहां धन की ही महत्ता सर्वाधिक है। किसी के पास धन अधिक है, वह महान माना जाता है। जबकि हिन्दुस्तान की परंपरा इसके विपरीत है, हिन्दुस्तान में ऋषि-मुनि जो त्यागी-विरागी थे, लेकिन समाज-कल्याण में अग्रणी होने के कारण सर्वप्रिय होते थे। उनके सामने सत्ताधीश या धनी झुकते थे। इस कारण, समाजहित सर्वोपरि था। समाज के नागरिकों में आदर्श भिन्न था। इस कारण, हिन्दुस्तान की सभ्यता सर्वश्रेष्ठ मानी जाती थी।

स्वतंत्र भारत का लक्ष्य यही होता तो 60 वर्ष में 543 सांसद देश का नक्शा बदल सकते थे।

नव स्वतंत्र भारत के नेताओं ने भारत स्वतंत्र हुआ है, यह मानकर अपनी नीतियों को निर्धारित नहीं किया। हम भारत को वस्तुस्थिति समझ ही नहीं पाये। भारत 6 लाख से अधिक गांवों में बसता है। इसकी अनुभूति ही नहीं की। हमने उन्हें उजाड़कर बड़ी-बड़ी योजनाएं काम में लाते गये। योजना आयोग ने प्रारंभ से ही यह धारणा बनाई कि सरकार को ही देश का नव निर्माण करना है। उसमें देश के आम नागरिकों का कोई सहयोग आवश्यक नहीं है। जब तक नव स्वतंत्र देश के हर नागरिक को यह अनुभूति नहीं होगी कि हम स्वतंत्र बने हैं, हमें स्वाधीन बनाना है। स्वाधीन बनने का अर्थ है स्वावलंबी जीवन को सर्वाधिक महत्व देना। इस मर्म को हमारे नेताओं ने साठ साल की आजादी में ध्यान में ही नहीं लाया। परिणामस्वरूप आज देश के करोड़ों लोग बेकार और गरीब है। वह आत्महत्याएं करने के लिए विवश हैं। यह साठ साल के आजादी की उपलब्धि है। कारण हमने देश के नागरिकों को स्वावलंबी बनाने का पाठ पढ़ाया ही नहीं। सभी को सरकार का मुखापेक्षी बनाया गया है।

पार्लियामेन्ट में 543 चुने हुए सांसद है। इसके अलावा विधानसभा के सदस्यों की संख्या हजारों में है। इन्हें अपने-अपने क्षेत्र में लोगों को स्वावलंबी बनाने का अभियान चलाना चाहिए। लोकसभा में 321 सांसद ग्रामीण क्षेत्र से आते है। 138 क्षेत्र ऐसे है जिनमें ग्रामीण क्षेत्र सम्मिलित हैं। केवल 84 क्षेत्र ऐसे हैं जो शहरी क्षेत्र माने जा सकते

है। 459 लोग गांवों से आते हैं। ये लोग यदि अपने क्षेत्र के नागरिकों को स्वावलंबी बनाने का अभियान चलाते तो 60 साल में भारत का कोई व्यक्ति बेकार या गरीब नहीं रहता। किन्तु देश की हर पार्टी सबको नौकरी और सबको खुशहाली प्रदान करने की बात कर रही है। कोई भी पार्टी ऐसे लोगों को स्वावलंबी बनाने का पाठ नहीं पढ़ाती है। ऐसी स्थिति में कोई भी पार्टी सबको स्वावलंबी बनाने का काम कभी भी नहीं कर पायेगी।

योजना आयोग विकास की दर 10 फीसदी भी करेगी तो आम लोगों का कोई लाभ नहीं होगा। केवल धनी अधिक धनी बनते जायेंगे। यहीं सिलसिला स्वतंत्र भारत के अन्दर हो रहा है। हिन्दुस्तान के कुछ लोग संसार के सबसे अधिक श्रीमन्त की सूचि में दर्ज हो गये है और दूसरी ओर हजारों लोग आत्महत्या करने पर तुले हुए है। सभी पार्टियां इन पैसे वालों की पार्टी पर चल रहे हैं। शुरू से ही कांग्रेस बिरला हाउस में काम करती रही। आज भी पार्टियां चुनाव में अधिकाधिक खर्च करती हैं। वह पैसा कहां से आता है। सारी सरकारी नीतियां मुट्ठीभर पूंजीपतियों के सहारे पर चल रही हैं। ऐसी स्थिति में भारत का भविष्य कैसे सुधरेगा? जब तक हर एक नागरिक स्वावलंबन का ध्येय अपने सम्मुख रखकर काम नहीं करेगा तो भारत स्वतंत्र है यह कहना कठिन है। देश में मानव जीवन के लिए आवश्यक सभी प्राकृतिक संसाधन ग्रामीण क्षेत्र में ही उपलब्ध होते है। उन्हीं के सहारे देश तरक्की करता है। हमारे देश में विपुल प्राकृतिक संसाधन हैं वह सारे संसार के लिए काम में लाये जा रहे हैं। दिल्ली में पेयजल की समस्या हरियाणा और उत्तर प्रदेश से पानी के बिना हल नहीं हो सकती। बीकानेर से टैंकरों से दिल्ली के नागरिकों के लिए दूध लाया जाता है। गांव के बच्चे कुपोषण से शिकार हो रहे हैं। जिले-जिले में सरकारी दुग्ध भण्डार शहरों की पूर्ति के लिए गांव-गांव से दूध इकट्ठा करके शहरों की पूर्ति की जा रही है। इस प्रकार गांव-गांव में बच्चे कुपोषण का शिकार बन रहे हैं। हमारा किसान स्वावलंबी था। आज भी उसे मशीनों के लिए पूंजीपतियों का गुलाम बनाया जा रहा है। यहां तक टिशु कल्चर के अधिक उत्पादन के लिए किसानों को हमेशा के

जयप्रकाशजी की समग्र क्रांति का लक्ष्य था, दलीय लोकतंत्र के स्थान पर पार्टीलेस डेमोक्रेसी अर्थात् कौटुम्बिक शासन व्यवस्था प्रस्थापित करना।

राजसत्ता से सहज में ही निर्लिप्त होने वाले प्रभु राम ने सामाजिक शक्ति को राजसत्ता से अधिक समर्थ, स्थायी और विजयी बनाकर राष्ट्र-जीवन के मर्म को प्रकट किया।

लिए पूंजीपतियों का गुलाम बनाया जा रहा है। क्या यह भारत को स्वतंत्रता की देन कहा जायेगा?

विरोधी दल उचित-अनुचित ढंग से सत्तारुढ़ दल को अपदस्थ कर शासन पर अपना अधिकार प्रस्थापित करने के लिए रात-दिन प्रयत्नशील होते रहे। उनके घोषणा-पत्र हाथी के दिखाने के दांत के समान सिद्ध हुए हैं। इस प्रकार, दलीय लोकतंत्र विभिन्न दलों का सत्ता-प्राप्ति का अखाड़ा मात्र बना है। उसमें न लोकतंत्र का लवलेश है न जन सामान्य का कल्याण करने की भावना ही है। स्वतंत्र भारत का यही नजारा है।

श्रद्धेय जयप्रकाश जी ने उपर्युक्त दुर्दशा का बहुत पहले ही अनुमान लगाया था। उनकी ''समग्र क्रांति'' का लक्ष्य था, दलीय लोकतंत्र के स्थान पर ''पार्टीलैस डेमोक्रेसी'' अर्थात् ''कौटुम्बिक शासन व्यवस्था'' प्रस्थापित करना। किन्तु इंदिरा जी की तानाशाही मिटाकर ''समग्र-क्रांति'' की इतिश्री मानी गई। जयप्रकाश जी स्वयं गंभीर बीमारी के कारण अपने लक्ष्य-प्राप्ति में सर्वथा असमर्थ हुए थे। अन्य कोई नेता ''समग्र-क्रांति'' की मूलभावना और उसकी आवश्यकता समझ नहीं सका। सभी राजनेता आम लोगों के उत्थान की परवाह किए बिना सत्ता-प्राप्ति की होड़ में लगे हुए हैं।

मेरी आयु का एक-तिहाई भाग अंग्रेजी हुकूमत में बीता। शेष समय स्वतंत्र भारत में बीत रहा है। मेरे इस लम्बे जीवन में मुझे तीन महापुरुषों के सान्निध्य में आने का सौभाग्य मिला। उनमें से प्रथम महापुरुष थे - परमपूज्य डॉ. हेडगेवार, द्वितीय महापुरुष थे - पं. दीनदयाल उपाध्याय तथा तृतीय महापुरुष थे - श्रद्धेय जयप्रकाश नारायण।

इन महापुरुषों ने अपने जीवन में क्षण मात्र के लिए भी व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा को प्रश्रय नहीं दिया था। वैवाहिक सुख की (जयप्रकाश जी ने विवाहित होते हुए भी) अभिलाषा की अपने जीवन पर छाया तक पड़ने नहीं दी। अपनी आयु में उन्होंने उपदेशात्मक भूमिका नहीं अपनाई। आयु का एक-एक पल कर्तव्यपूर्ति के साथ राष्ट्र-कार्य करते-करते ही बिताया। इन महापुरुषों की व्यापक जीवन-दृष्टि को अबाधित गति से आगे बढ़ाया गया होता तो संघ-शाखाएं रुढ़ि बनकर अपने समाज को जातियों, भाषाओं एवं मजहबों में खण्ड-खण्ड होते हुए न देखती, अपितु गतिशील प्रक्रिया बन अपने विविधतापूर्ण समाज में एकात्मता को दृढ़-मूल करती। संपूर्ण समाज को अपना परिवार

मानने की पू. डॉक्टर जी की अवधारणा पर एकाग्र बनी रहती। राजनीतिक जीवन में जो पतन हुआ है वह नहीं होता।

किन्तु डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी के महान व्यक्तित्व का लाभ उठाकर प. पू. गुरु जी से दलगत राजनीति में प्रवेश पाने की अनुमति प्राप्त की गई। समाजव्यापी पारिवारिक जीवन-दृष्टि भुलाकर अपने द्वारा निर्मित संस्थाओं का संकुचित परिवार बनाकर राजसत्ता की अभिलाषा के चक्कर में फंसे और आपसी कलह के शिकार बने।

दीनदयाल शोध संस्थान ने तीनों महापुरुषों के जीवन से प्रेरणा पाकर द्वंद्वात्मक राजनीति से स्वयं को पूर्णतः अलिप्त कर लिया। ग्रामोदय को आधार बनाकर इन महापुरुषों के सपनों को साकार करने के कार्य में स्वयं को समर्पित किया।

इस महान कार्य को सम्पन्न करने के लिए हम सभी साधारण कार्यकर्ता जुट गए। विजय-पराजय के थपेड़े खाते-खाते कई साल बीत गए। गरीब और उपेक्षित लोगों की आर्थिक-स्थिति में सुधार अवश्य हुआ।

इस महान कार्य को सम्पन्न करने के लिए हम सभी साधारण कार्यकर्ता जुट गए। विजय-पराजय के थपेड़े खाते-खाते कई साल बीत गए। गरीब और उपेक्षित लोगों की आर्थिक-स्थिति में सुधार अवश्य हुआ। किन्तु चारों ओर के दूषित माहौल में लोगों के जीवन में सामाजिक जीवन-दृष्टि विकसित नहीं कर पाए। इससे हम कार्यकर्तागण चिंताग्रस्त थे।

ऐसी अवस्था में एक दिन अचानक अनुसूइया आश्रम चित्रकूट के स्वामी आदरणीय भगवानानंद जी महाराज मिलने आए। पूर्व-परिचय न होते हुए उन्होंने हम लोगों को सुझाया कि ''आप लोग बहुत अच्छा काम कर रहे हो। आपको वनवासी प्रभु राम की कर्मभूमि चित्रकूट क्षेत्र में भी ऐसा ही काम करना चाहिए। वह क्षेत्र पूर्णतः उपेक्षित पड़ा है। आप चित्रकूट क्षेत्र में काम करोगे तो आपका कार्य अधिक सार्थक सिद्ध होगा।''

चित्रकूट क्षेत्र में काम करने के सुझाव ने हम कार्यकर्ताओं को प्रभावित किया। राजसत्ता से सहज में ही निर्लिप्त होने वाले प्रभु राम ने अविलंब वनवास-गमन किया। उन्होंने सामाजिक शक्ति को राजसत्ता से अधिक समर्थ, स्थाई और विजयी बनाकर राष्ट्र-जीवन के मर्म को प्रकट किया। उन्हीं के पदचिन्हों पर चलकर भरत ने राजसत्ता ठुकरा कर चित्रकूट

पहुंचने के लिए प्राथमिकता दी। अयोध्या का राजकाज संभालने के लिए राम से प्रार्थना की। राम ने भरत को समझाया कि ''इस परिस्थिति में चौदह वर्ष तुम्हें ही अयोध्या का राजकाज संभालना उपयुक्त है।'' भरत ने दुःखी मन से राम की आज्ञा मानी। सिंहासन पर राम की पादुकाएं प्रतिष्ठित कर स्वयं एक सेवक के रूप में राजकाज संभालना स्वीकार किया।

इस समय देश में राजसत्ता पाने का घिनौना खेल खेला जा रहा है। ऐसे समय नई पीढ़ी में कर्तव्यबोध एवं सामाजिक जीवन-दृष्टि प्रेरित करने के लिए चित्रकूट से अधिक उपयुक्त स्थान अन्य नहीं हो सकता। इसकी हम सभी को अनुभूति हुई। अतः दीनदयाल शोध संस्थान ने चित्रकूट क्षेत्र में भी अपना कार्य प्रारंभ किया।

शुभाकांक्षी

नानादेशमुख

(नाना देशमुख)

8

प्रिय युवा बंधुओं और बहनों, 24 दिसंबर, 2004

गांधी जी ने 05 अक्तूबर, 1945 को नेहरू को पत्र लिखा था।

05 अक्तूबर, 1945

चि. जवाहरलाल,

तुमको लिखने को तो कई दिनों से इरादा किया था, लेकिन आज ही उसका अमल कर सकता हूँ। अंग्रेजी में लिखूं या हिन्दुस्तानी में यह भी मेरे सामने सवाल रहा था। आखिर में मैंने हिन्दुस्तानी में ही लिखने का पसंद किया।

पहली बात तो हमारे बीच में जो बड़ा मतभेद हुआ है, उसकी है। अगर वह भेद सचमुच है तो लोगों को भी जानना चाहिए। क्योंकि उनको अंधेरे में रखने से हमारा स्वराज का काम रुकता है। मैंने कहा है कि 'हिन्द स्वराज' में मैंने लिखा है उस राज्य पद्धति पर मैं बिलकुल कायम हूँ। यह सिर्फ कहने की बात नहीं है, लेकिन जो चीज मैंने सन् 1909 में लिखी है उसी चीज का सत्य मैंने अनुभव से आज तक पाया है। आखिर में एक ही उसे मानने वाला रह जाऊं, उसका मुझको जरा-सा भी दुःख न होगा। क्योंकि मैं जैसे सत्य पाता हूँ उसका मैं साक्षी बन सकता हूँ। 'हिन्द स्वराज' मेरे सामने नहीं है। अच्छा है कि मैं उसी चित्र को आज अपनी भाषा में खेंचु। पीछे वह चित्र सन् 1909 जैसा ही है या नहीं, उसकी मुझे दरकार न रहेगी, न तुम्हें रहनी चाहिए। आखिर में तो मैंने पहले क्या कहा था, उसे सिद्ध करना नहीं है, आज मैं क्या कहता हूँ वही जानना आवश्यक है। मैं यह मानता हूँ कि अगर हिन्दुस्तान को कल देहातों में ही रहना होगा, झोपड़ियों में, महलों में नहीं। कई अरब आदमी शहरों और महलों में सुख से और शांति से कभी रह नहीं सकते, न एक-दूसरों का खून करके - मायने हिंसा से, न झूठ से - यानी असत्य से। सिवाय इस जोड़ी के

"अगर मैं 125 वर्ष तक सेवा करते-करते जिन्दा रहने की इच्छा करता हूँ, तब भी मैं आखिर में बूढ़ा हूँ और तुम मुकाबले में जवान हो। इसी कारण मेरे वारिस तुम हो।"

गांधी जी नेहरू को

(यानी सत्य और अहिंसा), मनुष्य जाति का नाश ही है, उसमें मुझे जरा-सा भी शक नहीं है। उस सत्य और अहिंसा का दर्शन केवल देहातों की सादगी में ही कर सकते हैं। वह सादगी चर्खा में और चर्खा में जो चीज भरी है उसी पर निर्भर है। मुझे कोई डर नहीं है कि दुनिया उल्टी ओर ही जा रही दिखती है। यों तो पतंगा जब अपने नाश की ओर जाता है तब सबसे ज्यादा चक्कर खाता है और चक्कर खाते-खाते जल जाता है। हो सकता है कि हिन्दुस्तान इस पतंगे के चक्कर में से न बच सके। मेरा फर्ज है कि आखिर दम तक उसमें से उसे और उसके मारफत जगत को बचाने की कोशिश करूं। मेरे कहने का निचोड यह है कि मनुष्य जीवन के लिए जितनी जरूरत की चीज है, उस पर निजी काबू रहना ही चाहिए - अगर न रहे तो व्यक्ति बच ही नहीं सकता है। आखिर तो जगत व्यक्तियों का ही बना है। बूंद नहीं है तो समुद्र नहीं है। यह तो मैंने मोटी बात ही कही - कोई नई बात नहीं की।

लेकिन 'हिन्द स्वराज' में भी मैंने यह बात नहीं की है। आधुनिक शास्त्र की कदर करते हुए पुरानी बात को मैं आधुनिक शास्त्र की निगाह से देखता हूँ तो पुरानी बात इस नए लिबाश में मुझे बहुत मीठी लगती है। अगर ऐसा समझोगे कि मैं आज के देहातों की बात करता हूँ तो मेरी बात नहीं समझोगे। मेरे देहात आज मेरी कल्पना में ही हैं। आखिर में तो हर एक मनुष्य अपनी कल्पना की दुनिया में ही रहता है। इस काल्पनिक देहात में देहाती जड़ नहीं होगा, शुद्ध चैतन्य होगा। वह गंदगी में, अंधेरे कमरे में जानवर की जिन्दगी बसर नहीं करेगा, मर्द और औरत दोनों आजादी से रहेंगे और सारे जगत के साथ मुकाबला करने को तैयार रहेंगे। वहां न हैजा होगा, न मरकी (प्लेग) होगी, न चेचक होंगे। कोई आलस्य में रह नहीं सकता है, न कोई ऐश-आराम में रहेगा। सबको शारीरिक मेहनत करनी होगी। इतनी चीज होते हुए मैं ऐसी बहुत-सी चीज का ख्याल करा सकता हूँ जो बड़े पैमाने पर बनेगी। शायद रेलवे

भी होगी, डाकघर, तारघर भी होंगे। क्या होगा, क्या नहीं उसका मुझे पता नहीं। न मुझको उसकी फिकर है। असली बात को मैं कायम कर सकूं तो बाकी आने की और रहने की खूबी रहेगी और असली बात को छोड़ दूं तो सब छोड़ देता हूँ।

उस रोज जब हम आखिर के दिन वर्किंग कमेटी में बैठे थे तो ऐसा कुछ फैसला हुआ था कि इसी चीज को साफ करने लिए वर्किंग कमेटी 2-3 दिन के लिए बैठेगी। बैठेगी तो मुझे अच्छा लगेगा, लेकिन न बैठे तब भी मैं चाहता हूँ कि हम दोनों एक-दूसरे को अच्छी तरह समझ लें। उसके दो सबब हैं। हमारा संबंध सिर्फ राज कारण का नहीं है। उससे कई दरजे गहरा है। उस गहराई का मेरे पास कोई नाप नहीं है। वह संबंध टूट भी नहीं सकता। इसलिए मैं चाहूंगा कि हम दोनों में से एक भी अपने को निकम्मा नहीं समझते हैं। हम दोनों हिन्दुस्तान की आजादी के लिए ही जिन्दा रहते हैं, और उसी आजादी के लिए हमको मरना भी अच्छा लगेगा। हमें किसी की तारीफ की दरकार नहीं है। तारीफ हो या गालियां, एक ही चीज हैं।

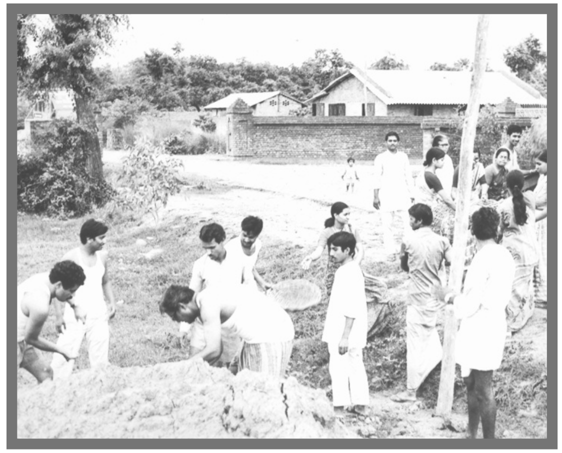

खिदमत में उसे कोई जगह ही नहीं है। अगर मैं 125 वर्ष तक सेवा करते-करते जिन्दा रहने की इच्छा करता हूँ तब भी मैं आखिर में बूढ़ा हूँ और तुम मुकाबले में जवान हो। इसी कारण मैंने कहा है कि मेरे वारिस तुम हो। कम से कम उस वारिस को मैं समझ लूं और मैं क्या हूँ वह भी वारिस समझ ले तो अच्छा ही है और मुझे चैन रहेगा।

और एक बात। मैंने तुमको कस्तूरबा ट्रस्ट के बारे में और हिन्दुस्तानी के बारे में लिखा था। तुमने सोचकर लिखने को कहा था। मैं पाता हूँ कि हिन्दुस्तानी सभा में तो तुम्हारा नाम है ही। नाणावटी ने मुझको याद दिलाया कि तुम्हारे पास और मौलाना साहब के पास वह पहुंच गया था और तुमने

> "यातायात के आधुनिक साधनों व दूसरी आधुनिक गतिविधियों का विकास मुझे अपरिहार्य लगते हैं। भारी उद्योग भी आज की आवश्यकता हैं और क्या यह सब विशुद्ध ग्रामीण परिवेश में संभव है?"
>
> **नेहरू**

अपने दस्तखत दे दिए हैं। वह तो सन् 1942 में था। वह जमाना गुजर गया। आज हिन्दुस्तानी कहां है उसे जानते हो। उसी दस्तखत पर कायम हो तो मैं उस बारे में तुमसे काम लेना चाहता हूँ। दौड़-धूप की जरूरत नहीं रहेगी, लेकिन थोड़ा काम करने की जरूरत रहेगी।

कस्तूरबा स्मारक का काम पेचिदा है। ऊपर जो मैंने लिखा है वह अगर तुमको चूभेगा या चूभता है तो कस्तुरबा स्मारक में भी आकर तुमको चैन नहीं रह सकेगा, यह मैं समझता हूँ।

आखिर की बात शरत बाबु के साथ जो कुछ चिनगारियां फूटी है वह है। इससे मुझे दर्द हुआ है। उसकी जड़ मैं नहीं समझ सका। तुमको जो कहा है इतना ही है बाकी कुछ नहीं रहा है तो मुझे कुछ पूछना नहीं है। लेकिन कुछ समझाने जैसा है तो मुझको समझने की दरकार है।

इस सबके बारे में अगर हमें मिलना ही चाहिए तो हमारे मिलने का वक्त निकालना चाहिए।

तुम बहुत काम कर रहे हो, स्वास्थ्य अच्छा रहता होगा। इन्दु ठीक होगी।

बापु के आशीर्वाद

इसी के उत्तर में नेहरू ने गांधी जी को 9 अक्तूबर, 1945 को पत्र लिखा था।

आनंद भवन, इलाहाबाद
9 अक्तूबर, 1945

प्रिय बापू,

संक्षेप में कहूं तो मेरा मानना है कि हमारे सामने सवाल सच बनाम झूठ और अहिंसा बनाम हिंसा का नहीं है। सभी का प्रयास होना चाहिए कि आपसी सहयोग एवं शांतिपूर्ण रास्ता हमारा ध्येय हो, और एक ऐसे समाज का निर्माण करना हमारा उद्देश्य जो इस रास्ते पर ले जाने को प्रेरित करता हो। सवाल यह

है कि ऐसे समाज का निर्माण कैसे हो और इसके अवयव क्या हों? मुझे समझ नहीं आता कि किसी गांव में सच्चाई और अहिंसा पर इतना बल क्यों दिया जाता है? आमतौर पर माना जाता है कि गांवों में रहने वाले लोग बुद्धिमत्ता और सांस्कृतिक तौर पर पिछड़े हुए होते हैं और एक पिछड़े हुए वातावरण में कोई प्रगति नहीं हो सकती। बल्कि संकुचित विचारों वाले लोगों के झूठे व हिंसक होने की संभावना ज्यादा रहती है।

इसके अलावा, हमें अपने कुछ लक्ष्य भी तय करने हैं, मसलन, खाद्य सुरक्षा, कपड़े, आवास, शिक्षा, स्वच्छता, वगैरह। ये वे न्यूनतम लक्ष्य हैं जो किसी भी देश या व्यक्ति के लिए अनिवार्य हैं। इन उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए हमें यह देखना है कि हम कितनी तेजी से उन्हें हासिल कर सकते हैं। इसके

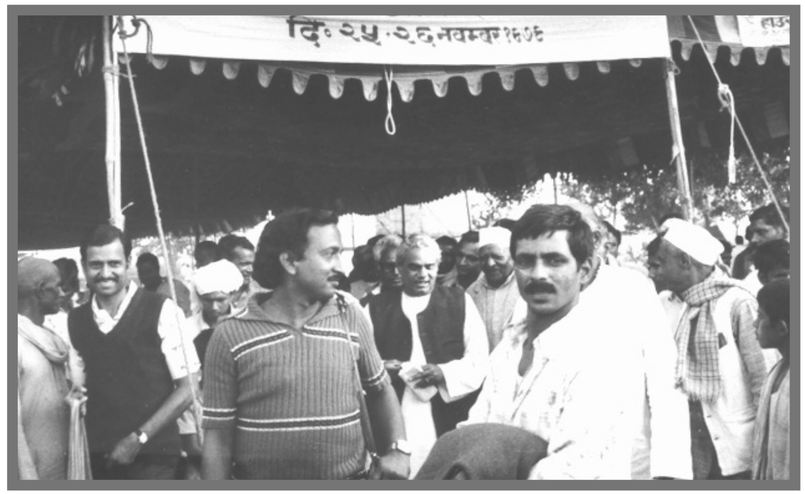

अतिरिक्त, यातायात के आधुनिक साधनों व दूसरी आधुनिक गतिविधियों का विकास और उनकी निरंतर प्रगति भी मुझे अपरिहार्य लगते हैं। इसके अलावा, मुझे कोई और रास्ता नहीं दिखता। भारी उद्योग भी आज की आवश्यकता है और क्या यह सब विशुद्ध ग्रामीण परिवेश में संभव है? व्यक्तिगत तौर पर मेरा मानना है कि भारी और हल्के उद्योगों का यथासंभव विकेन्द्रीकरण होना चाहिए और बिजली का नेटवर्क बन जाने के बाद यह संभव भी है। देश में अगर दो

तरह की अर्थव्यवस्था काम करेगी तो या तो दोनों के बीच द्वंद्व होगा या एक, दूसरे पर हावी हो जाएगी।

लाखों-करोड़ों लोगों के लिए महल बनाने का सवाल नहीं है। लेकिन इसका भी कोई कारण नहीं है कि उन सभी को ऐसे सुविधाजनक व आधुनिक घर मिल सकें जहां वे एक अच्छा संस्कारी जीवन जी सकें। इसमें कोई संदेह नहीं है कि कई भारी-भरकम शहरों में बहुत सी बुराइयां घर कर गई हैं। इनकी निंदा की जानी चाहिए। शायद हमें एक सीमा से अधिक शहरों के विकास पर रोक लगानी होगी, लेकिन साथ ही गांव वालों को इस बात के लिए प्रोत्साहित करना होगा कि वे शहरों की संस्कृति में खुद को ढाल सकें।

उस बात को कई साल हो गए हैं जब मैंने ''हिन्द स्वराज'' पढ़ी थी। आज मेरे दिमाग में उसकी कुछ धुंधली सी यादें हैं। लेकिन जब मैंने उसे 20 या अधिक साल पहले पढ़ा था तब भी वह मुझे अव्यवहारिक लगी थी। उसके बाद के आपके लेखों व भाषणों से मुझे लगा है कि आप भी उस समय से काफी आगे निकल चुके हैं और आधुनिक परिवेश को समझने लगे हैं। इसलिए मुझे तब आश्चर्य हुआ जब आपने कहा कि वह पुरानी तस्वीर आज भी आपके दिमाग में बसी हुई है। आपको मालूम ही है कि कांग्रेस ने उस तस्वीर पर कभी विचार ही नहीं किया। उसे स्वीकार करने की बात तो छोड़ ही दीजिए। आपने स्वयं भी कभी इसके लिए जोर नहीं दिया। एकाध मामूली से अपवाद को छोड़ कर। यह निर्णय आपको करना है कि इस तरह के आधारभूत लेकिन दार्शनिक सवालों पर कांग्रेस को विचार भी करना चाहिए। मुझे लगता है कि कांग्रेस जैसे संगठन को इस तरह की किसी बहस में नहीं उलझना चाहिए, जिससे लोगों के दिमाग में उलझन पैदा हो और वे वर्तमान में काम करने में असमर्थ हो

जाएं। इससे कांग्रेस और देश के दूसरे लोगों के बीच एक दीवार भी खड़ी हो सकती है। ...

आपका ही,
जवाहरलाल

इन पत्रों से स्पष्ट होता है कि गांधी जी अपनी बातों पर अड़े नहीं रहे। उन्होंने नेहरू को सब कुछ सौंप दिया और स्वयं अन्य कामों में उलझ गए।

गांधी जी अपने विचारों के अनुसार एक नमूना तैयार करते और नेहरू को उस दिशा में चलने के लिए बाध्य करते तो आज देश की दुर्दशा न होती। यह जानते हुए कि देश बर्बादी की ओर जाएगा, उन्होंने नेहरू जी के हाथ में सब कुछ छोड़ दिया और स्वयं अन्य कामों में उलझ गए। उसका प्रतिफल आज देश भुगत रहा है।

शुभाकांक्षी

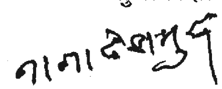

(नाना देशमुख)

नानाजी का व्यक्तित्व इतना प्रभावी था और कार्यक्षेत्र इतना विस्तृत कि उनकी प्रतिभा, उनके विचारों व कर्तृत्व को कुछ पन्नों में समेटना बेहद कठिन है। लेकिन उनके निधन के बाद जानी-मानी हस्तियों ने जो कुछ लिखा, स्तंभकारों ने उन्हें जैसा समझा, उनके सहयोगियों, उनके अनुयायियों व प्रशंसकों ने उनके बारे में जो वर्णन किया, उसकी एक बानगी अगले पृष्ठों में ....

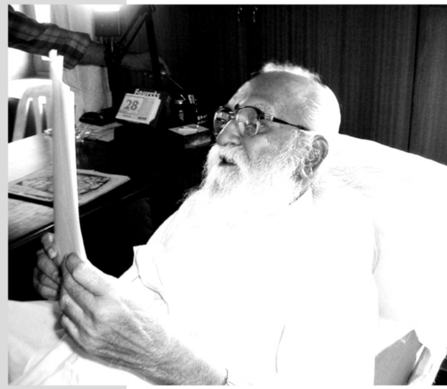

नाना प्रकार के नानाजी

गतिशीलता, असीमित

संघ परिवार की भट्ठी में तपे होने के साथ-साथ अदभुत गतिशीलता के प्रतीक नानाजी में वह योग्यता थी कि जिसके बल पर उन्होंने दलगत सोच की सीमाओं को लांघ कर राष्ट्रीय हित से प्रेरित होकर अपनी आवाज बुलंद की। इस योग्यता के कारण ही वह जेपी आंदोलन को संगठित करने वाले मुख्य व्यक्ति बन सके।

नानाजी देशमुख का देहांत 94 वर्ष की उम्र में हुआ। वह अपने जीवन के अंतिम क्षण तक राष्ट्रीय स्वयंसेक संघ के प्रचारक थे। एक पूर्णकालिक कार्यकर्ता। नानाजी जैसा मिलनसार स्वभाव और उत्साह बहुत ही कम लोगों में होता है। देश के कोने-कोने की यात्रा उन्होंने की थी। वह भारतीय जनसंघ के संस्थापकों में से थे। उनके जैसी पृष्ठभूमि वाले अधिकांश लोग हमेशा एक सीमित समूह में मर्यादित रहते हैं, लेकिन नानाजी हमेशा एक कदम आगे बढ़ने की चेष्टा करते थे। अन्य राजनैतिक दलों, उद्योगों, मीडिया और नागरिक समाज के कार्यकर्ताओं के साथ उनके अभिन्न मित्रों वाले संबंध थे। उन्होंने कभी भी अपने मन की बात कहने में संकोच नहीं किया, भले ही वह बातें उनके अपने राजनैतिक संगठन की आलोचना क्यों न करती हों। उनमें वह योग्यता थी कि दलगत सोच की सीमाओं को लांघ कर सिर्फ राष्ट्रीय हित से प्रेरित होकर अपनी आवाज बुलंद की जाए।

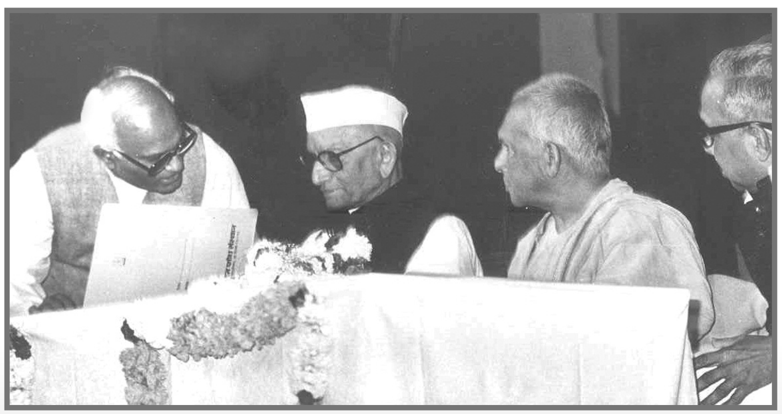

मैं नानाजी से पहली बार तब मिला, जब मैं एक कॉलेज छात्र था। वह दीनदयाल शोध संस्थान में छत पर बने कमरों में रहते थे। जनसंघ के मुख्य संगठन पदाधिकारी होने के बावजूद वह नाममात्र के कर्मचारी रखते थे। संसाधन जुटा सकने की अपनी क्षमता का इस्तेमाल उन्होंने दीनदयाल शोध संस्थान को स्थापित करने में किया था। उनकी अपनी जरूरतें बहुत सीमित थी। उनका निवास आगंतुकों से भरा रहता था। आपातकाल लागू होने के पहले, 1973-75 के दौर में, एक छात्र की हैसियत से मैं उनके पास नियमित जाता रहता था। पटना में हुए जबरदस्त प्रदर्शन के दौरान वह जेपी के साथ थे। लाठी के एक वार से जेपी को बचाने की कोशिश में उनके हाथ में चोट आ गई थी। जेपी आंदोलन को संगठित करने वाले वह मुख्य व्यक्ति थे। उन्हें जेपी का विश्वास प्राप्त था और वह सर्वोदय आंदोलन और गांधी शांति प्रतिष्ठान में जेपी के सहयोगियों के साथ नजदीकी संपर्क में थे। रामनाथ गोयनका, गंगाशरण सिंह और नानाजी सरीखे जेपी के नजदीकी मित्रों ने आंदोलन का दिशा-निर्देशन किया। इन तीनों ने मिल कर सारे गैरकम्युनिस्ट विपक्ष को जेपी के समर्थन में लाकर खड़ा कर दिया। आपातकाल के दौरान वह आपातकाल के विरुद्ध बनी संघर्ष समिति के सचिव पद की स्वाभाविक पसंद थे। उन्होंने अपनी शक्ल सूरत ऐसे बदल ली थी कि कोई उन्हें आसानी से पहचान नहीं सकता था। उन्होंने अपना चिर-परिचित धोती-कुर्ता छोड़कर और उसकी जगह बुशर्ट और पेंट अपना लिया था। उन्होंने मूंछें बढ़ा ली थीं, सिर पर काले किए गए घने बालों के साथ चश्मा भी बदल लिया था। भूमिगत गतिविधियों को संगठित करने के लिए वह देश भर की यात्रा करते रहे। उनके राजनैतिक सहयोगी विभिन्न घरों में उनके ठहरने की व्यवस्था करते थे। आपातकाल के चरम दिनों में, वह दिल्ली के सफदरजंग डेवलेपमेंट एरिया में एक सुरक्षित मकान में रह रहे थे। यहां तक कि उन्हें ठहराने वाला भी नहीं जानता था कि वह हैं कौन। पंजाब प्रदेश जनसंघ के एक नेता कृष्णलाल शर्मा अपने एक साथी के साथ उनसे मिलने आए। पंजाब पुलिस की गुप्तचर शाखा के अधिकारी उनका पीछा कर रहे थे। कृष्णलाल शर्मा और उनके साथी की गिरफ्तारी के सिलसिले में दिल्ली पुलिस ने उस घर की तलाशी ली, जहां नानाजी ठहरे हुए थे। वहां उन्हें एक और व्यक्ति मिला जिसे दिल्ली पुलिस पहचानती नहीं थी। उन्हें पुलिस थाने ले आया गया, जहां उन्होंने अपनी पहचान नानाजी देशमुख के तौर पर स्वीकार की। नानाजी के फोटोग्राफों से मिलान करने पर वह कोई और नजर आते थे, लेकिन आवाज से समानता का पता चलता था। एक बार गिरफ्तार किए जाने के बाद वह तिहाड़ जेल

लेखक परिचय

अरुण जेटली *उन गिने-चुने छात्र नेताओं में से हैं जिन्होंने आपातकाल के विरुद्ध महती भूमिका निभाई थी। केंद्र में वाजपेयी सरकार में वह कई महत्वपूर्ण विभागों के मंत्री रहे। भाजपा में वह कई महत्वपूर्ण पदों पर रह चुके हैं। संप्रति, वह राज्यसभा में विपक्ष के नेता हैं।*

MARCH 4, 2010

The Indian EXPRESS

www.indianexpress.com JOURNALISM OF COURAGE

ARUN JAITLEY

Kindling a movement

Nanaji Deshmukh was a tireless volunteer, till the very end

NANAJI Deshmukh died at the age of 94. Till his death he was an RSS pracharak, a full timer. Very few have possessed the kind of extroverted attitude and dynamism that Nanaji had. He had toured the length and breadth of the country. He was among those who established the Bharatiya Jana Sangh. Most people with his background remained confined to a limited group but Nanaji always endeavoured to step out. He was on first name terms with leaders of other political parties, industry, media, and civil society activists. He never hesitated to speak his mind even if they were critical of the political organisation of which he was a member. He had the ability to raise his voice, unrestrained by partisan thinking and motivated by the national interest.

I first met Nanaji when I was a college student. He used to live in a penthouse in the Deendayal Research Institute. He was the key organisational functionary of the Jana Sangh. He maintained a skeletal staff and used his resourcefulness to establish the institute. His own needs were limited. His home was flooded with visitors. As a student I used to visit him regularly during the 1973-75 period, before the Emergency. He had accompanied JP during the massive demonstration in Patna. He obstructed a lathi assault on JP, injuring his own arm. He was the key person in the organisation of the JP movement. He enjoyed JP's confidence, worked in close contact with JP's associates in the Sarvodaya movement and Gandhi Peace Foundation. JP's close friends like Ramnath Goenka, Ganga Saran Singh and Nanaji guided the movement. Together they mobilised the entire non-Communist Opposition in support of JP.

During the Emergency, he was the natural choice for secretary of the Sangharsh Samiti against the Emergency. He changed his appearance beyond recognition. He discarded his customary kurta-dhoti for a bush shirt and trousers. He had acquired a moustache, a thick crop of dyed black hair on his head and a different pair of eye-glasses. He toured the entire country organising underground activities. His stay in several houses was organised by his political colleagues. Well into the Emergency, he was staying at a safe house in Delhi's Safdarjung Development Area. Even his host did not know as to who he was. Krishan Lal Sharma, then a Punjab BJP leader along with another colleague came to meet him. They were being trailed by officers from Punjab state intelligence. Delhi Police searched the house where Nanaji stayed, in order to arrest Krishan Lal Sharma and his colleague. There they found another gentleman whom they could not recognise. He was taken to the police station where he confessed to his identity as Nanaji Deshmukh. Photographs of Nanaji would show a different man but the voice revealed a similarity. Once arrested he was brought to Tihar jail where in Ward No. 17, I, along with a few detenus, was lodged at the time. When he entered the ward, he decided to play a prank on us. For the first few minutes he did not disclose his identity. It took us a reasonable time after hearing his voice to realise that he was Nanaji Deshmukh.

In jail I found a wonderful human being in him. He was relaxed, read extensively, analysed the political situation. He became friendly with even some Left-oriented detenus. He was even sending words to his colleagues outside to lend financial support to the families of some Left activists who were lodged with us in jail. It was in jail that I discovered his passion for good food.

Nanaji entered the Lok Sabha in 1977 but declined Prime Minister Morarji Desai's offer to be a cabinet minister. He wanted to work for the organisation. He continued to be a key organiser of the Janata Party. The failure of the Janata Party experiment and break up of the Janata Party substantially disheartened him. He was disillusioned. He then took the world by surprise when he announced that was giving up politics at the age of sixty. Most others thought he would be persuaded to reconsider his decision. He stuck to his decision and never looked back at politics from the day he turned sixty. In addition to Deendayal Research Institute, he spent the next 34 years of his life creating institutions for rural reform, ideal villages, educational centres in Gonda, Balrampur and Chitrakoot. He inspired many to contribute in this endeavour. He impacted the life of thousands in the area he worked. In 1999, I watched him again for six years as a nominated member of the Rajya Sabha. All his interventions were non-partisan and statesman-like.

Nanaji had an unusual dynamism. This was tempered with a sense of idealism. He practiced what he proclaimed. He cultivated and nurtured many a relationship throughout his life. Even today there are thousands of civil society activists, political workers, businesspersons, professionals, and industrialists who valued his relationship. His ability to endear himself to people who looked up to him for advice and guidance was immeasurable. Nanaji is no more. The institutions he created, the friends and admirers he left behind will continue to be inspired by him.

C.R. SASIKUMAR

NANAJI ENTERED the Lok Sabha in 1977 but declined Prime Minister Morarji Desai's offer to be a cabinet minister. He wanted to work for the organisation. The failure of the Janata experiment substantially disheartened him.

The writer is a BJP MP in the Rajya Sabha

लाए गए, जहां वार्ड नंबर 17 में कुछ अन्य साथियों के साथ उस समय मुझे रखा गया था। जब मैं वार्ड में घुसा, तो नानाजी को हमारे साथ मजाक करने की सूझी। कुछ मिनट तक उन्होंने अपनी पहचान जाहिर नहीं की। उनकी आवाज सुनकर यह पहचानने में हमें थोड़ा समय लगा कि यह नानाजी देशमुख हैं।

जेल में मुझे उनमें एक अद्‌भुत व्यक्ति के दर्शन हुए। वह पूरी तरह निश्चिंत थे, काफी ज्यादा पढ़ते रहते थे और राजनैतिक स्थिति का विलेषण करते थे। वह कुछ वामपंथी झुकाव वाले बंदियों से भी मित्रवत हो गए थे। हमारे साथ जेल में बंद किए गए कतिपय वामपंथी कार्यकर्ताओं के परिवारों की वित्तीय मदद करने के लिए उन्होंने जेल के बाहर संदेश तक भिजवाए। जेल में मुझे नानाजी की भोजन संबंधी पसंद का अंदाजा हुआ।

1977 में नानाजी लोकसभा में आए, लेकिन केबिनेट मंत्री बनने का प्रधानमंत्री का प्रस्ताव सिरे से ठुकराकर, वह संगठन के लिए काम करना चाहते थे। जनता पार्टी के वह मुख्य संगठनकर्ता थे ही। जनता पार्टी प्रयोग की असफलता और उसके बाद जनता पार्टी के विघटन ने उन्हें काफी उदास कर दिया। वह निराश थे। यह घोषणा करके उन्होंने दुनिया भर को हैरान कर दिया था कि वह 60 की उम्र में राजनीति से सन्यास ले रहे हैं। अधिकांश लोग मानते थे कि बाकी लोग उनको अपने निर्णय पर पुनर्विचार करने के लिए मना लेंगे। वह अपने निर्णय पर डटे रहे और 60 की उम्र के होने के दिन के बाद से उन्होंने कभी पलट कर राजनीति की तरफ नहीं देखा। दीनदयाल शोध संस्थान के अलावा अपने जीवन के बाकी 34 वर्ष उन्होंने ग्रामीण सुधार के लिए संस्थानों, गोंडा, बलरामपुर और चित्रकूट में आदर्श ग्रामों और शिक्षा केन्द्रों का निर्माण करने में लगाए। इस प्रयास में योगदान करने के लिए उन्होंने कई लोगों को प्रेरित किया। उन्होंने जिस क्षेत्र में काम किया, वहां हजारों लोगों के जीवन को प्रभावित किया। 1999 में मैंने उन्हें एक बार फिर 6 वर्ष तक राज्यसभा के मनोनीत सदस्य की हैसियत से देखा। सदन में उनके सारे हस्तक्षेप गैर दलीय और राजनीति की गहरी समझ रखने वाले की भांति थे।

नानाजी की गतिशीलता अद्‌भुत थी। यह आदर्शवाद की छाया से ओतप्रोत थी। वह जो कहते थे, उस पर अमल करते थे। जीवन भर उन्होंने अनेक व्यक्तियों को स्वयं से जोड़ा। आज भी हजारों सामाजिक कार्यकर्ता, राजनैतिक कार्यकर्ता, व्यवसायी, पेशेवर लोग और उद्योगपति ऐसे हैं जो नानाजी के साथ अपने जुड़ाव को अत्यधिक महत्व देते हैं। आने वाले लोगों को अपना मुरीद बना लेने की उनकी क्षमता अपरिमित थी। नानाजी नहीं रहे। लेकिन उन्होंने जिन संस्थानों का सृजन किया और अपने पीछे जो मित्र व प्रशंसक छोड़ गए हैं, वे लगातार उनसे प्रेरित होते रहेंगे। ■

साभार: इंडियन एक्सप्रेस, 4 मार्च, 2010

लेखक परिचय

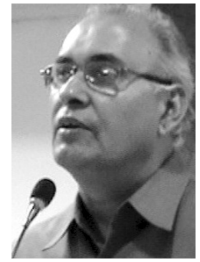

लेखक पूर्व राज्यसभा सदस्य तथा वरिष्ठ स्तंभकार हैं। एकात्म मानवदर्शन के पहले शोधार्थी होने के साथ-साथ लंबे समय तक उन्हें नानाजी के सान्निध्य में काम करने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ। वह संस्थान के सचिव भी रहे।

राजनीतिक कर्मयोगी

दीनदयाल उपाध्याय की हत्या के बाद एकात्म मानववाद के अनुसंधान के लिए नानाजी ने दीनदयाल शोध संस्थान की स्थापना की थी। वे रचनात्मक, वैचारिक और राजनीतिक कार्यों का त्रिवेणी संगम बन गए थे।

नानाजी देशमुख वह शख्सियत हैं जो बीस साल की उम्र में महाराष्ट्र छोड़कर उत्तर प्रदेश आए, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ प्रचारक के नाते। आज देशभर में विद्या भारती के नाम से जो स्कूल चलाए जा रहे हैं, उसकी शुरूआत नानाजी ने ही सरस्वती शिशु मंदिर के रूप में की थी। जब भारतीय जनसंघ की स्थापना हुई तब उत्तर प्रदेश में पंडित दीनदयाल उपाध्याय के साथ ही नानाजी को राजनीतिक क्षेत्र में काम करने का अवसर प्राप्त हुआ। वे दीनदयाल के निकटतम सहयोगियों में से थे। उनके ही नेतृत्व में उत्तर प्रदेश में भारतीय जनसंघ को आरंभिक सफलता प्राप्त हुई। देश में गैरकांग्रेसवाद का जो पर्व शुरू हुआ, उसमें डॉक्टर राममनोहर लोहिया और दीनदयाल उपाध्याय को साथ लाने का श्रेय नानाजी को ही दिया जाता है। भारतीय जनसंघ के एक प्रशिक्षण वर्ग में नानाजी ने राममनोहर लोहिया को दिनभर के लिए आमंत्रित किया था। राममनोहर लोहिया और दीनदयाल उपाध्याय का यह मिलन अंततः देश में गैरकांग्रेसवाद का जनक बना। दीनदयाल उपाध्याय की हत्या के बाद एकात्म मानववाद के अनुसंधान के लिए नानाजी देशमुख ने दीनदयाल शोध संस्थान की स्थापना की थी। वे रचनात्मक,

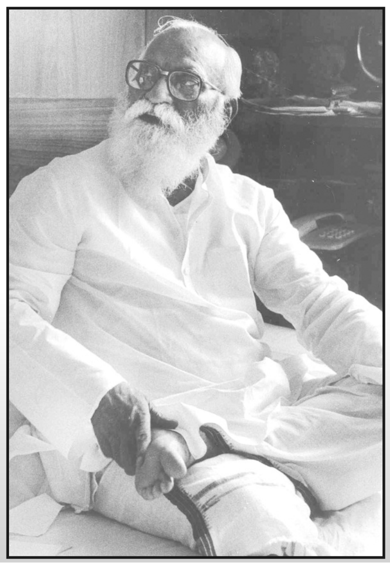

वैचारिक और राजनीतिक कार्यों का त्रिवेणी संगम बन गए थे। जब देश में बिहार और गुजरात के छात्र आंदोलन हुए तब नानाजी ने न केवल उस आंदोलन में कूद पड़े, बल्कि बाबू जयप्रकाश नारायण को इस आंदोलन का नेतृत्व करने के लिए तैयार किया। जब लोकतंत्र को समाप्त करते हुए इमरजेंसी लागू हुई, तब भूमिगत आंदोलन के नेता के रूप में नानाजी ने इमरजेंसी के सत्याग्रहियों का नेतृत्व किया। जेल में रहते हुए देश के सभी गैरकांग्रेसी नेताओं को संगठित करने का काम किया और परिणामस्वरूप जनता पार्टी अस्तित्व में आई। तानाशाही आरोपित करने वाली इंदिरा कांग्रेस पराजित हुई और देश में लोकतंत्र एक कदम आगे बढ़ा। पहली गैरकांग्रेसी सरकार दिल्ली में स्थापित हुई। उन्होंने मंत्री बनने से इनकार कर दिया और अपने-आप को संगठन के कामों और दीनदयाल शोध संस्थान के कामों में लगा दिया। जब उन्होंने जनता पार्टी में नेताओं को आपस में कलह करते हुए देखा तो राजनीति छोड़ने की घोषणा कर दी।

उन्होंने आह्वान किया कि साठ से ऊपर के नेता दलगत राजनीति छोड़ दें और नई पीढ़ी को कमान दें। उन्होंने मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश की सीमा पर चित्रकूट में ग्राम स्वावलंबन और समग्र विकास के प्रकल्प प्रारंभ किए। उनके कामों को देखकर पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने कहा था कि किसी को यह देखना हो कि बिना सरकारों के भी विकास होता है तो उसे चित्रकूट जाकर देखना चाहिए। नानाजी ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक के तौर पर आजन्म ये सब काम किए। प्रभाष जोशी जब नानाजी के प्रकल्पों को देखकर आए तब उन्होंने लिखा कि इस जीवट के ललाट पर तिलक करो। दीनदयाल के एकात्म मानव दर्शन को व्यवहार में उतारने वाले नानाजी एक अदभुत साधक थे। वे अंतिम सांस तक सक्रिय रहे और अपनी मृत्यु को भी उन्होंने अपने शरीर को मेडिकल शोध के लिए दान करके मूल्यवान बना दिया। ■

दैनिक भास्कर

भारत का सबसे तेज बढ़ता अखबार

दैनिक भास्कर sunday राजतंत्र

राजनीतिक कर्मयोगी

दीनदयाल उपध्याय की हत्या के बाद एकात्म मानववाद के अनुसंधान के लिए नानाजी देशमुख ने दीनदयाल शोध संस्थान की स्थापना की थी। वे रचनात्मक, वैचारिक और राजनीतिक कार्यों का त्रिवेणी संगम बन गए थे।

■ डॉ. महेश चंद्र शर्मा

(दीनदयाल शोध संस्थान से संबद्ध)

नानाजी देशमुख वे शख्सियत हैं जो 20 साल की उम्र में महाराष्ट्र छोड़कर उत्तर प्रदेश आए, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ प्रचारक के नाते। आज देशभर में विद्या भारती के नाम से जो स्कूल चलाए जा रहे हैं उसकी शुरुआत नानाजी ने ही सरस्वती शिशु मंदिर के रूप में की थी। जब भारतीय जनसंघ की स्थापना हुई तब उत्तर प्रदेश में पंडित दीनदयाल उपध्याय के साथ ही नानाजी को राजनैतिक क्षेत्र में काम करने का अवसर प्राप्त हुआ। वे दीनदयाल के निकटतम सहयोगियों में से थे। उनके ही नेतृत्व में उत्तर प्रदेश में भारतीय जनसंघ को आरंभिक सफलता प्राप्त हुई। देश में गैर-कांग्रेसवाद का जो पर्व शुरू हुआ उसमें डॉक्टर राममनोहर लोहिया और दीनदयाल उपध्याय को साथ लाने का श्रेय नानाजी को ही दिया जाता है। भारतीय जनसंघ के एक प्रशिक्षण वर्ग में नानाजी ने राममनोहर लोहिया को दिन भर के लिए आमंत्रित किया था।

राममनोहर लोहिया और दीनदयाल उपध्याय का यह मिलन अंततः देश में गैर-कांग्रेसवाद का जनक बना। दीनदयाल उपध्याय की हत्या के बाद एकात्म मानववाद के अनुसंधान के लिए नानाजी देशमुख ने दीनदयाल शोध संस्थान की स्थापना की थी। वे रचनात्मक, वैचारिक और राजनीतिक कार्यों का त्रिवेणी संगम बन गए थे। जब देश में बिहार और गुजरात के छात्र आंदोलन हुए तब नानाजी ने न केवल उस आंदोलन में कूद पड़े बल्कि बाबू जयप्रकाश नारायण को इस आंदोलन का नेतृत्व करने के लिए तैयार करने वालों में नानाजी प्रमुख थे। जब लोकतंत्र को समाप्त करते हुए इमरजेंसी लागू हुई तब भूमिगत आंदोलन के नेता के रूप में नानाजी ने इमरजेंसी के सत्याग्रहियों का नेतृत्व किया। जेल में रहते हुए देश के सभी गैर-कांग्रेसी नेताओं को संगठित करने का काम किया और परिणामस्वरूप जनता पार्टी अस्तित्व में आई। तानाशाही आरोपित करने वाली इंदिरा कांग्रेस पराजित हुई और देश में लोकतंत्र एक कदम आगे बढा। पहली गैर-कांग्रेसी सरकार दिल्ली में स्थापित हुई। उन्होंने मंत्री बनने से इंकार कर दिया और अपने आप को संगठन के कामों और दीनदयाल शोध संस्थान के कामों में लगा दिया। जब उन्होंने जनता पार्टी में नेताओं को आपस में कलह करते हुए देखा तो राजनीति छोड़ने की घोषणा कर दी।

उन्होंने आह्वान किया कि साठ से ऊपर के नेता दलगत राजनीति छोड़ दें और नई पीढी को कमान दें। उन्होंने मध्य प्रदेश और उत्तर प्रदेश की सीमा पर चित्रकू ट में उन्होंने ग्राम स्वावलंबन और समग्र विकास के प्रकल्प प्रारंभ किए। उनके कामों को देखकर पूर्व प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयी ने कहा था कि किसी को यह देखना हो कि बिना सरकारों के भी विकास होता है तो उसे चित्रकूट जाकर देखना चाहिए। नानाजी ने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक के तौर पर आजन्म ये सब काम किए। प्रभाष जोशी जब नानाजी के प्रकल्पों को देखकर आए तब उन्होंने लिखा इस जीवट के ललाट पर तिलक करो। दीनदयाल के एकात्म मानव दर्शन को व्यवहार में उतारने वाले नानाजी एक अद्भुत साधक थे। वे अंतिम सांस तक सक्रिय रहे और अपनी मृत्यु को भी उन्होंने अपने शरीर को मेडिकल शोध के लिए दान करके मूल्यवान बना दिया।

साभार: दैनिक भास्कर, 28 फरवरी, 2010

नानाजी नहीं, सबसे बड़ी संपदा छिन गई

लेखक परिचय

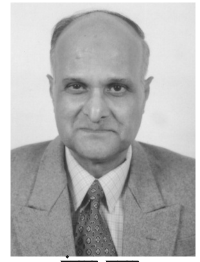

रंगन दत्ता

लेखक पूर्व आईएएस अधिकारी हैं। कपार्ट के महानिदेशक रह चुके हैं। संप्रति, प्रधानमंत्री के मुख्य वैज्ञानिक सलाहकार के कार्यालय में सलाहकार हैं।

27 फरवरी को चित्रकूट में 94 वर्ष की अवस्था में नानाजी देशमुख के निधन के साथ ही देशभक्तों की वह पूरी पीढ़ी समाप्त हो गई, जो आजादी के संघर्ष के साथ पली बढ़ी, लेकिन जिसने ग्रामीण क्षेत्रों में सेवा करने के लिए राजनीति से बाहर रहना पसंद किया। 1977 में जब जनता पार्टी सत्ता में आई थी, तब नानाजी को केबिनेट मंत्री के पद की पेशकश की गई थी। उन्होंने उससे इनकार कर दिया, क्योंकि उन्हें पूरा विश्वास था कि भारत की सूखी धरती, जहां प्राणलेवा गरीबी मजबूती से जड़ें जमाए बैठी है, का तकनीकी और सामाजिक कायाकल्प करना कहीं ज्यादा चुनौतीपूर्ण है। गरीबी से दबे गोंडा जिले को अपने कार्यक्षेत्र के तौर पर चुनने का फैसला सरल नहीं था, जहां चंद दाने उगा सकने की डूबती आस में वर्षा आधारित खेती लोगों का मुख्य आसरा था। नानाजी और दीनदयाल शोध संस्थान के उनके साथियों ने गरीब ग्रामीणों के साथ काम किया और साधारण सस्ती तकनीकों से उन्हें परिचित कराया, जिससे उपज और खेती से आमदनी में वृद्धि हो सके। नानाजी ने मवेशियों, भेड़ों, बकरों और कुक्कुट की देसी प्रजातियों का परम्परागत तकनीकों से युक्त आधुनिक तरीकों से नस्ल-रक्षण पर जोर दिया, ताकि उपज और आमदनी में तेजी से और टिकाऊ ढंग से वृद्धि हो सके। साथ ही उन्होंने दक्षता अर्जित करने और विकास व समाज के विषयों पर निर्णय ले सकने की सामाजिक क्षमता के निर्माण पर भी जोर दिया।

गोंडा के परिणामों से उत्साहित होकर नानाजी भगवान राम की धरती और सूखाग्रस्त बुंदेलखंड के एक भाग, चित्रकूट की ओर बढ़े। वहां उनके प्रयास आसपास के 500 गांवों पर केन्द्रित थे, ताकि कानूनी विवादों की समाप्ति, तकनीकी और सामाजिक सेवाओं के जरिए प्राकृतिक संसाधनों और जैव विविधता के संरक्षण और कृषि-उत्पादकता और आमदनी में वृद्धि के जरिए वहां के निवासियों को आर्थिक, सामाजिक और पारस्परिक तौर पर आत्मनिर्भर बनाया जा सके। समुदाय और प्राकृतिक संसाधनों के प्रबंधन और ग्राम के विकास के नानाजी के इस प्रयोग ने पूर्व राष्ट्रपति

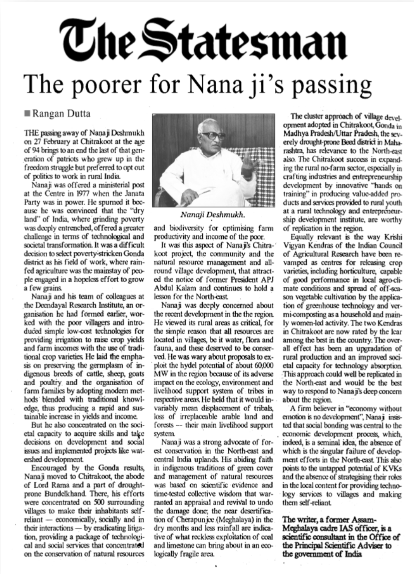

The Statesman

The poorer for Nana ji's passing

■ Rangan Dutta

THE passing away of Nanaji Deshmukh on 27 February at Chitrakoot at the age of 94 brings to an end the last of that generation of patriots who grew up in the freedom struggle but preferred to opt out of politics to work in rural India.

Nanaji was offered a ministerial post at the Centre in 1977 when the Janata Party was in power. He spurned it because he was convinced that the "dry land" of India, where grinding poverty was deeply entrenched, offered a greater challenge in terms of technological and societal transformation. It was a difficult decision to select poverty-stricken Gonda district as his field of work, where rain-fed agriculture was the mainstay of people engaged in a hopeless effort to grow a few grains.

Nanaji and his team of colleagues at the Deendayal Research Institute, an organisation he had formed earlier, worked with the poor villagers and introduced simple low-cost technologies for providing irrigation to raise crop yields and farm incomes with the use of traditional crop varieties. He laid the emphasis on preserving the germplasm of indigenous breeds of cattle, sheep, goats and poultry and the organisation of farm families by adopting modern methods blended with traditional knowledge, thus producing a rapid and sustainable increase in yields and income.

But he also concentrated on the societal capacity to acquire skills and take decisions on development and social issues and implemented projects like watershed development.

Encouraged by the Gonda results, Nanaji moved to Chitrakoot, the abode of Lord Rama and a part of drought-prone Bundelkhand. There, his efforts were concentrated on 500 surrounding villages to make their inhabitants self-reliant — economically, socially and in their interactions — by eradicating litigation, providing a package of technological and social services that concentrated on the conservation of natural resources and biodiversity for optimising farm productivity and income of the poor.

Nanaji Deshmukh.

It was this aspect of Nanaji's Chitrakoot project, the community and the natural resource management and all-round village development, that attracted the notice of former President APJ Abdul Kalam and continues to hold a lesson for the North-east.

Nanaji was deeply concerned about the recent development in the the region. He viewed its rural areas as critical, for the simple reason that all resources are located in villages, be it water, flora and fauna, and these deserved to be conserved. He was wary about proposals to exploit the hydel potential of about 60,000 MW in the region because of its adverse impact on the ecology, environment and livelihood support system of tribes in respective areas. He held that it would invariably mean displacement of tribals, loss of irreplaceable arable land and forests — their main livelihood support system.

Nanaji was a strong advocate of forest conservation in the North-east and central India uplands. His abiding faith in indigenous traditions of green cover and management of natural resources was based on scientific evidence and time-tested collective wisdom that warranted an appraisal and revival to undo the damage done; the near desertification of Cherapunjee (Meghalaya) in the dry months and less rainfall are indicative of what reckless exploitation of coal and limestone can bring about in an ecologically fragile area.

The cluster approach of village development adopted in Chitrakoot, Gonda in Madhya Pradesh/Uttar Pradesh, the severely drought-prone Beed district in Maharashtra, has relevance to the North-east also. The Chitrakoot success in expanding the rural no-farm sector, especially in crafting industries and entrepreneurship development by innovative "hands on training" in producing value-added products and services provided to rural youth at a rural technology and entrepreneurship development institute, are worthy of replication in the region.

Equally relevant is the way Krishi Vigyan Kendras of the Indian Council of Agricultural Research have been revamped as centres for releasing crop varieties, including horticulture, capable of good performance in local agro-climate conditions and spread of off-season vegetable cultivation by the application of greenhouse technology and vermi-composting as a household and mainly women-led activity. The two Kendras in Chitrakoot are now rated by the Icar among the best in the country. The overall effect has been an upgradation of rural production and an improved societal capacity for technology absorption. This approach could well be replicated in the North-east and would be the best way to respond to Nanaji's deep concern about the region.

A firm believer in "economy without emotion is no development", Nanaji insisted that social bonding was central to the economic development process, which, indeed, is a seminal idea, the absence of which is the singular failure of development efforts in the North-east. This also points to the untapped potential of KVKs and the absence of strategising their roles in the local content for providing technology services to villages and making them self-reliant.

The writer, a former Assam-Meghalaya cadre IAS officer, is a scientific consultant in the Office of the Principal Scientific Adviser to the government of India

डा. कलाम का भी ध्यान आकर्षित किया। यह प्रयोग आज भी पूर्वोत्तर के लिए एक सबक है।

नानाजी गांवों में मौजूद जल, वानस्पतिक और जैविक संपदाओं को बेहद महत्वपूर्ण मानते थे और उनके संरक्षण के प्रति चिंतित थे। वह वहां प्रस्तावित 60,000 मेगावॉट की जलविद्युत परियोजना के लेकर भी चिंतित थे, क्योंकि वह यह मानते थे कि इससे पारिस्थितिकी, पर्यावरण और वनवासियों की जीवनदाता प्रणालियों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा। नानाजी पूर्वोत्तर और मध्यभारत के मैदानों में भी वनों के संरक्षण के प्रखर समर्थक थे। हरियाली को बनाए रखने की देशज परम्परा में उनका अटूट विश्वास था, जो वैज्ञानिक साक्ष्यों पर आधारित था और समय की कसौटी पर खरा उतरा था और हो चुके नुकसान की पूर्ति के लिए जिसकी पुनर्स्थापना आवश्यक थी। मेघालय के चेरापूंजी का गर्मी के महीनों में लगभग पूरी तरह रेगिस्तान में बदल जाना और बरसने वाले पानी में कमी होना, इस बात का संकेत है कि कोयले और लाइमस्टोन की अंधाधुंध खुदाई इस पर्यावरणीय तौर पर नाजुक क्षेत्र में क्या कहर ढा सकती है।

चित्रकूट, गोंडा और महाराष्ट्र के बीड जिलों में ग्राम विकास के लिए अपनाई गई क्लस्टर पद्धति पूर्वोत्तर के लिए भी प्रासंगिक है। नई हाथों-हाथ प्रशिक्षण पद्धति से ग्रामीण युवकों द्वारा मूल्य संवर्धित उत्पादों और सेवाओं के सृजन की खेतों के परे के क्षेत्र और विशेषकर हस्तशिल्प उद्योगों और उद्यमिता विकास के विस्तार के प्रयोग को चित्रकूट में मिली सफलता पूर्वोत्तर में दोहराए जाने योग्य है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के कृषि विज्ञान केन्द्रों को जिस प्रकार फसलों की विविधता और स्थानीय परिस्थितियों में उपज बढ़ाने, ग्रीन हाउस तकनीक से गैरमौसम काल में सब्जियों का उत्पादन करने के केन्द्रों में बदलने में जैसी सफलता मिली है, उसे भी दोहराया जा सकता है। इसका प्रभाव ग्रामीण उत्पादन में वृद्धि और तकनीक को अपना सकने में ग्रामीण क्षमता में वृद्धि के रूप में निकला।

नानाजी का दृढ़ विश्वास था कि संभावनाहीन अर्थव्यवस्था विकास नहीं होती और वह हमेशा जोर देते थे कि सामाजिक तानाबाना ही आर्थिक विकास प्रक्रिया का मर्म है। यह विचार वास्तव में एक बीजमंत्र है। कृषि विज्ञान केन्द्रों की क्षमता का पूरा दोहन न हो पाने का कारण भी यही है और इसका अभाव ही पूर्वोत्तर में विकास प्रयासों की असफलता का एकमात्र सबसे बड़ा कारण है। ■

साभार: द स्टेट्समैन, 22 मार्च, 2010

नानाजी, जैसा मैंने उन्हें जाना

उन्होंने एक बार मुझसे कहा था कि जब वह छोटे थे तो उनके पास कई-कई दिन तक खाने के लिए कुछ नहीं होता था। लेकिन इससे वह नक्सलवादी नहीं हो गए।

लेखक परिचय

एस. गुरुमूर्ति

लेखक जाने माने चिंतक, विचारक, अर्थशास्त्री, रणनीतिकार व स्तंभकार हैं। संप्रति, स्वदेशी जागरण मंच के सह-संयोजक हैं।

जिन राजनैतिक और सामाजिक क्षेत्रों पर उनका लगभग छह दशकों तक दबदबा रहा, उनमें 'नानाजी ' के नाम से जाने जाने वाले नाना देशमुख नहीं रहे। राजनीति में और राजनीति के बाहर उनसे प्रेरित होने वाले कई लोगों ने उन्हें एक अत्यंत उत्कृष्ट आदर्शवादी के तौर पर देखा और माना, उनके मित्रों और प्रशंसकों ने उन्हें एक महान राजनैतिक रणनीतिकार के तौर पर आंका और महसूस किया। छोटी उम्र में ही राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से जुड़ने और प्रचारक बनने वाले नानाजी निश्चित तौर पर एक महान संगठनकर्ता थे। हर क्षेत्र में उच्चपदस्थ लोगों में उनके अभिन्न मित्र मौजूद थे। बहुत कम उम्र से ही उन्हें अपनी सांगठनिक बिरादरी से कहीं आगे तक स्वीकार्यता मिलने लगी थी। वह विनोबा भावे के उत्कृष्ट भूदान आंदोलन और दिल्ली की गंदी राजनीति, दोनों में समान रूप से सहज रहते थे। विपक्षियों की कतार में भी उनके मित्र होते थे। जब जवाहरलाल नेहरू ने 1948 में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर प्रतिबंध लगा दिया था, तब नानाजी देशमुख ने भूमिगत आंदोलन संगठित करना शुरू कर दिया था। कहां से? मानो या न मानो, रफी अहमद किदवई के घर से, जो पंडित नेहरू की सरकार में मंत्री थे। यह बात सभी जानते थे कि नेहरू राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ को अपना धुर शत्रु मानते थे और यह घोषणा तक कर चुके थे कि वह (राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के

The Indian EXPRESS
JOURNALISM OF COURAGE

The Indian EXPRESS — THE OP-ED PAGE — 11
www.indianexpress.com — NEW DELHI | WEDNESDAY | MARCH 3 | 2010

S.GURUMURTHY

Nanaji, as I knew him

He was at the vortex of a powerful anti-Congress wave

NANAJI", which is how Nana Deshmukh was known in the political and social circles he dominated for almost six decades, is no more. Many, who were inspired by him in politics and outside, saw and knew him as a towering idealist; his admirers and friends experienced and rated him as a great political strategist. Joining the RSS at a young age and becoming its pracharak (full-time volunteer), he was undoubtedly a great organiser. He had intimate friends in high places everywhere. He was accepted from a very young age beyond his organisational fraternity. He was equally at ease with both the noble Bhoodan movement of Vinobha Bhave and the gutter politics of Delhi. He had friends even in the garrisons of his adversaries. When Jawaharlal Nehru had banned the RSS in 1948, Nanaji Deshmukh, like many RSS workers, began organising the underground movement. From where? Believe it or not, from the house of Rafi Ahmed Kidwai, a minister in Pandit Nehru's government. It was public knowledge that Nehru regarded RSS as his archenemy and had even declared that he would not give an inch in India for the *Bhagwa* (the flag of the RSS) to fly. Still Kidwai, a great friend of Nehru and a minister in his cabinet, had no issues keeping Nanaji in his house and more — allowing him to organise underground activities. This speaks of the magnetic personality of the young Nanaji, who must then have been in his twenties!

My association with Nanaji Deshmukh started with my friendship with Ramnath Goenka. Ramnathji and Nanaji were not only great friends, they both thought and felt similarly about the country. The mutual trust and admiration that they had had was rooted wholly in their love of the motherland, totally devoid of any kind of personal interest. The Nanaji-Ramnathji combine had no goal other than what they thought was the nation's good. Ramnath Goenka had shaped *The Indian Express* not just as a newspaper, but an active partner with all nationalist forces in the cause of the country, setting the agenda for political and social discourse. Ramnathji never knew what fear meant. Nor did Nanaji. And these two courageous persons could effortlessly inject many others of high relevance, journalists or others, with fearlessness. It was the Ramnathji-Nanaji duo that persuaded Jayaprakash Narayan to agree to lead the Bihar movement in 1974, which changed the political picture of the country. The Bihar movement was one of the greatest movements in the history of free India.

An incredible incident made Jayaprakash Narayan agree to the plea of Nanaji and Ramnathji to lead the movement against Indira Gandhi. I came to know of this in late 1980s, when at a dinner in the Express Towers in Bombay I asked Nanaji and Ramnathji how they brought JP into the movement. Nanaji described the thrilling and unbelievable episode. A historic meeting of Ramnathji, Nanaji, Achyut Patwardhan, the hero of the 1942 underground movement and Ramdhari Singh Dinkar, a great Hindi poet, took place sometime in 1973 in *The Indian Express* Guest House in Bangalore. The four of them began insisting that JP should lead the movement as Indira Gandhi had become highly autocratic and had begun destroying the institutional framework of democracy, including the judiciary and bureaucracy. Incidentally, Dinkar was one of the greatest friends of the Nehru family and particularly of Indira Gandhi herself. But that did not detract him from doing what he thought was his duty to the nation. JP was hesitant mainly because of his health. He was a diabetic and had acute prostrate gland issues. He said that he would not be able to live for long and his health did not permit him to undertake such an arduous task. Ramnathji assured him that he would have his prostrate operation done in Vellore, which he eventually got done later. But JP could still not make up his mind. At that point, Ramnathji, a great and traditional Hindu believer, suggested that all of them should go to Tirupati, have darshan and prayers and from there, go to Madras as it was known then, and continue the discussions. And they all left for Tirupati.

During the darshan at Tirupati, Ramdhari Singh Dinkar openly prayed to Lord Balaji, to the hearing of JP and the others, that whatever remaining years of life Dinkar had the Lord should give them to JP to help him serve the cause of the motherland. And they all returned to Madras and to Ramnathji's house in the Express Estates in Mount Road where the office of *The Indian Express* was also situated. Within hours, Ramdhari Singh Dinkar fell on the lap of Ramnath Goenka and died — yes he died when JP, Nanaji and Achyut Patwardhan were around. It was clear that Lord Balaji had answered Dinkar's prayers. JP's decision to lead the movement came in no time. Despite my several requests Nanaji had refused to write about it in *The Indian Express*. When I asked him how will the people of India know about it, he said that he had written in it his diary and he would like it to be known after his death. Now that he is no more, I felt free to write about it.

The rest is known history. After his prostrate operation JP began to lead one of the biggest mass movements against corruption in free India and that led to the imposition of the infamous Emergency on India, arrest of all national opposition leaders and the ban on the RSS. That was the best period in the life of Nanaji. He was one of the initiators of the underground movement that finally exploded as the Janata Wave when in 1977 Indira Gandhi, with a view to securing a mandate for her autocracy declared elections to Parliament, not knowing that without her intelligence agencies having a whiff of it, the underground movement had had generated a political tornado against her. Nanaji was the architect of the Janata Party. He contested elections for the first time and won. He refused to join the ministry when Morarji Desai insisted he should be in the cabinet.

Later, when the Janata Party split and the Bharatiya Janata Party was formed in 1980, Nanaji announced that he would like to retire from active politics as he was attaining the age of 65. A new role — that of a social worker — to lift moral and spiritual values and to promote economic and social wellbeing of the distanced people awaited him. He started his work first in the most backward districts of Gonda in UP and next in the equally drought-prone and poverty-ridden Bead district in Maharashtra and finally settled to do a more comprehensive work of socio-economic progress with moral values covering some 500 villages in Chitrakoot district. The then-president, Dr Abdul Kalam visited Nanaji's Chitrakoot project and praised it as the most suitable to India, noting that almost 80 villages in the district had become litigation-free! That was his final karma bhoomi, even though the whole country was his karma bhoomi.

He once told me that when he was a child he had nothing to eat for many days. But that did not turn him into a Naxalite. But his introduction to the RSS at the right age, and association with the right persons, had turned him into a great nationalist who lived for his motherland's glory and nothing else.

The writer is co-convenor of the Swadeshi Jagran Manch

Nanaji Deshmukh, 1916-2010

ध्वज) भगवा को फहराने के लिए भारत में एक इंच भी जमीन नहीं देंगे। इसके बावजूद नेहरू के अभिन्न मित्र और उनकी केबिनेट के सदस्य किदवई को, नानाजी को अपने घर में रखने और इससे भी बढ़कर भूमिगत गतिविधियां चलाने देने में कोई हर्ज नहीं था। इससे युवा नानाजी के चुम्बकीय व्यक्तित्व का पता चलता है, जो उस समय तीस वर्ष से कम ही उम्र के रहे होंगे।

नानाजी देशमुख के साथ मेरा संबंध रामनाथ गोयनका के साथ मेरी मित्रता से शुरू हुआ। नानाजी और गोयनकाजी दोनों न केवल महान मित्र थे, बल्कि वे देश के बारे में एक जैसा ही सोचते और महसूस करते थे। उनके परस्पर विश्वास और प्रशंसा की जड़ें पूरी तरह अपनी मातृभूमि के प्रति उनके प्रेम में निहित थीं, जिसमें किसी भी तरह के निजी हित का नितांत अभाव था। नानाजी-रामनाथजी की जोड़ी का लक्ष्य उस चीज के अलावा कुछ नहीं था, जिसमें वे अपने देश का हित समझते थे। रामनाथ गोयनका ने इंडियन एक्सप्रेस को सिर्फ एक अखबार के तौर पर नहीं, बल्कि देश की सेवा में लगी सभी राष्ट्रवादी शक्तियों के उद्देश्य के एक सक्रिय भागीदार के तौर पर ढाला था, जिससे राजनैतिक और सामाजिक संवाद का एजेंडा तय हुआ था। भय क्या होता है, रामनाथजी कभी जानते ही नहीं थे, न ही नानाजी जानते थे। इसी जोड़ी ने ही 1974 में जयप्रकाश नारायण को बिहार आंदोलन का नेतृत्व करने के लिए राजी कराया था, जिसने देश का राजनैतिक चित्र बदल कर रख दिया था। बिहार आंदोलन स्वतंत्र भारत के इतिहास के सबसे महान आंदोलनों में से एक था।

एक अविश्वसनीय घटना ने इंदिरा गांधी के खिलाफ जयप्रकाश नारायण को आंदोलन का नेतृत्व करने संबंधी नानाजी और रामनाथजी के आग्रह को स्वीकार करने के लिए तैयार कर दिया। मुझे इसके बारे में जानकारी 1980 के दशक के अंत में तब हुई जब बंबई में एक्सप्रेस टॉवर्स में एक रात्रिभोज के दौरान मैंने नानाजी और रामनाथजी से पूछा कि वे जेपी को इस आंदोलन में कैसे लेकर आए थे। नानाजी ने इस सिहरा देने वाली और अविश्वसनीय घटना का विवरण दिया। रामनाथजी, नानाजी, 1942 के भूमिगत आंदोलन के नायक अच्युत पटवर्धन और हिन्दी के महान कवि रामधारी सिंह दिनकर की एक ऐतिहासिक बैठक 1973 में बंगलौर में इंडियन एक्सप्रेस के गेस्ट हाउस में हुई थी। चारों इस बात पर जोर देने लगे कि जेपी को आंदोलन का नेतृत्व करना चाहिए, क्योंकि इंदिरा गांधी बेहद तानाशाह हो गई हैं और वह न्यायपालिका और नौकरशाही सहित लोकतंत्र के संस्थागत ढांचे को नष्ट करना शुरू कर चुकी हैं। संयोगवश, दिनकरजी नेहरू परिवार के और विशेषकर खुद इंदिरा गांधी के सबसे महान मित्रों में से एक थे। लेकिन इसने उन्हें उस बात से विचलित नहीं होने दिया, जिसे वह राष्ट्र के प्रति अपना कर्तव्य समझते थे। जेपी मूलतः अपने

स्वास्थ्य के कारण अनमने थे। वह मधुमेह के रोगी थे और उन्हें पौरुष ग्रंथि की बहुत ज्यादा समस्या थी। उन्होंने कहा कि वह लंबे समय तक जी नहीं पाएंगे और उनका स्वास्थ्य इतना कठिन काम करने की अनुमति नहीं देता है। रामनाथजी ने उन्हें विश्वास दिलाया कि वह वेल्लौर मे उनका पौरुष ग्रंथि की शल्य चिकित्सा करवा देंगे, जो कि बाद में करवा दी गई थी। लेकिन जेपी फिर भी अपना मन नहीं बना पा रहे थे। इस पर रामनाथजी ने सुझाव दिया कि वह सभी तिरुपति चलें, दर्शन और पूजा करके वहां से मद्रास चलें और फिर यह बातचीत जारी रखी जाए। इसके बाद वे सभी तिरुपति चले गए।

तिरुपति में दर्शन के दौरान रामधारी सिंह दिनकर ने खुले आम भगवान बालाजी से प्रार्थना की, जिसे जेपी और अन्य लोगों ने भी सुना कि उनके जीवन के जितने भी वर्ष बचे हैं, ईश्वर वह जेपी को दे दें ताकि वह मातृभूमि की सेवा कर सकने में समर्थ हो सकें। इसके बाद वे सभी मद्रास में माउंट रोड में एक्सप्रेस इस्टेट में रामनाथजी के घर पहुंचे जहां इंडियन एक्सप्रेस का दफ्तर भी था। कुछ ही घंटे बाद रामधारी सिंह दिनकर रामनाथ गोयनका की गोद में गिर पड़े और उन्होंने प्राण त्याग दिए। जी हां, उनकी मौत हो गई और जेपी, नानाजी और अच्युत पटवर्धन वहीं थे। आंदोलन का नेतृत्व करने का फैसला जेपी ने तुरंत कर लिया। मेरे कई बार के आग्रह के बावजूद नानाजी ने इस बारे में इंडियन एक्सप्रेस में लिखने से इनकार कर दिया। जब मैंने उनसे पूछा कि इस बारे में देश के लोगों को जानकारी कैसे होगी, तो उन्होंने कहा कि उन्होंने इस बारे में अपनी डायरियों में

સંસ્મરણ | એસ. ગુરુમૂર્તિ (સહ-સંયોજક, સ્વદેશી જાગરણ મંચ)

નાનાજી : જેવા મેં જોયા અને જાણ્યા

તેઓ કૉંગ્રેસ વિરોધી વાવાઝોડાનું કેન્દ્રબિંદુ હતા

લિખા है और वह चाहेंगे कि उनकी मृत्यु के बाद यह जानकारी उजागर हो। अब जबकि वह इस दुनिया में नहीं हैं, मैं इस बारे में लिखने में स्वतंत्रता महसूस करता हूं।

इसके बाद जेपी ने स्वतंत्र भारत में भ्रष्टाचार के विरुद्ध एक सबसे बड़े जनांदोलन का नेतृत्व किया और इसके परिणामस्वरूप भारत में कुख्यात आपातकाल लागू किया गया, विपक्ष के सारे राष्ट्रीय नेताओं को गिरफ्तार कर लिया गया। नानाजी उस भूमिगत आंदोलन की शुरूआत करने वालों में से एक थे, जो अंततः 1977 में उस समय जनता लहर बनकर प्रस्फुटित हुआ, जब इंदिरा गांधी ने अपनी तानाशाही पर जनता की मुहर लगवाने के लिए संसद के चुनावों की घोषणा कर दी थी। जनता पार्टी के शिल्पी नानाजी पहली बार चुनाव लड़े और विजयी रहे। परंतु जब मोरारजी ने बहुत आग्रह किया कि उन्हें मंत्री होना चाहिए, तो उन्होंने मंत्री बनने से इनकार कर दिया।

बाद में 1980 में जब जनता पार्टी का विभाजन और भाजपा का गठन हुआ, तो नानाजी ने घोषणा की कि चूंकि वह 65 वर्ष के हो रहे हैं, इसलिए वह राजनीति से रिटायर होना चाहेंगे। सामाजिक कार्यकर्ता की एक नई भूमिका उनकी प्रतीक्षा कर रही थी। उन्होंने अपना कार्य सबसे पहले उत्तरप्रदेश के सबसे पिछड़े गोंडा जिले से शुरू किया, फिर महाराष्ट्र के उतने ही सूखाग्रस्त और गरीबी की मार झेलने वाले बीड जिले में किया और अंततः चित्रकूट जिले के करीब 500 गांवों में नैतिक मूल्यों के साथ सामाजिक-आर्थिक विकास का एक अपेक्षाकृत ज्यादा व्यापक कार्य करने में जुट गए। तत्कालीन राष्ट्रपति डॉ. अब्दुल कलाम ने नानाजी के चित्रकूट प्रकल्प का दौरा किया था और यह देखते हुए कि जिले के लगभग 80 गांव मुकदमेबाजी से पूरी तरह मुक्त हो गए हैं, इसे भारत के लिए सबसे उपयुक्त प्रकल्प करार दिया था।

उन्होंने एक बार मुझसे कहा था कि जब वह छोटे थे तो उनके पास कई कई दिन तक खाने के लिए कुछ नहीं होता था। लेकिन इससे वह नक्सलवादी नहीं हो गए। सही उम्र पर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से परिचय और सही लोगों के संसर्ग ने उन्हें एक महान राष्ट्रवादी बना दिया, जो केवल अपनी मातृभूमि के गौरव के लिए जिए। ■

साभार: द इंडियन एक्सप्रेस, 3 मार्च, 2010
व साधना साप्ताहिक अहमदाबाद, 20 मार्च, 2010

नानाजी के जीवन का सबसे सरल लेखा-जोखा यह है कि उन्होंने गांधीजी की आत्मनिर्भर ग्रामीण संकल्पना को सिद्ध कर दिया। उनका ग्रामीण भारत के विकास का माडल आर्थिक व नैतिक दोनों ही धरातल पर खरा है।

उपमन्यु हजारिका

नानाजी ने दिखाया आत्मनिर्भरता का रास्ता

राजनीति से संन्यास लेने के बाद नानाजी ने अपने जीवन के अंतिम दो दशक जिस चित्रकूट में बिताए, वह वह महात्मा गांधी के आत्मनिर्भर ग्रामीण समुदाय के आदर्श की व्यवहार्यता को सिद्ध करता है। ग्रामीण भारत के विकास का एक मॉडल उनकी निस्वार्थ सेवा में पाया जा सकता है।

नानाजी देशमुख की विरासत का एक साधारण आकलन यह होगा कि उन्होंने महात्मा गांधी के आत्मनिर्भर ग्रामीण समुदाय के आदर्श की व्यवहार्यता को निर्णायक तौर पर सिद्ध करके दिखा दिया और वह भी मात्र अंतिम दो दशकों में। उस दौर में जब 65 प्रतिशत जनसंख्या का भरण-पोषण करने वाले कृषि क्षेत्र का सकल घरेलू आय में योगदान मात्र 20 प्रतिशत है, रामराज्य के आदर्श की प्राप्ति की दिशा में चित्रकूट में दीनदयाल शोध संस्थान के माध्यम से नानाजी के प्रयास ग्रामीण भारत के आर्थिक और नैतिक दोनों तरह के विकास का एक सिद्ध मॉडल उपलब्ध कराता है। सबसे अहम साक्ष्य है - इस देश में, जहां 80 प्रतिात ग्रामीण जनसंख्या सीमांत किसानों की है, छह लोगों के परिवार के लिए ढाई एकड़ की सीमांत जोत की आर्थिक व्यवहारिक प्रर्दशित करना।

600 गांवों वाला चित्रकूट पांच भिन्न आधारों पर एक अनूठा उदाहरण है। प्रथम, यह आत्मनिर्भर ग्रामीण समुदाय के आदर्श को स्थापित और सिद्ध करता है। दूसरे, यह सरकारी नीतियों के क्रियान्वयन और उसका परिणाम वांछित वर्ग तक पहुंचाने की प्रणाली में मौजूद एक अहम अंतर को पाटता है, तीसरे, इसका जोर गांवों को सदा के लिए निर्भर बनाने के बजाए आत्मनिर्भर बनाने

The Indian EXPRESS
JOURNALISM OF COURAGE

Nanaji made self-reliance work

Upamanyu Hazarika

Chitrakoot, where Nanaji Deshmukh spent the last two decades of his life after giving up politics, demonstrates the viability of Mahatma Gandhi's ideal of self-reliant village communities. A model of development for rural India can be found in his selfless service

पर है। चौथे, पूरी प्रक्रिया सारे क्रियाकलापों और गतिविधियों को परिभाषित करके, अंगीकृत करके और उसे अमल में लाकर चलाई गई है, जिसे वांछित परिणामों की दृष्टि से नियमित तौर पर आंका और परखा जाता है। इससे एक ऐसा मॉडल तैयार हो जाता है, जिसे देश भर में कहीं भी लागू किया जा सकता है। पांचवे और संभवतः सबसे महत्वपूर्ण तौर पर है, सारी गतिविधियों का उच्च स्तर की नैतिकता में पगा होना जो कि रामराज्य का एक मूलभूत गुण है और हमारी राजनीति के नैतिक उन्नयन का एक मंच है।

तथ्यों पर विचार करें- 1991 में जब नानाजी ने चित्रकूट में कदम रखे थे, तो यह एक अर्ध-शुष्क क्षेत्र था, जो उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश के बीच में फैला हुआ था और जहां भूमिगत जल का स्तर 250 से 300 फीट की गहराई पर था, एक फसल वाली सीमांत जोत थी, लोगों को बार-बार जल-जनित रोग होते थे और प्रवास पर जा चुके लोगों द्वारा घर भेजी जाने वाली रकम के बिना टिकाऊ जीवनयापन असंभव था।

आज न केवल प्रवास पर जाना रुक गया है, बल्कि लोग अपने घर लौटने लगे हैं और सीमांत जोत (1.5 एकड़ सिंचित और 2.5 एकड़ असिंचित) अब छह लोगों के परिवार का जीवनयापन कर रही है। नानाजी ने भगवान राम के वनवास से प्रेरित होकर चित्रकूट का चयन किया था, जिन्होंने शासन की शक्ति के बिना ही दमित और परेशान वर्गों को आत्मनिर्भरता और आत्मविश्वास का मार्ग दिखाया था। वह अपने निकट मित्र पं दीनदयाल उपाध्याय की विचारधारा से प्रेरित थे। यह मॉडल, अपेक्षाकृत छोटे पैमाने पर उत्तरप्रदेश के गोंडा और महाराष्ट्र के बीड में दोहराया गया है। सारी गतिविधियों का अभिकेन्द्र एक स्नातक दंपति है, जिसे समाज शिल्पी दंपति कहा जाता है। वे गांव में रहते हैं और पांच गांवों के एक वर्ग का दायित्व उन पर होता है। दीनदयाल शोध संस्थान के सारे कार्यक्रम इस स्नातक दंपति के जरिए क्रियान्वित होते हैं। वे लोग प्रत्येक क्रियाकलाप और उसके परिणामों को दर्ज करते हैं, अपने दायित्व क्षेत्र के ग्रामीणों को शिक्षा और सरकारी कार्यक्रमों और योजनाओं तक पहुंचने में समर्थ बनाने के लिए जिम्मेदार होते हैं और सावधानीपूर्वक की गई प्रविष्टियों के लिए जिम्मेदार होते हैं, जो आकलन और आयोजना के लिए महत्वपूर्ण आंकड़ों का स्रोत होती हैं।

जिस ढंग से आत्मनिर्भरता और सशक्तिकरण का विस्तार किया गया है, वह विभिन्न क्षेत्रों में चल रही योजनाओं से स्पष्ट है। लोगों के साधारण रोगों का उपचार आयुर्वेद और प्राकृतिक चिकित्सा से किया जाता है। स्थानीय तौर पर उपलब्ध आयुर्वेदिक जड़ी-बूटियों और उनकी औषधियों को एक सचल चिकित्सा किट में रख कर समाज शिल्पी दंपतियों को सौंप दिया जाता है। 10,000 की जनसंख्या पर एक डॉक्टर की उपलब्धता को देखते हुए साधारण रोगों के उपचार की दृष्टि से यह मंहगी अंग्रेजी दवाइयों की तुलना में ज्यादा व्यावहारिक होती है। आयुर्वेद में शोध का काम टाटा द्वारा वित्तपोषित एक संस्थान में किया जाता है, जहां नई औषधियां विकसित की जाती

हैं। रोचक बात यह है कि जेआरडी टाटा आरोग्यधाम संस्थान ने एक रुपए से भी कम लागत वाली लकड़ी के गर्म कोयले से पानी को साफ करने की एक विधि विकसित की है, जो बाजार में उपलब्ध टाटा के अपनी जल साफ करने की प्रणाली से भी सस्ती है। उद्देश्य यह है कि चिकित्सा उत्पादों को बाजार में लाने का काम और तेज किया जाए, जिससे इस काम को भी एक लाभ देने वाले केन्द्र में बदला जा सके।

कृषि उपज और उत्पादकता का यह कायाकल्प एक प्रभावी वाटरशेड प्रबंधन के जरिए संभव हो सका है, जिसमें सरकारी अनुदानों और आईसीएआर के कृषि विज्ञान केन्द्रों का प्रयोग किया गया है। कृषि विज्ञान केन्द्रों की जल-संचय तकनीकों ने अद्भुत परिणाम दिखाए हैं, कुछ स्थानों पर भूमिगत जल का स्तर 150 फीट तक बढ़ गया है, जिससे सिंचाई और उसके फलस्वरूप कई फसल लेना संभव हो सका है। कई फसल उपजाने के अलावा सीमांत जोत की व्यवहार्यता साथ-साथ फल उगाने और पशुपालन के जरिए बढ़ाई गई है। समाज शिल्पी दंपतियों के नियमित हस्तक्षेप और देखरेख के जरिए दीनदयाल शोध संस्थान सिंचित और असिंचित दोनों किस्म के सीमांत जोत वालों के लिए विभिन्न आर्थिक गतिविधियों (फसल, फल और सब्जियां, पशुपालन) के एक आदर्श संतुलन को स्थापित कर सका है। इस उपलब्धि के महत्व को शब्दों में बयान नहीं किया जा सकता है।

इस उत्पाद के मूल्य संवर्धन की श्रृंखला आगे बढ़ती है उद्यमिता विद्यापीठ से, जहां वाणिज्यिक बिक्री के लिए कृषि उत्पादों को प्रसंस्करित और पैकेज किया जाता है। प्रत्येक गतिविधि को आत्मावलंबी बनाने की नानाजी की दृष्टि के अनुरूप भूमिहीन श्रमिकों को प्रशिक्षण देते हैं, जहां उन्हें स्वसहायता समूह बनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

शिक्षा के क्षेत्र में भी नवीन गुरुकुल प्रणाली अपनाई गई है। प्रत्येक गुरुकुल में 80 बच्चे रहते हैं और सेवानिवृत दंपति 10 बच्चों का ध्यान रखते हैं। इन सारी गतिविधियों का सबसे अहम पक्ष है प्रत्येक मोड़ पर प्रबंधन के तरीके और संसाधनों का सुधार सुनिश्चित करना जो व्यापक स्तर पर सूचना प्रबंधन और आयोजन से सुनिश्चित होती है। नानाजी की दूरदृष्टि में ऐसी टीम का निर्माण भी शामिल था, जो उनके सपनों को क्रियान्वित कर सके और उनकी विरासत को आगे बढ़ा सके। उनके उत्तराधिकारियों में वसंत पंडित और डा. भरत पाठक, डा. नंदिता पाठक और जेह वाडिया शामिल हैं। यह बताना अहम है कि नानाजी ने चित्रकूट में 1991 में कदम रखे थे, जब उनकी अवस्था 77 वर्ष की थी। इस संक्षिप्त अवधि में ही उन्होंने आत्मनिर्भर ग्रामीण समुदाय की व्यवहार्यता को सिद्ध कर दिखाया। हमारे नीतिनिर्माता ग्रामीण समुदाय को पहले ही भूल चुके हैं, उन्हें सिर्फ नरेगा जैसी पैसे बांटने की योजनाओं के लायक समझते हैं, जो उन्हें सशक्त बनाने की बजाए सदा के लिए निर्भर बना देने वाली होती है। दुर्भाग्य से, आज के राजनैतिक वर्ग के लिए राजनीति एक व्यवसाय है, जिसका सारा जोर ज्यादा से ज्यादा पैसा कमाने पर है, ताकि अपने विरोधियों को पैसे के जोर से या विभाजित करके पराजित किया जा सके। इस राजनीति में नानाजी की उपलब्धियों की लगातार अनदेखी की जाती है। ■

साभार: द इंडियन एक्सप्रेस, 3 मार्च, 2010

संघ का आदमी

मुश्किल है नानाजी को सांचे में ढालना

नानाजी को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का एक वरिष्ठ नेता बताया गया है, लेकिन उस व्यक्ति को किसी एक ढांचे में फिट करना कठिन है, जिसने रचनात्मक सामाजिक सक्रियता का अपना पथ खुद तैयार किया था।

अगर सफेद रंग त्याग का होता है, तो यह नानाजी देशमुख पर पूरी तरह जंचता था। आधुनिक युग के इस महान सन्यासी का, जिनका 27 फरवरी को 94 वर्ष की उम्र में चित्रकूट में स्वर्गवास हो गया, यह पसंदीदा रंग था। सफेद बेदाग धोती कुर्ते में, सफेद झूलती दाढ़ी, वह पूरी तरह वैसे ही योगी लगते थे, जैसे योगी वह थे।

हालांकि मीडिया ने नानाजी को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का एक वरिष्ठ नेता बताया है, लेकिन वास्तव में उस व्यक्ति को किसी एक ढांचे में फिट कर सकना कठिन है, जिसने 1977 के बाद रचनात्मक सामाजिक सक्रियता का अपना भिन्न पथ खुद तैयार किया था। कोई संदेह नहीं कि वह राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के संस्थापक डॉ. केशव बलिराम हेडगेवार के बिल्कुल शुरूआती अनुयायियों में से एक थे और उन्होंने प्रचारक के रूप में उत्तर भारत में संगठन के निर्माण में बहुत बड़ा योगदान दिया था। लेकिन पंडित दीनदयाल उपाध्याय के नेतृत्व में जनसंघ के संगठनकर्ता के रूप में उन्होंने कहीं बड़ी छाप छोड़ी थी। 1968 के आरंभ में उपाध्याय की असामयिक मृत्यु के बाद पार्टी को कठिन दौर से बाहर निकालने में उन्होंने अटलबिहारी वायपेयी और लालकृष्ण आडवाणी की मदद की थी।

1970 के दशक की शुरूआत में, जब जयप्रकाश नारायण इंदिरा गांधी के तानाशाह शासन के खिलाफ गैरकांग्रेसी विपक्ष के नेता के तौर पर उभरे, तो संपूर्ण क्रांति का संदेश आगे ले जाने के लिए उन्हें नानाजी के रूप में एक योग्य सेनापति मिला। जाने-माने समाजवादी जेपी को नानाजी जनसंघ के नजदीक ले आए, यहां तक वह उन्हें मार्च 1975 में जनसंघ के पूर्ण अधिवेशन में भी एक विशेष अतिथि के तौर पर आने के लिए राजी करने में सफल रहे। जब कुछ लोगों ने एक फासिस्ट पार्टी के ज्यादा ही नजदीक चले जाने के लिए जेपी की आलोचना की, तो जेपी ने जनसंघ के ही मंच से यह प्रसिद्ध घोषणा की, 'अगर जनसंघ फासिस्ट है, तो जयप्रकाश नारायण भी फासिस्ट है.' और उन्होंने भविष्यवाणी करने के अंदाज में कहा था, 'फासिज्म का सूरज कहीं और उग रहा है।' इसके तीन महीने बाद ही आपातकाल लागू कर दिया गया था।

नानाजी आपातकाल के खिलाफ चले भूमिगत संघर्ष के नायकों में से एक थे। लेकिन जब 1977 में जब आपातकाल हटा और जनता पार्टी भारी बहुमत से चुनाव जीती, तो उन्होंने मंत्रिमंडल में शामिल होने का प्रधानमंत्री मोरारजी देसाई का प्रस्ताव ठुकरा दिया था। उन्हें इस बात का अफसोस था कि सत्ताकेन्द्रित राजनीति समाज में विभाजन पैदा कर रही है। लिहाजा उन्होंने इसे त्याग दिया, ग्रामीण विकास के अपने स्वप्न को क्रियान्वित करने के लिए चित्रकूट चले गए और फिर कभी पलट कर नहीं देखा। दो जिलों - एक उत्तरप्रदेश का और एक मध्यप्रदेश का- में सूक्ष्म स्तर पर उन्होंने जो काम खड़ा किया, बहुत प्रभावशाली था और उसे रतन टाटा से लेकर एपीजे अब्दुल कलाम तक चित्रकूट जाने वाले हर व्यक्ति की प्रशंसा मिली। उन्होंने भारत का पहला ग्रामीण विश्वविद्यालय स्थापित किया। उन्होंने जो कृषि विज्ञान केन्द्र स्थापित किए, वह देश में सर्वश्रेष्ठ में से एक हैं।

एक किसान ने कहा- हमारे गांव से पिछले छह वर्ष से कोई भी व्यक्ति गांव छोड़ कर शहर नहीं गया है। यह वह सबसे अच्छी श्रद्धांजलि है, जो इस अद्भुत सामाजिक कार्यकर्ता को दी जा सकती है, जो आंशिक तौर पर संघ का स्वयंसेवक था, थोड़ा गांधीवादी था और थोड़ा समाजवादी। ■

RSS man? Difficult to typecast Nanaji

Sudheendra Kulkarni

If white is the colour of renunciation, it suited Nanaji Deshmukh perfectly. It was the favourite colour of this great modern-day sanyasi who passed away in Chitrakoot on February 27 at age 94. Clad in spotless white dhoti and kurta, and sporting a flowing white beard, he looked every bit the yogi he was.

NANAJI DESHMUKH: AN APPRAISAL

Although the media have described Nanaji as a veteran RSS leader, its really difficult to typecast a man who carved his own distinctive path of constructive social activism after 1977. True, he was one of the earliest followers of Dr Keshav Baliram Hedgewar, the founder of the RSS, and made an immense contribution to building the organization as a pracharak in north India. But he made a greater mark as an organizer of the Bharatiya Jana Sangh under the leadership of Pandit Deendayal Upadhyaya. After Upadhyaya's untimely death in early 1968, he assisted Atal Bihari Vajpayee and L K Advani in steering the party through difficult times.

When Jayaprakash Narayan emerged as the leader of the non-Congress opposition to Indira Gandhi's authoritarian rule in the early 1970s, he found in Nanaji an able lieutenant to carry the message of Sampoorna Kranti (total revolution). Nanaji brought JP, who was an eminent socialist, closer to the Jana Sangh, even persuading him to attend, as a special guest, the party's plenary session in March 1975. When some people criticized JP for getting too close to a fascist party, JP famously declared from the Jana Sangh platform itself: "If Jana Sangh is fascist, then Jayaprakash Narayan is also a fascist." He also presciently added: "The sun of fascism is rising somewhere else." Within three months came the Emergency.

Sushma Swaraj pays her last respects to Nanaji Deshmukh in Delhi

Nanaji was one of the heroes of the underground struggle against the Emergency. However, when the Emergency was lifted in 1977 and the Janata Party won a landslide victory in the ensuing Lok Sabha elections, he declined Prime Minister Morarji Desai's offer to join his cabinet. He lamented that power-oriented politics created divisions in society. He therefore renounced it, went to Chitrakoot to implement his vision of rural development, and never looked back. What he achieved there on a micro-scale in two districts, one in UP and the other in MP, was impressive and earned kudos from everybody who visited Chitrakoot — from JRD Tata to A P J Abdul Kalam. He established India's first rural university. The Krishi Vigyan Kendras that he set up were among the best in the country.

"Nobody from our village has migrated to cities in the past six years," said a farmer. That is the best tribute anyone could pay to this remarkable social activist who was part RSS, part Gandhian and part socialist.

(The writer is a columnist and a former aide to Atal Bihari Vajpayee)

लेखक परिचय

सुधींद्र कुलकर्णी

जाने-माने पत्रकार व स्तंभकार सुधींद्र कुलकर्णी को नानाजी के साथ काम करने का अवसर मिला तो प्रधानमंत्री रहते हुए अटल जी ने भी उनके अनुभव का लाभ प्रधानमंत्री कार्यालय में भी उठाया।

साभार: द टाइम्स ऑफ इंडिया, 1 मार्च, 2010

पहल और प्रयोग के पक्षधर

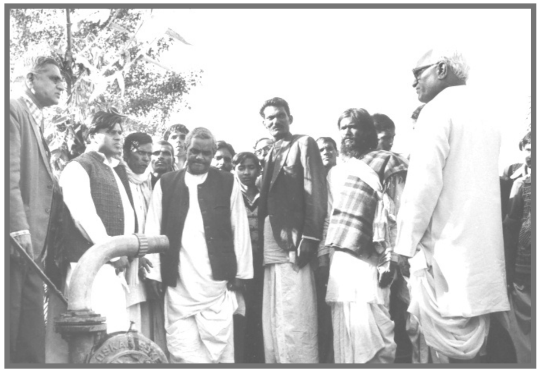

कुछ हट के सोचना और नया कर दिखाना नानाजी की विशेषता थी। वे कल्पना दारिद्रय के शिकार नहीं थे। अभाव और असुविधाएं उन्हें कभी नहीं रोक पाईं।

नानाजी से मेरी पहली मुलाकात 1962 में वाराणसी में एक प्रशिक्षण कार्यक्रम के दौरान हुई। वहां अपने उद्बोधन में उन्होंने दीनदयालजी की विचारधारा के बारे में सबको बहुत अच्छे से समझाया। वहीं से मेरे और नानाजी के बीच एक संबंध की शुरुआत हुई। निर्लिप्त भाव से पर पूरी लगन के साथ काम करना नानाजी की विशेषता थी। काम में पूरी तरह रमे होने के बावजूद वे व्यक्ति, मुद्दे और आंदोलन के प्रति वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण रखते थे।

नानाजी ने काफी लंबे समय तक जनसंघ के संगठन मंत्री का दायित्व निभाने के साथ-साथ उसके लिए पैसा भी जुटाया। लेकिन साधन शुचिता उनके लिए सर्वोपरि थी। उनका मानना था कि उद्योगपतियों को पार्टी की नीतियों को प्रभावित करने का अधिकार नहीं दिया जाना चाहिए। एक बार बिड़ला घराने के लोग किसी खास उम्मीदवार को आर्थिक मदद देना चाहते थे, लेकिन नानाजी ने मना कर दिया। उनका मानना था कि चंदा पार्टी के नाम पर आना चाहिए न कि किसी व्यक्ति के नाम पर। बेशक नानाजी का संबंध बड़े-बड़े उद्योगपतियों से था, लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि वे आम आदमी से दूर थे। जितने आराम से वे रामनाथ गोयनका के पेंटहाउस में रहते थे, उतने ही आराम से वे बिहार के किसी गांव में खलिहान में पड़ी खाट पर सो लेते थे।

1969 में पटना में जब जनसंघ का अखिल भारतीय सम्मेलन हुआ तो मुझे नानाजी के साथ काम करने का फिर मौका मिला। रहन-सहन और कार्यपद्धति से जुड़ी कुछ आदतों के बारे में नानाजी की एक अलग सोच थी। वे चाहते थे कि सभी कार्यकर्ता उन पर अमल करें। उदाहरण के लिए वे कहते थे कि सादे जीवन का मतलब व्यक्तिगत स्वच्छता का अभाव नहीं होता। वे साधारण लेकिन धुले और इस्त्री किए हुए कपड़े ही पहनते थे। वे अपने जूतों की रोज पालिश करना नहीं भूलते थे। हमेशा खुश रहना नानाजी की सबसे बड़ी खूबी थी। वे प्रायः मुझसे कहते थे, 'यदि तुम बहुत अधिक व्यस्त हो, तब भी उसे जाहिर मत होने दो। खुश रहो और स्वस्थ रहो। एक बीमार आदमी सहानुभूति अर्जित कर सकता है, किसी को प्रेरित नहीं कर सकता।' कुछ हट के सोचना और नया कर दिखाना नानाजी की विशेषता थी। वे कल्पना दारिद्रय के शिकार नहीं थे। अभाव और असुविधा की सीमाएं उन्हें कभी नहीं रोक पाईं। वो नित नए प्रयोगों के पक्षधर थे। उत्तर प्रदेश में पहली बार उन्होंने शिशु मंदिर के नाम से शिक्षा के क्षेत्र में एक बड़ा प्रयोग किया। काम के दौरान आने वाले विरोधाभासों को उजागर करने की बजाय उनका जोर सामंजस्य बिठाने पर होता था। आपातकाल लागू होने के ठीक पहले 1974 का वह दौर मुझे याद है, जब संघ परिवार में इंदिरा विरोधी आंदोलन में शामिल होने को लेकर असमंजस की स्थिति थी। ऐसे में नानाजी ने अपनी ओर से पहल की और वे जेपी आंदोलन में कूद पड़े। 4 नवंबर, 1974 के दिन जब पटना सचिवालय का घेराव किया जा रहा था, तब जेपी को पुलिस की लाठियों से बचाने का काम नानाजी ने ही किया था। जेपी को निशाना बनाकर बरसाई जा रही लाठियों को उन्होंने ढाल बनकर अपने ऊपर झेल लिया। जेपी के लिए उन्होंने अपने प्राण संकट में डाल दिए थे। 1977 में जनता दल सरकार में उनका उद्योग मंत्री बनना तय हो चुका था। लेकिन जिस दिन नानाजी को मंत्री पद की शपथ दिलायी जानी थी, उसी दिन रज्जू भैया ने उनसे कहा, 'आप पार्टी के लिए पैसा जुटाते रहे हैं। उद्योगपतियों से आपके नजदीकी संबंध हैं। उद्योगमंत्री का दायित्व निभाते हुए आप पर पक्षपात का आरोप लगेगा।' रज्जू भैया का इतना कहना नानाजी के लिए पर्याप्त था। उन्होंने तुरंत मंत्री पद ठुकरा दिया। आगे चलकर नानाजी को यह विश्वास होने लगा था कि सार्थक बदलाव लाने के लिए राजनीतिक ताकत हासिल करना एक मात्र उपाय नहीं है। वे प्रायः कहा करते थे कि सामाजिक बदलाव के लिए दृष्टिकोण में बदलाव लाना पड़ेगा और उसके लिए हमें लोगों के बीच काम करना पड़ेगा, केवल राजनीतिक ताकत हासिल कर लेने से बात नहीं बनेगी। राजनीतिक आपाधापी से दूर अपनी आखिरी सांस तक वे ग्रामीण विकास, स्वास्थ्य और शिक्षा के क्षेत्र में काम करते रहे। नानाजी के नहीं रहने से हमने एक ऐसे व्यक्ति को खो दिया जिसके लिए सामाजिक बदलाव कोई राजनीतिक नारा नहीं, बल्कि नैतिक प्रतिबद्धता की बात थी। ■

लेखक परिचय

के.एन. गोविन्दाचार्य

गोविंदजी के नाम से पहचान रखने वाले, लेखक देश के प्रख्यात चिंतक व विचारक हैं। उन्होंने नानाजी को बहुत नज़दीक से देखा व समझा और अब देशभर में उन्हीं को जीने के प्रयास में लगे हुए हैं।

साभार: भारतीय पक्ष, अप्रैल 2010

ऐसे जीवट पर तिलक करो

नानाजी के 80 वर्ष पूरा होने पर 1997 में मुंबई से एक स्मारिका प्रकाशित की गई थी, जिसमें नानाजी के काम के बारे में कई लोगों ने अपने विचार व्यक्त किए थे। इसी स्मारिका में प्रभाष जोशी का लेख छपा था। आज जब न तो नानाजी हैं और न ही प्रभाष जी, यह लेख अपने आप में बहुत कुछ कहता है।

लेखक परिचय

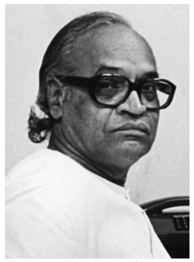

प्रभाष जोशी

लेखक गांधीवादी विचारधारा के मूर्धन्य चिंतक व पत्रकार थे। नानाजी की विचारधारा से असहमत होते हुए भी उनके काम से वे बेहद प्रभावित थे। जनसत्ता के संस्थापक संपादक रहे (स्वर्गीय) श्री प्रभाष जोशी नानाजी के राजनैतिक जीवन के अंतिम दौर से लेकर उनके सामाजिक जीवन तक के साक्षी रहे।

नानाजी फिर नए काम में लग गए हैं। नानाजी यानी नानाजी देशमुख। नया काम यानी चित्रकूट में उन्होंने आरोग्यधाम शुरू करवाया है। आरोग्यधाम कोई अस्पताल नहीं है। यह एक प्रयोग है कि कैसे ऐसी परिस्थिति और अवस्था बनाई जाए कि व्यक्ति को रोग ही न हो। अंग्रेजी में एक पुरानी कहावत है- प्रिवेंशन इज बेटर देन क्योर। उपचार से रोग को रोकना बेहतर है। नानाजी के आरोग्यधाम में प्रयोग इसका भी नहीं है कि रोगों को कैसे रोका जाए, वहां मानकर चला गया है कि मनुष्य की सहज-स्वाभाविक स्थिति निरोगी है। जो भी रोग हैं वे सब जीवन शैली, पद्धति और पर्यावरण के हैं। कुछ रोग वंशानुगत भी हैं। लेकिन जीन्स में भी वे बाहर से आते हैं और फिर अंदर के होकर रह जाते हैं। प्रयोग यह है कि मनुष्य निरोगी रहने की अपनी सहज स्वाभाविक स्थिति में कैसे रह सकता है। उपचार या निदान या आरोग्य नानाजी का विशेष या चुना गया कार्यक्षेत्र नहीं है। वे

डाक्टर नहीं हैं, स्वास्थ्यकर्मी नहीं हैं। समाजसेवी हैं। एक समाजसेवी की सामूहिक और सामाजिक स्वास्थ्य में जितनी रुचि होनी चाहिए उतनी रुचि से तो नया प्रयोग करने के लिए आरोग्यधाम नहीं खोला जाता। विचार बहुत ही तंग कर रहा हो तो किसी सुयोग्य साथी को कहा जा सकता है, भाई यह प्रयोग करने लायक है, या कर के देखो। नानाजी ने ऐसा नहीं किया। खुद ही प्रयोग में लग गए।

उमर के यानी बुढ़ापे के रोग भी उन्हें नहीं है। इंद्रियां जितनी शिथिल हो जाती हैं, उतनी भी नहीं हुई हैं। स्वभाव से संयमी जीव हैं, इसलिए बावजूद इसके कि आंखें कमजोर हुई हैं और सुनाई ऊंचा देता है, वे आम तौर पर सजग, सक्रिय और साधना में लगे आदमी हैं। यों भी उनासी बरस की उमर में कोई ऐसा काम शुरू करे जो उसने अब तक किया न हो तो कोई कह सकता है कि यह बुढ़ापे का लक्षण है। चित्रकूट में नानाजी का यह प्रयोग करना एक और कारण से भी मुझे विलक्षण लगता है।

भारतीय पक्ष
आवरण कथा
ऐसे जीवट पर तिलक करो
प्रभाष जोशी

अभी कोई छह-सात महीने पहले ही मध्यप्रदेश सरकार ने ऐसी परिस्थितियां पैदा की कि उन्हें ग्रामोदय विश्वविद्यालय के कुलाधिपति पद से इस्तीफा देना पड़ा। अब नानाजी अगर उसके कुलाधिपति बने या नियुक्त किए गए होते और सरकार को लगा होता कि विश्वविद्यालय वैसा नहीं चल रहा है जैसा कि चलना चाहिए या सरकार की यानी मुख्यमंत्री की इच्छा से नहीं चल रहा है और इसलिए छीना जाता तो कोई बात भी थी। लेकिन चित्रकूट में एक ऐसा ग्रामोदय विश्वविद्यालय बने जिसमें से निकले स्नातक कहीं नौकरी की तलाश में न जाएं और जब स्नातक हो चुकें तो उनके पास उत्पादक रोजगार अपने आप हो, ऐसा प्रयोग करने का विचार नानाजी को ही आया था और यह प्रयोग करने के लिए ही वे दिल्ली और अपने दूसरे सेवा कार्य छोड़ कर चित्रकूट में चिमटा गाड़ कर बैठे थे।

कोई पांच-छह साल पहले वृंदावन जा कर उन्होंने एक भजनाश्रम की चित्रकूट में मंदाकिनी के किनारे पड़ी जमीन और खंडहर पड़ा छोटा-सा भवन लिया था। उस यात्रा में अपन भी उनके साथ थे और आने-जाने के छह-सात घंटों में विश्वविद्यालय के प्रयोग के बारे में ही बात होती रही। चीमटा गाड़कर बैठने का यह स्थान लेने के कोई साल-डेढ़ साल बाद उनके दोस्त रामनाथ गोयनका का निधन हो गया। नानाजी ने इसे अपने दोस्त के स्मारक में बदल दिया है।

यहीं बैठ कर नानाजी ने स्वावलंबी नवयुवक बनाने के प्रयोग की शुरूआत की। तब मध्यप्रदेश में सुंदरलाल पटवा की भाजपा सरकार थी और उसने नानाजी के प्रकल्प को न सिर्फ अपनाया बल्कि विधानसभा से कानून पास करके ग्रामोदय विश्वविद्यालय की स्थापना करने का संकल्प किया। फरवरी इकानवें में जब विश्वविद्यालय का शिलान्यास हुआ तो उस कार्यक्रम में अपन मौजूद

थे। नानाजी के उत्साह को अपन ने महसूस किया था और उनके सपने को अपनी आंखों देखा था। चूंकि विचार नानाजी का था और वही यह प्रयोग करने वाले थे, इसलिए विधानसभा में ही पारित कानून के अनुसार इस विश्वविद्यालय का कुलाधिपति राज्यपाल को नहीं, नानाजी को बनाया गया था। यानी मध्यप्रदेश सरकार ने एक तरह से नानाजी को स्वावलंबन की शिक्षा देने वाले विश्वविद्यालय को खड़ा करने और चलाने का प्रयोग करने की सुविधा दी थी। कोई डेढ़ साल तक सरकार का सहयोग संकल्प के अनुसार चलता रहा। भवन आदि तेजी से बनने लगे, हालांकि उसके पहले ही नानाजी ने धार्मशालाओं और बेकार पड़े मठों में विश्वविद्यालय का काम शुरू कर दिया था।

फिर मध्यप्रदेश में सुंदरलाल पटवा की भाजपा सरकार अयोध्या कांड के कारण डिसमिस कर दी गई और वहां राष्ट्रपति शासन लग गया। पर नानाजी को दिक्कत आ गई हो, ऐसा नहीं लगा। साल भर में विधानसभा चुनाव के बाद कांग्रेसी सरकार बनी और दिग्विजय सिंह उसके मुख्यमंत्री बने। तब भी नानाजी की दिक्कतें बढ़ गई हों, ऐसा नहीं लगा। साल भर तो कामकाज ठीक चलता ही रहा। फिर मुश्किलें आने लगीं। सरकार की तरफ से जो पैसा स्वीकृत मद से आना था, उसके आने में पहले ढिलाई हुई और फिर आया ही नहीं। स्वावलंबी स्नातक बनाने के प्रयोग करने वाले विश्वविद्यालय के प्राध्यापकों और कर्मचारियों को वेतन मिले, इसलिए नानाजी को बैंकों से लाखों रुपए उधार लेने पड़े। उधार चुकाने के लिए भी सरकार से पैसा लेना टेढ़ी खीर हो गया। न सीधी उंगली से घी निकले न टेढ़ी से। सरकार ने डब्बे में घी आने ही नहीं दिया।

अब साफ था कि मध्यप्रदेश सरकार नहीं चाहती कि यह विश्वविद्यालय जैसा चल रहा था, वैसा ही चले। अगर वैसा ही चलेगा तो सरकार धन न दे कर इसे सुखा देगी। खुसफुसाहट और अभियान तो राष्ट्रपति शासन में भी शुरू हो गया था कि यह क्या विश्वविद्यालय है, संघ का अड्डा है। फिर कांग्रेस की सरकार बनी तो कहा जाने लगा कि भाजपा सरकार ने संघ को संस्था चलाने और अपने लोगों को जमाने के लिए जो व्यवस्था की है, वह बंद होनी चाहिए। चित्रकूट के पास सतना है जो भूतपूर्व केंद्रीय मंत्री अर्जुन सिंह का चुनाव क्षेत्र है। उनके कार्यकर्ता शुरू से ही इस विश्वविद्यालय के खिलाफ बोलते थे। खुद अर्जुन सिंह को शिकायत थी कि यह उनके बावजूद खड़ा हो गया और इसे मेरे सहयोग के बिना चलने कैसे दिया जा रहा है। लोकल, प्रांतीय और केंद्रीय कांग्रेसियों ने निष्कर्ष निकाल रखा था कि यह राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का अड्डा है और इसे नष्ट करना चाहिए।

नानाजी देशमुख ने स्वावलंबन की शिक्षा देने के लिए चित्रकूट जैसे ग्रामीण इलाके में जो प्रयोग किया, वह राजनीतिबाज कांग्रेसियों के लिए भाजपा सरकार का बनाया गया संघी अड्डा ही था और वे उसे या तो नष्ट कर देने पर आमादा थे या अपने हाथों में ले लेने पर। उन्हें इस बात की कोई फिक्र या अहसास नहीं था कि अठारह साल पहले जिस आदमी ने केंद्रीय मंत्री पद स्वीकार नहीं किया और राजनीति छोड़ कर रचनात्मक कार्य में लग गया और जिसका संबंध किसी भी राजनैतिक पार्टी से नहीं है, वह चित्रकूट में आकर संघ का अड्डा क्यों बनाएगा? और इस देश में लोग अलग-अलग क्षेत्रों में प्रयोग नहीं करते, वे नकल करके कंगले हो जाते हैं और लोकतंत्र में

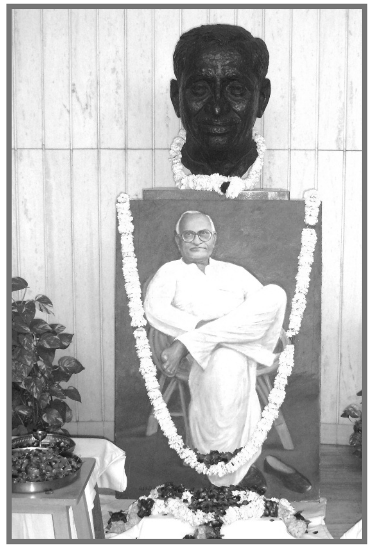

सरकारें बदलती रहती हैं। सरकारों के साथ अगर गैर राजनैतिक संस्थाएं भी बदली जाने लगीं तो बचेगा क्या?

हमारी कोई राजनैतिक पार्टी इसे नहीं समझती और जब भी, जो भी सत्ता में आती है, अपनीवाली चलाती है। इसलिए देश की ज्यादातर सार्वजनिक संस्थाएं राजनेताओं के इशारों पर चलने के लिए मजबूर हैं। विश्वविद्यालय तो ओछी और टुच्ची राजनीति के केंद्र हैं, शिक्षा के नहीं। रवि बाबू के शांति निकेतन और मालवीयजी के काशी विद्यापीठ तक के जो हाल हुए हैं, वे तमाम शिक्षा संस्थाओं के राजनीतिकरण के उदाहरण हो गए हैं।

नानाजी को समझ तो बहुत पहले आ रहा था कि कांग्रेसियों को उनका ग्रामोदय विश्वविद्यालय का कुलाधिपति बने रहना कतई रास नहीं आ रहा और जब तक वे इस पद पर रहेंगे विश्वविद्यालय को तड़पा-तड़पा कर मारने की कोशिशें होती रहेंगी। चूंकि विश्वविद्यालय उनका बनाया हुआ है, इसलिए उसका चलते रहना उनके लिए ज्यादा महत्वपूर्ण था, इसलिए नानाजी ने प्रधानमंत्री और मुख्यमंत्री दोनों को बता कर इस्तीफा दे दिया। अब ग्रामोदय विश्वविद्यालय स्वावलंबन की शिक्षा देने का अभिनव प्रयोग नहीं ग्रेजुएट उत्पादक कारखाना हो गया है। वहां परंपराएं पनप सकें, इसका भी मौका नहीं मिला है, इसलिए ग्रामोदय विश्वविद्यालय का अब क्या होगा, भगवान ही जानता है।

इसके बावजूद नानाजी ने विश्वविद्यालय के पास ही जेआरडी टाटा आयुर्वेद एवं योग विज्ञान शोध प्रतिष्ठान यानी आरोग्यधाम का काम शुरू कर दिया है। मंदाकिनी के तट पर तिरतालीस एकड़ जमीन ली है। मिट्टी की पहाड़ियों पर क्यारियां काट कर जड़ी-बूटी उगाने के खेत बनाए हैं और इस मकर संक्रांति के दिन केंद्रीय स्वास्थ्य मंत्री अब्दुल रहमान अंतुले से प्रतिष्ठान का शिलान्यास कराया है। अध्यक्षता करने उत्तर प्रदेश के राज्यपाल मोतीलाल वोरा को बुलाया। दोनों कांग्रेस के हैं। प्रतिष्ठान जेआरडी टाटा के नाम पर इसलिए कि इस भारतरत्न ने नानाजी से लोगों के स्वास्थ्य के बारे में काफी बाते की थीं। टाटा हाउस मदद भी कर रहा है। इस शिलान्यास में भी अपन थे और टी.एस. एलियट की लाइनें याद कर रहे थे- 'ओल्ड मेन आट टू बी एक्स्प्लोरर्स, हियर एंड देअर डज नौट मेटर।' नानाजी ने अपने ही एक प्रयोग ग्रामोदय विश्वविद्यालय के शव पर दूसरा और भी महत्वाकांक्षी प्रयोग शुरू कर दिया है, नवासी की अमर में। ऐसे आदमी को कौन हरा सकता है? चलिए उसे चित्रकूट में तिलक करें। माथा देख कर नहीं जीवट को समझ कर। ■

साभार: भारतीय पक्ष, अप्रैल 2010

'उन्हें मोक्ष न मिले'

एक धार्मिक नेता ने कहा कि मैं प्रार्थना करता हूं कि वह नानाजी को सुदीर्घ आयु तो दे परन्तु उन्हें मोक्ष न दे। उन्हें पुनः इसी धरा पर जन्म दे, जिससे भारत को विश्वगुरु बनाने का सपना पूरा कर सकें।

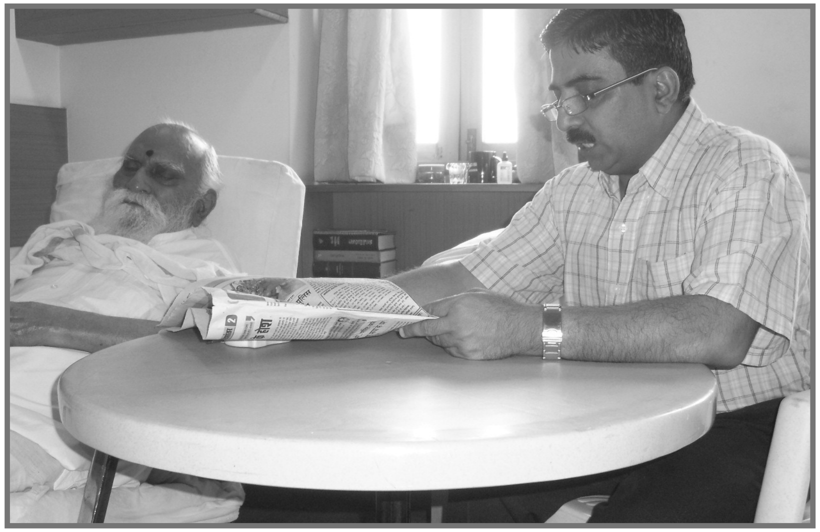

सन 1979 में मैं नेपाल से वाराणसी आया। इसके बाद मैं आदरणीय यादव राव देशमुख जिन्हें लोग काकाजी कहते हैं, के साथ वाराणसी से लखनऊ आया। काकाजी नानाजी के कार्यों को सफल बनाने में शुरू से ही अपना योगदान दे रहे थे। सर्वप्रथम नानाजी ने अपने कार्य क्षेत्र के लिए गोण्डा जिले को चयनित किया था। उस समय गोण्डा जाने के लिए लखनऊ होकर जाना पड़ता था। इसलिए नानाजी का लखनऊ आना-जाना प्रायः होता रहता था।

सन 1984 में नानाजी धारा चिकित्सा के लिए कोयम्बटूर में आर्य वैद्य फार्मेसी गये हुए थे। मैं भी काकाजी के साथ कोयम्बटूर में ही था। वहां 15 दिन तक मुझे ननाजी के साथ रहने का अवसर मिला। उसी समय मैंने पहली बार नानाजी की सेवा का सुख प्राप्त किया। उन्हीं 15 दिनों के सहवास के कारण मैं नानाजी के मस्तिष्क में अपने लिए स्थान बना पाया। धारा चिकित्सा पूर्ण करके नानाजी दिल्ली आ गए। कुछ दिनों के पश्चात ही मैं भी नानाजी के पास आ गया। मेरी पढ़ाई अभी पूरी नहीं हुई थी लेकिन मैंने नानाजी के सेवा कार्यो में अपना सहयोग देना आरंभ कर दिया। मैंने स्नातक की पढ़ाई नानाजी के साथ रहकर ही पूरी की। सन 1989 से लेकर आज तक मुझे नानाजी के साथ हर क्षण रहने तथा समाज के हर वर्ग के लोगों को देखने-सुनने का अवसर मिला है। वो मुझे अपने बेटे की तरह प्रेम करते थे। कभी-कभार मैं कुछ आवश्यक कागजात प्रवास में साथ रखना भूल जाता था, तब भी नानाजी नाराज नहीं होते थे। बस केवल इतना ही कहते थे, 'ध्यान रखा करो भाई।'

लेखक परिचय

हेमंत पांडेय अपनी किशोर अवस्था से ही नानाजी के 24x7 सहयोगी रहे हैं। नानाजी के जागने के साथ और उनके सोने के समय तक, हर पल, हर कदम। नानाजी को समय पर दवाई देनी हो, उनके लिए अखबार बांचना हो, श्रुतिलेखन करना हो या किसी के साथ हुई गोपनीय बात को पचा जाना हो।

यह देखकर मुझे ही नहीं सभी को आश्चर्य होता है कि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के समर्पित कार्यकर्ता होने के बावजूद संघ विरोधी नेताओं से उनके स्नेहपूर्ण संबंध रहे। स्वर्गीय प्रधानमंत्री चन्द्रशेखर हों या उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री मुलायम सिंह, सभी उनके मित्र रहे हैं और उन पर पूरा विश्वास करते थे। समय-समय पर उनके पास परामर्श लेने के लिए भी आते थे।

उद्योग जगत में नानाजी का संबंध व्यापक था। बिड़ला समूह से लेकर नुस्ली वाडिया, केशव महेन्द्रा, दरबारी सेठ एवं रतन टाटा तक सभी लोग नानाजी को पिता तुल्य मानते थे। वैचारिक दृष्टि से विरोधी व्यक्ति को भी वे अपने सहज स्नेह से अपना बना लेते थे। कार्यकर्ताओं के प्रति उनकी आत्मीयता तो देखते ही बनती थी। मुझे स्मरण है कि एक बार गोण्डा के एक प्रमुख कार्यकर्ता श्री चन्द्रशेखरजी उदर रोग से पीड़ित थे। नानाजी उनके उपचार के लिए ट्रेन से दिल्ली आये। रातभर गाड़ी में उनके सिरहाने बैठकर उनकी सेवा करते रहे। एक बार भी उन्होंने झपकी नहीं ली। सामान्यतः सभी कार्यकर्ताओं के प्रति उनका यही आत्मीय भाव देखने को मिलता था। जिस मंदाकिनी नदी के रामघाट पर 'चित्रकूट के घाट पर भई संतन की भीड़, तुलसीदास चन्दन घिसे, तिलक देत रघुवीर' की उक्ति चरितार्थ हुई, वहीं बैठकर नानाजी चिन्तन करते थे। जिस भूमि पर भरत जैसा भाई मिली हुई राजसत्ता को ठोकर मारकर अपने अग्रज वनवासी राम को मनाने के लिए आये, उसी पवित्र भूमि पर नानाजी ने युगानुकूल सामाजिक पुनर्रचना का कार्य बड़ी सफलता से कर दिखाया।

एक धार्मिक नेता ने अपनी पुस्तिका में नानाजी को अपना आशीर्वाद इस प्रकार लिखा है, 'मैं भगवान से प्रार्थना करता हूं कि वह नानाजी को सुदीर्घ आयु तो दे परन्तु शरीर त्याग करने के बाद उन्हें मोक्ष न दे। उन्हें पुनः इसी धरा पर जन्म दे, जिससे वे चित्रकूट को ही नहीं अपितु इस देवभूमि भारत को विश्वगुरु के स्थान पर पहुंचाने का अपना सपना पूरा कर सकें।' ■

साभार: भारतीय पक्ष, अप्रैल 2010

नानाजी थकने नहीं देते थे

मैं 1980 से नानाजी के साथ थी। 30 वर्षों में अपने पति श्रीकांत और पुत्र के साथ कितने सुख-दुःख देखे। पर नानाजी ने सारे दुःख हर लिए थे। 'मैं तो 21 वर्ष की उम्र में यहां आई थी। अपने गांव से पहले तो बनारस गई। वहां यादव काका मिले। वे हमें नानाजी के पास ले आए। नानाजी ने कहा, "तुम चिंता मत करो। श्रीकांत की जिम्मेदारी हमारी होगी और हमारी जिम्मेदारी तुम्हारी।" मैंने नहीं समझा।

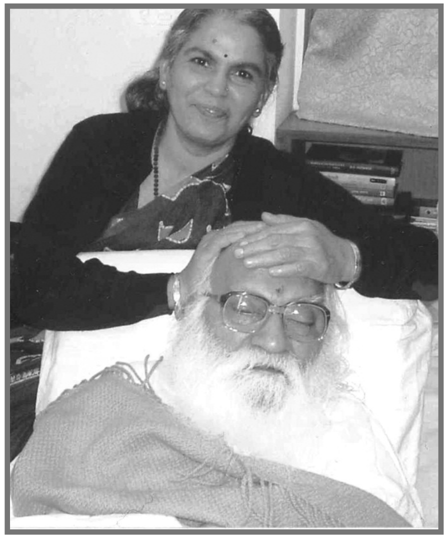

डॉ. जे.के.जैन और डॉ. रागिनी जैन को बुलाकर उन्होंने मेरे पति का इलाज करने के लिए कहा। डी.आर.आई. में खाना बनाने और लोगों की देखरेख करने लगी। गांव से आई थी। मुझे कुछ भी नहीं आता था। वहां आने वाले छोटे-बड़ों की पहचान नहीं थी। सबसे बड़ी बात कि नानाजी वहां आए लोगों में भेदभाव नहीं करते थे। उन्होंने सिखाया कि सबसे बड़ी सेवा भोजन देना है। खाना बनाकर और प्रेम से खिलाकर ही तुम महिलाएं पिता, भाई, पति, पुत्र और सगे-संबंधियों के दिल पर राज करने लगती हो। सच हम पुरुषों को हार माननी पड़ती है।" और भी ऊंची-ऊंची बातें करते थे नानाजी। मैं तो कम बुद्धि की थी। उसमें बड़ी-बड़ी बातें कैसे अंटाती। मैंने कहा, "मैं भी पढ़ूंगी नानाजी। मैट्रिक की परीक्षा दूंगी। आप भी तो बेटियों को पढ़ाने की बात करते हैं।" वे बोले, "डिग्री लेकर क्या करोगी। मेरे पास भी कोई डिग्री नहीं है। काम करो। परिश्रम करो। काम को काम करके पढ़ो। जीवन को जानो।"

बहुत खटाते थे नानाजी। इतने लोग यहां आते थे। सबका खाना बनाना। प्रेम से खिलाना, उनके कमरे की व्यवस्था, जाते समय उनका टिफिन भरकर देना, ढेर सारा काम। कुमुद... कुमुद...कुमुद

लेखक परिचय

नानाजी द्वारा गढ़ी गई कुमुद दीदी को डीआरआई, दिल्ली में एक बार भी जो मिला, वह उनके ममतामयी व्यवहार को भूल नहीं सकता।

की रट लगाए रखते। बड़े से बड़े लोगों से मेरा परिचय कराना नहीं भूलते। मैं भी नहीं थकती थी। नानाजी ने दौड़ते रहने की लत लगा दी थी। उनके जाने के बाद खाली बैठी अब थक जा रही हूं। नानाजी कहते थे, "परिश्रम से थकान नहीं आती। बैठे रहने से आदमी थकता है।"

एक बार नानाजी नागपुर से आए। मैं ही उन्हें लेने एयरपोर्ट पहुंच गई। बहुत कोहरा था। प्लेन 10 बजे रात्रि की बजाय 3 बजे भोर में उतरा। नानाजी गाड़ी में बैठे। पूछा, "कितने बजे आई?" मैंने कहा, "साढे नौ बजे।" "तब से गाड़ी में बैठी रही? कमाल है। तुम तो सेवाकार्य में कइयों से बहुत आगे निकल आई।" मैं बहुत भाग्यशाली हूं। नानाजी का स्नेह मिला। प्रारंभ में उनकी डांट पड़ी थी। संघ के बड़े अधिकारी के लिए भोजन बनाना था। संघ कार्यालय से सूचना आई थी। मैं नहीं बना पाई थी। उन अधिकारी को भी तो नहीं जानती थी। नानाजी को पता चला। वे मुझ पर बरस पड़े। बहुत डांट पड़ी। मैं रोई भी। पर उन्होंने समझाया -"यहां आने वाले अधिकांश लोग देशसेवा में लगे हैं। यदि उनके लिए भोजन बना देती हो, घर बैठे देश की सेवा ही तो कर ली।"

मेरे मन में उनकी बात गड़ गई। फिर तो कभी डांटने का उन्हें मौका नहीं दिया। आने वाले भी मुझे सम्मान देते थे, फिर मैं उनकी चिंता कैसे नहीं करती। मुझे मालूम था कि यादव काकाजी, भिड़ेजी, भानुजी किस-किस को क्या पसंद था। उनके आने पर मैं वही बनाती। मैं तो बिहार के सामान्य वर्ग से आई थी। नानाजी ने मुझे महाराष्ट्र की पूरनपूड़ी, श्रीखण्ड, पोहा, साबुदाने की खिचड़ी, पीठला बनाना स्वयं सिखाया। कभी-कभी वे रसोईघर में जाकर स्वयं खाना बनाते थे। कपड़ा रखना, बिस्तर साफ-सुथरा रखना, सब सिखाते थे।

एक बार उन्होंने कहा, "अब मुझे चिंता नहीं। कुमुद सब संभाल लेगी।" बड़ी जिम्मेदारी दी थी उन्होंने। उनके भरोसे को सम्मान देना भी मेरा काम था। मैं हर वक्त सोचती थी, "कहीं नानाजी को मेरे किसी व्यवहार से दुःख न पहुंचे।"

मुझसे अधिक हेमंत भइया ने उनकी सेवा की। हर पल उनके साथ रहते। नानाजी का उन पर बड़ा विश्वास था। डॉक्टर के आने पर भी उन्हीं को बुलाते। कोई दवा उन्हें मैं देने जाऊं तो पूछते, "हेमंत कहां है?" उनकी मृत्यु के समय भी हेमंत साथ थे। बड़े भाग्यशाली हैं। मुझे इसी बात की तकलीफ है। 10 जुलाई को नानाजी दिल्ली से चित्रकूट गए। बोले, "अब नहीं लौटूंगा। मुझे बहुत दुःख हुआ। हर महीने दस दिनों के लिए मैं चित्रकूट जाती थी। 27 फरवरी की टिकट थी। मैं नहीं जा सकी। उनका मृत शरीर ही देखा। मन से बात निकलती नहीं।"

पिछले 25 वर्षों में देश के किसी भी कोने से किसी लड़की या लड़के को ले आते थे। नानाजी कहते थे, "यह लड़की बहुत मेधावी है। इसे बहुत बड़ी बनाना है। तुम इसे प्रेम से रखना। मां-बाप को छोड़कर आई है, उसे कोई तकलीफ न हो।" उन्होंने मुझे क्या-क्या नहीं सिखाया। ■

साभार: पांचवां स्तम्भ, अप्रैल 2010

संघ विचारधारा के विनोबा थे नानाजी

नानाजी शरीर में भले ही नहीं हैं लेकिन एक ऐसे राजनीतिज्ञ और समाजसेवी के रूप में हमेशा याद किये जाएंगे जो समाज के अंतिम आदमी के लिए संपूर्ण इच्छा के साथ अनवरत काम करता रहा।

लेखक परिचय

राम बहादुर राय

छात्र जीवन से सार्वजनिक क्षेत्र में सक्रिय राय साहब आपातकाल से पहले ही जेपी व नानाजी से जुड़ गए थे। नानाजी के बारे में उनकी समझ इस लेख में खूब झलकती है। लेखक, जनसत्ता के राजनैतिक संपादक भी रहे।

नाना जी नहीं रहे। उनका जाना राजनीति में एक युग का अवसान है। एक ऐसे युग का अवसान जिसे खुद नानाजी देशमुख ने बनाया था। वे राजनीति में उस नैतिक साहस के प्रतीक थे जो विनोबा भावे के बाद किसी और राजनीतिज्ञ में दिखाई नहीं देता। आज भले ही नानाजी हमारे बीच नहीं है लेकिन उनका कामकाज और कीर्ति सदा अमर रहेगी।

राजनीति के मैदान में उम्मीदवार के रूप में पहली बार नानाजी 1977 में आये जब जयप्रकाश नारायण ने उन्हें निमंत्रित किया। इससे पहले वे जनसंघ के संगठन महामंत्री के तौर पर लोगों को चुनाव लड़वाते थे। लेकिन वे चुनाव मैदान में उतरे तो जेल में रहते हुए भी उसी बलरामपुर सीट से जीत दर्ज की जहां राजनीति से सन्यास लेने के बाद सेवा कार्य के लिए गये थे। नानाजी देशमुख उन कुछ प्रमुख नौजवानों में से थे जिन्होंने संघ के संस्थापक डॉ हेडगेवार से प्रेरित होकर समाज कार्य के लिए अपने आपको समर्पित किया था। उनका जन्म महाराष्ट्र में जरूर हुआ था लेकिन उन्होंने अपना सार्वजनिक जीवन संघ के प्रचारक के रूप में उत्तर प्रदेश से शुरू किया। वे संघ के सक्रिय प्रचारक के रूप में कार्य जरूर कर रहे थे लेकिन नानाजी की एक खूबी थी कि वे संपर्क सबसे रखते थे, फिर विचारधारा के स्तर पर कोई उनका विरोधी ही क्यों न हो। संघकार्य के साथ साथ ही उन्होंने कुछ बड़ी पहल की जो बाद में वटवृक्ष बन गए। नानाजी देशमुख ने गोरखपुर में अपने प्रवास के दौरान सरस्वती शिशु मंदिर की परिकल्पना की जो आगे चलकर विद्या भारती के वटवृक्ष के रूप में स्थापित हो गया।

जब वे राजनीतिक कार्यकर्ता के रूप में सक्रिय हुए तो उन्होंने सभी से संवाद की अपनी इस क्षमता का उपयोग गैरकांग्रेसवाद की स्थापना के लिए किया। यह नानाजी देशमुख ही थे जिनकी कोशिश से संविद सरकार की नींव पड़ी और संशोपा और जनसंघ के बीच गठजोड़ हुआ। नानाजी देशमुख का ही व्यक्तित्व था कि डॉ राममनोहर लोहिया जनसंघ के साथ गैरकांग्रेसवाद के लिए आगे बढ़ने के लिए राजी हो गये। यह नानाजी की विशेषता थी कि वे संघ की विचारधारा से बिना किसी प्रकार का समझौता किये दूसरे लोगों से बहुत घनिष्ठ और पारिवारिक संबंध रखते थे। दूसरे दलों और संगठनों के लोग उन पर अटूट विश्वास करते थे। यहां एक घटना का जिक्र करना जरूरी होगा। जब केन्द्र में जनता पार्टी की सरकार बनी तो उन दिनों चंद्रशेखर जनता पार्टी के अध्यक्ष थे और नानाजी पार्टी के महामंत्री। कुछ लोगों ने चंद्रशेखर को कहा कि नानाजी पर इतना भरोसा करना अच्छा नहीं होगा। बाद के दिनों में चंद्रशेखर ने स्वीकार किया था कि लोगों ने उनसे शिकायत की थी लेकिन मैंने जब नानाजी के व्यक्तित्व को अपने में परखा तो पाया कि सिर्फ नानाजी ही हैं जिन पर पूरी तरह से भरोसा किया जा सकता है।

नानाजी ने जब राजनीति छोड़ी, तब जनता पार्टी के हालात बहुत खराब थे। शीर्ष के तीन नेता मोरारजी देसाई, चौधरी चरण सिंह और जगजीवन राम नेतृत्व पाने के लिए आपस में लड़ रहे थे। नानाजी महामंत्री थे। वे जब सत्ता के शिखर की इस कलह को रोक पाने में नाकाम रहे तो उन्होंने एक आदर्श प्रस्तुत किया और कहा कि साठ साल से ऊपर के व्यक्ति को राजनीति से सेवाकार्य की ओर चले जाना चाहिए। उन्हें उम्मीद थी कि ऐसा करने से जनता पार्टी की कलह खत्म होगी और गैरकांग्रेसवाद की पहली सरकार पांच साल पूरा करेगी। लेकिन नानाजी के सेवा कार्य की ओर चले जाने के साथ ही जनता पार्टी का भी अवसान शुरू हो गया। अपनी इस घोषणा से नानाजी राजनीतिक वर्ग के सामने एक फार्मूला पेश कर रहे थे लेकिन दुर्भाग्य से यह नानाजी तक ही सिमटकर रह गया। खुद भारतीय जनता पार्टी में उनके बाद किसी ने इस बारे में विचार नहीं किया। नानाजी राजनीति से अलग हटे तो अपने उन दीनदयाल उपाध्याय के नाम पर सेवा कार्य की शुरूआत की जो समाज के अंतिम आदमी का उत्थान चाहते थे। चित्रकूट में एक सन्यासी द्वारा दी गयी जमीन पर उन्होंने प्रयोग किये और बुन्देलखण्ड के उस इलाके की बदहाली में सिंचाई, चिकित्सा और स्वावलंबी जीवन का आदर्श प्रयोग किया।

नानाजी शरीर में भले ही नहीं हैं लेकिन एक ऐसे राजनीतिज्ञ और समाजसेवी के रूप में हमेशा याद किये जाएंगे जो समाज के अंतिम आदमी के लिए संपूर्ण इच्छा के साथ अनवरत काम करता रहा। उनकी पुण्य आत्मा को शत्-शत् नमन। ■

साभार: भारतीय पक्ष, अप्रैल 2010

आदर्श पुरुषः नानाजी

नानाजी प्रभु राम को मनुष्य के रूप में देखते थे। वह मंदिर की बजाय प्रेरणास्थलों के हिमायती थे। इस नजरिए से ही उन्होंने अपने राम दर्शन का सपना साकार किया।

लेखक परिचय

सुहास बहुलकर

लेखक देश के जाने-माने शिल्पकार व चित्रकार हैं। नानाजी से पहली ही मुलाकात में इतने प्रभावित हुए कि सब कुछ छोड़ सुदूर चित्रकूट में रामदर्शन का निर्माण करने जा पहुंचे।

दुनिया में कुछ व्यक्ति ऐसे भी होते है जो भव्य-दिव्य सपने देखते है और विषेश रूप से जो समाज के लिए होते है। ऐसे ही एक निर्मोही त्यागी एवं ऋषितुल्य व्यक्ति का नाम है नानाजी देशमुख। ऐसे नानाजी का एक सपना अर्थात राम दर्शन। रामायण के नैतिक संदेश देने वाले इस प्रकल्प के लिए वे कलाकार, चित्रकार की खोज देशभर में कर रहे थे। 1995 में चतुरंग जीवन गौरव पुरस्कार महाराष्ट्र के जानेमाने लेखक, साहित्यकार और नाटककार पु. ल. देशपांडे को प्रदान करने हेतु मुंबई में आये थे। उन्होंने चतुरंग के विद्याधर निमकर से मुझसे मिलने की इच्छा व्यक्त की। उस वक्त वे 79 वर्ष के थे। पहली मुलाकात में नानाजी ने अपना सपना मेरे समक्ष रखा। उन्होंने कहा श्रीराम एक आदर्श मानव थे। लेकिन हम किसी भी आदर्श व्यक्ति को भगवान बनाने में माहिर है। महापुरूष को भगवान बनाया कि हमारी जिम्मेदारी खत्म। इसलिए प्रभु राम को भगवान नहीं, मनुष्य रूप में दिखाना चाहिये। हमे मंदिर नहीं, प्रेरणास्थल चाहिये, जो सारे मानवमात्र के लिए प्रेरणादायी हो। क्या आप ऐसा कुछ करना चाहेंगे?

अचानक यह सवाल सुनते ही मैं कुछ क्षण के लिए असमंजस में पड़ गया। मैंने जे. जे. स्कूल ऑफ आर्टस् से स्वेच्छानिवृत्ति ली थी। स्वतंत्र चित्रकार के रूप में ढेर सारे पेन्टिंग बनाने का मेरा सपना था। यह बताते ही उन्होंने पूछा कि ठीक है, आप पेन्टिग करेगें लेकिन उसका आगे क्या होगा? इसके बाद उन चित्रों की प्रदर्शनी होगी, उन चित्रों की बिक्री भी होगी। ऐसा कहने पर उन्होंने जानना चाहा कि चित्रों का मूल्य और उसे खरीदनेवाले कौन होते है? उनकी इस प्रतिक्रिया से मैं सोच में पड़ गया। नानाजी ने कहा कि यानी आपके चित्र सिर्फ अमीर लोग ही खरीद और देख सकते हैं। क्या आपको नहीं लगता कि इस देश की गरीब और सामान्य जनता को भी आपकी कलाकृति का आनंद मिले? उसी क्षण मेरा मन विचलित हुआ।

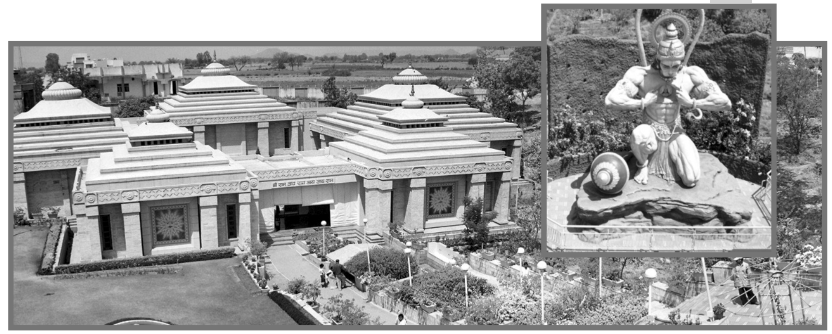

इस मुलाकात से मेरा जीवन ही बदल गया। नानाजी के रामदर्शन के सपने में मैं किस तरह से शामिल हो गया, इसका मुझे पता ही नहीं चला। मैं, मेरा परिवार, विद्यार्थी साथी-सहयोगी और मित्र अगले छह वर्ष एक अलग प्रकार के धुन में जिये। प्रारंभ में विद्वानों के साथ बैठकें होती थीं और हर समय मेरा सवाल रहता था कि प्रदर्शित होने वाले प्रसंगों में राम, लक्ष्मण और सीता की आयु क्या है? अनेक विद्वान आये और गये जवाब नहीं मिला। एक बार रामायण के सुप्रसिद्ध प्रवचनकार बेहद गुस्सा हुए और कहा कि कैसे कमबख्त कलाकार हो। भगवान की कोई आयु होती है? इस पर मैं भी थोड़ा आक्रामक हुआ तो तत्काल नानाजी ने अपनी नजरों से इशारा कर विषय बदल दिया। राम दर्शन का उद्घाटन 11 नवम्बर 2000 को संपन्न हुआ । किन्तु उसके बाद मैं और नानाजी उससे इतना जुड़े रहे कि जब नानाजी चित्रकूट में रहते थे, तब दिन में एक बार जरूर राम दर्शन जाते और मैं भी कभी कभी यूं ही तो कभी कोई काम निकाल कर राम दर्शन के लिए बार-बार चित्रकूट जाता था।

ऐसे ही एक बार चित्र में सुधार करते समय नानाजी वहाँ पहुंच गये और वहां पर बैठकर देखते रहे। मेरा काम पूरा होते ही मैंने उन्हें उसे देखने को कहा, उस पर उन्होंने जो कहा वह सुनकर मैं आपादमस्तक हिल गया। नानाजी ने कहा कि बहुलकरजी, इमर्जेन्सी के वक्त जयप्रकाशजी के ऊपर का जो लाठीचार्ज मैंने झेला, उससे मेरी एक आँख का दिखना खत्म हुआ था। तबसे मैं एक ही आँख से काम चलाता था, लेकिन अब मुझे कुछ भी दिखाई नहीं देता। मैं अंधा हो गया। आपने जो किया, वो मुझे नहीं दिख रहा है। वे गर्दन हिलाते रहे। धीरे-धीरे उन्हें कम सुनाई देने लगा। शरीर कमजोर होने लगा। लेकिन अंतिम क्षण तक स्मरणशक्ति और तेजस्वी विचार कायम थे। मुंबई पर 26/11 का आंतकी हमला हुआ और नानाजी का दूसरे ही दिन फोन आया। उनका पहला ही सवाल था, आप सभी सुरक्षित तो है ना? नानाजी का 27 फरवरी 2010 को निधन हुआ और निधन के तीन दिन पूर्व ही वे राम दर्शन में होकर आये थे। जिदंगीभर स्वतंत्रता के लिए लड़नेवाले स्वातंत्र्यवीर सावरकर का आत्मार्पण दिन और स्वतंत्र देश में समाज के लिए जीवन समर्पित करनेवाले नानाजी देशमुख का स्मृतिदिन, दोनों एक ही दिन हो। क्या इसे एक संयोग ही नहीं समझा जाना चाहिये? ■

साभारः मुम्बई टाईम्स, 7 मार्च, 2010

मानव शिल्पी की एक कृति हूँ मैं !

हम सबको नानाजी ने साधारण पत्थर को तराश कर आगे बढ़ा दिया, जीना सिखा दिया। जो पीड़ित व उपेक्षित हैं, उनको हंसना सिखा दिया। हम 16 साल तक भगवान की पूजा करते समय समझ नहीं पाये कि साक्षात प्रभु श्रीराम जी की प्रत्यक्ष छाया हम सबके बीच में थी।

पढ़ाई करते समय जैसे हर विद्यार्थी का विचार चलता रहता है, वैसे ही मैं सोचती थी कि खूब पढ़ाई करूंगी, प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण होऊंगी। स्नातकोत्तर के बाद नौकरी करूंगी और खूब पैसा कमाऊंगी, ऐशो-आराम से रहूंगी। पी.एच.डी. भी साथ में करती जाऊंगी और अच्छा पैसा कमाने वाले लड़के से शादी करके देश-विदेश में घूमने जाऊंगी। मेरे माता-पिता भी सोचते थे कि स्नातकोत्तर के बाद वे मेरी शादी करेंगे। घरवालों की यह भी मनोकामना थी कि उनकी बिटिया सक्षम बने, आवश्यकता पड़ने पर हर प्रकार का काम कर सके, ऐसा प्रयत्न उन्होंने भी किया लेकिन उनकी सोच और मेरी कल्पना जैसा मेरे जीवन में कुछ भी नहीं हुआ। मेरे विकास की डोर एक मानव राष्ट्रपिता के हाथ में आ गई।

मैंने अपनी सहेली के साथ चित्रकूट में 19 जून 1994 को प्रातः 6 बजे एकात्मता स्तोत्र के बाद मान्यवर नानाजी का दर्शन किया। जैसे ही उन्होंने मेरा नाम सुना, तुरंत नानाजी के चेहरे पर हर्ष जैसा जो भाव आया, वह मैं भूल नहीं सकती। उन्होंने कहा -'यह भी लड़की है।" मैं बहुत पतली-दुबली थी। फिर नानाजी ने पूछा -"आगे क्या करने वाली हो?" मूलतः आंध्र प्रदेश की होने के कारण मेरी हिंदी अच्छी नहीं थी। मैंने कहा -"नानाजी हैदराबाद में डाइटीशियन की नौकरी मिल गई है। मैं नौकरी करूंगी।" नानाजी ने तुरंत मुझसे कहा -"तुम्हारी जैसी लड़कियों को नौकरी नहीं

लेखक परिचय

कौशल्या उपाख्य डा. नंदिता पाठक 16 साल पहले नानाजी के संपर्क में आई थीं। एक विद्यार्थी से संस्थान की उद्यमिता विद्यापीठ की निदेशक होने तक की उनकी यात्रा के हर कदम पर नानाजी की अमिट छाप है।

करनी चाहिए, सेवा करनी चाहिए।" मैं तब नहीं जानती थी कि नौकरी और सेवा में क्या अंतर होता है लेकिन पूरे दिन नानाजी की कही बात मेरे दिमाग में गूंजती रही। मुझे ऐसा लगा कि मेरे अंदर की भावनाएं परिवर्तित हो रही हैं। चित्रकूट से दूसरे दिन ही मुझे वापस जबलपुर जाकर यूजीसी की परीक्षा देनी थी। मैं परीक्षा देने भी नहीं गई। चित्रकूट के सभी कार्यकर्ता मुझे रोकने का प्रयास कर रहे थे। मैं घर वापस गई और माता-पिताजी को मनाने का प्रयास किया। वे माने नहीं। मेरे पिताजी नाराजगी के साथ चित्रकूट आए। नानाजी से मिले और बातचीत की। जैसे ही पिताजी ने नानाजी का दर्शन किया उनकी नाराजगी दूर हो गई। वे इतना प्रभावित हो गए कि उन्होंने नानाजी से कहा, "मैं अपनी बेटी को आपके पास छोड़ रहा हूं, पैसा बिल्कुल नहीं चाहिए, काम सिखाइए, 6 महीने बाद इसकी शादी भी करनी है।" ऐसा कहकर मेरा मन रखने के लिए वे मुझे चित्रकूट छोड़कर वापस चले गए।

शादी के तीन साल बाद मैं जब गर्भवती हुई, उन्होंने तुरंत हमें बुलाकर खूब स्नेह किया। फिर पूरा परफ्यूम, जो दिल्ली से हमारे लिये लाये थे, वह पूरा मेरे ऊपर डाला, ताई जी से शॉल उढ़वाया। खूब खुश हो गये। हम उस समय नानाजी को पूछते थे, "पकौड़े खाएंगे क्या? भजिया खाएंगें क्या?" वे "हां" बोलते थे। हम लोग बनाकर खिलाते और खाते।

फिर नानाजी बहुत दिनों के बाद गर्भस्थ शिशु संस्कार की बात पर बौद्धिक देते हुये बोले, "नंदिता के पेट में जब अपूर्वा थी तो वह आती थी, पूछती थी कि नानाजी भजिया खाएंगे। मैं बोलता था हाँ तो उसे लगता था वह मेरे लिये बना रही है। पर हमें पता होता था, उसको खाने का मन रहता था। ऐसे गर्भ से जो संतान जन्म लेती है, उसका ध्यान रखना पड़ता है।" तब हमें समझ आया कि नानाजी को हम बहुत परेशान करते थे। पर वह मेरा पूरा-पूरा ख्याल करते थे, प्रसव के लिये भी न मां के घर, न सासू मां के घर जाने दिया और कहा, "तुम तो अच्छे घर की हो, इसीलिये तुम अच्छे महंगे अस्पताल में प्रसव कराओगी तो गांव में रहने वालों का क्या होगा? तुम यहीं रहोगी तो अच्छा होगा। तुम्हें यहीं रहना चाहिये।" लेकिन नानाजी ने उसके लिये पूरी व्यवस्थाएं कर रखी थीं। उस समय वे भी चित्रकूट में ही रुके थे और उन्होंने चित्रकूट में ही प्रसव करवाया। तुरंत उसी रात्रि को नानाजी ने हमें पत्र लिखा, "खुशी-खुशी आनंद के साथ कार्यक्रम संपन्न हुआ लेकिन जो तुम्हारा नाम नंदिता है, उसी के अनुरूप सभी को जोड़कर रखना, खुशी देना तुम्हारा काम है।" मैं समझ गई कि कहीं मेरे मन में अहंकार न आ जाये, इससे पहले ही नानाजी ने बहुत बड़ा दायित्व दिया। ■

साभार: पांचवां स्तम्भ, अप्रैल 2010

ऐसे बहुत कम लोग होंगे जिन्हें मृत्यु के पश्चात समाचारपत्रों के संपादकीयों में स्थान मिला होगा। आमतौर पर राजनेता तो खबरों के कॉलम में सिमट कर रह जाते हैं। लेकिन नाना तो नाना थे। उन्होंने जीवन के हर क्षेत्र को प्रभावित किया था - राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक, यहां तक कि आध्यात्मिक भी। इसीलिए, बहुत से संपादकों ने उन्हें अपने संपादकीयों के माध्यम से भी याद किया। कुछ चुने हुए संपादकीय ......

अभिमत

नानाजी देशमुख

नानाजी देशमुख नहीं रहे। उनकी जीवनयात्रा कई मायने में प्रयोगधर्मी के बतौर संपन्न हुई। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक के राष्ट्रवाद ने उनके मानस में राजनीतिक चेतना के बीज तो बोए, लेकिन बाद में वे हेडगेवार-गोलवलकर की विचारधारा की ओर समर्पित हो गए। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक की भूमिका अपनाते हुए उन्होंने जनसंघ के प्रचार-प्रसार में उल्लेखनीय योगदान दिया। महाराष्ट्र के कडोली में जन्म लेकर उन्होंने उत्तर प्रदेश को अपनी राजनीतिक कर्मभूमि बनाया। डॉ. राममनोहर लोहिया के गैरकांग्रेसवाद से जुड़कर उन्होंने जनसंघ को भारतीय मतदाताओं में स्वीकृति दिलाने का अवसरोचित काम किया। उल्लेखनीय है कि महात्मा गांधी की हत्या के बाद संघ-जनसंघ को अपेक्षित स्वीकृति जनता में नहीं मिल पा रही थी। जाहिर है कि नानाजी ने कांग्रेसविरोधी गैरकांग्रेसवाद का बेहतर इस्तेमाल कर चौथे आम चुनाव में उत्तर प्रदेश में जनसंघ को महत्वपूर्ण सफलता दिलाई। उनकी राजनीतिक सक्रियता 1980 तक मिशन की तरह जारी रही। जब 1974 में जयप्रकाश नारायण का संपूर्ण क्रांति आंदोलन प्रारंभ हुआ, तब नानाजी उनसे जुड़ गए, क्योंकि जयप्रकाश नारायण के अराजनीतिक आभामंडल के सहारे ही विशाल मतदाताओं में जनसंघ की राजनीतिक अस्पृश्यता समाप्त करने का विपुल अवसर था। निश्चित ही नानाजी ने वांछित लाभ जनसंघ को दिलाया। जनता पार्टी की सरकार के गठन में भी वह सक्रिय रहे, लेकिन दोहरी सदस्यता के विवाद और जनसंघ की जनता पार्टी से इतर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रति निष्ठा के सवाल पर जब जनता पार्टी की सरकार का पतन हुआ, तब उसके बाद नानाजी राजनीतिक मंच को त्याग कर ग्रामोत्थान के क्षेत्र में सक्रिय हो गए। हालांकि यह भी संघप्रणीत कार्यक्रम ही था। उन्होंने पहले उत्तर प्रदेश के गोंडा और बाद में उत्तर प्रदेश के कार्य किए। यह सारा कार्य जनसंघ के चिंतक दीनदयाल उपाध्याय के दृष्टिकोण पर विकसित किया गया। आत्मनिर्भर और विवादमुक्त ग्राम व्यवस्था का यह प्रयोग पांच सौ गांवों में चलाया गया। नानाजी के गुजरने के बाद इन गांवों में इन प्रयोगों के टिकाऊ होने पर सबकी नजर होगी। ग्रामोत्थान के कामों में लगे होने के बावजूद नानाजी को अटलबिहारी वाजपेयी की सरकार ने राज्यसभा के लिए मनोनीत किया। हालांकि सरकार चलाने में उनकी भूमिका सलाहकार के बतौर भी शायद ही रही होगी। ग्रामोत्थान के उनके कार्यो को अनेक अंतर्राष्ट्रीय संस्थानों ने सराहा, लेकिन कई राज्यों की भाजपा सरकारें भी उस माडल को आगे नहीं बढा सकीं हैं जबकि नानाजी का कार्य उनके लिए प्रेरणा का आधार बन सकता है। निश्चय ही नानाजी ने संघ संस्कारों में दीक्षित होकर अनेक प्रयोगों में अपने व्यक्तित्व का रूपांतरण किया। ऐसा व्यक्तित्व संघ परिवार में भी दुर्लभ ही है, जबकि गांवप्रधान देश को अनेक नानाजी देशमुखों की जरूरत है। नानाजी भी मार्क्सवादी नेता ज्योति बसु की तरह अपना देहदान कर गए हैं, ताकि उनका चिकित्साशास्त्रीय लाभ लिया जाए। नानाजी का समर्पण रेखांकित करने योग्य है। जब तक राजनीति में रहे, तब तक उसकी प्राथमिकताओं के प्रति समर्पित रहे और जब राजनीति छोड़कर ग्रामोदय की ओर आए, तो फिर राजनीति को मुड़कर नहीं देखा। इस तरह के दृढ़ निश्चय से उन्हें सबक लेनी चाहिए, जो किसी भी कीमत पर सत्ता के गलियारे से बाहर नहीं आना चाहते।

साभार: लोकमत समाचार, 1 मार्च, 2010

एक 'कौटिल्य' का महाप्रयाण

नानाजी देशमुख के निधन से भारतीय राजनीति व रचनात्मक समाजकार्य के एक महान मनीषी व ऋषि का महाप्रयाण हुआ है। वर्तमान राजनीति, समाजनीति के कौटिल्य को हमने खो दिया है। गुणा-भाग की राजनीति, यह राजनीति का स्थाई भाव नहीं है। आज की राजनीति में केवल दाम, दंड, भेद का ही इस्तेमाल होता है, साम मार्ग का इस्तेमाल नहीं होता। लेकिन नानाजी ऐसे मनीषी व राजनीतिज्ञ थे कि उन्होंने इस मार्ग का इस्तेमाल कर राजनीति की छुआछूत को समाप्त किया। तत्कालीन जनसंघ के साथ कोई भी दल साथ आने तैयार नहीं होता था, लेकिन नानाजी ने उन सभी को जनसंघ का संज्ञान लेने और सत्ता की राजनीति में अपने साथ लेने के लिए बाध्य किया। यदि जनसंघ में नानाजी पर्व नहीं होता तो शायद इतनी आसानी से जनसंघ राजनीति के मुख्य प्रवाह का हिस्सा नहीं होता। 1951 में जनसंघ का गठन हुआ और मात्र तीन सांसद 1952 के चुनाव में लोकसभा में पहुंचे थे, लेकिन इसी जनसंघ को नानाजी ने उत्तर प्रदेश में संयुक्त विधायक दल (संविद) सरकार तक पहुंचाया।

भारतीय राजनीति में नेहरू पर्व और कांग्रेस पर्व का विरोध करने वाले जो थे, उन्हें नानाजी ने अपने संगठन-कौशल्य से एकत्रित किया। डॉ. राममनोहर लोहिया और पं. दीनदयालजी उपाध्याय, इन दोनों की मुलाकात करा दी और इससे भारत में कॉंग्रेसविरोधी माहौल गरमाने लगा। 1962 में चीनी आक्रमण के बाद नेहरू पर्व अंतिम चरण में था, उस वक्त नानाजी ने जनसंघ का उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश में गठन किया। कांग्रेस के खिलाफ 1960 में एक विशाल मोर्चा गठित हुआ और उत्तर प्रदेश में चौधरी चरणसिंह के साथ जनसंघ ने सत्ता में सहभागिता की। उत्तर प्रदेश की राजनीति में चन्द्रभान गुप्ता पर्व समाप्त हुआ। एक-दो बार नहीं तो चार बार गुप्ता को हार देखनी पड़ी। बाद में जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में नवनिर्माण आंदोलन हुआ। जयप्रकाश नारायण पर बरस रही लाठियों को नानाजी ने अपने शरीर पर झेला और इसी में नानाजी का हाथ टूटा। इसी आंदोलन के जरिये नानाजी ने जयप्रकाश नारायण को मुख्य राजनीति के प्रवाह में लाया। जून, 1975 में आपातकाल जारी हुआ और सारा राजनीतिक परिदृश्य ही बदल गया। आपातकाल के बाद हुए चुनाव में कांग्रेस की बहुत बुरी तरह पराजय हुई। उसके बाद जनता पार्टी का गठन हुआ। नानाजी महासचिव बने। मोरारजी देसाई सरकार के मंत्रिमंडल का गठन हो रहा था। इसमें जनसंघ के हिस्से में तीन स्थान थे जिसमें अटलजी, आडवाणीजी और नानाजी को लिया जाना था। लेकिन नानाजी ने मंत्री पद लेने से साफ इनकार कर दिया। मैं यदि मोरारजी के मंत्रीपरिषद में मंत्री बन कर रहूंगा, तो मोरारजी से कैसे कुछ कह पाऊंगा? ऐसा सवाल कर नानाजी ने मंत्री पद को नकार दिया। नानाजी और मधु लिमये मंत्रिमंडल में शामिल नहीं हुए। आगे चलकर नानाजी ने आयु के 60वें वर्ष में राजनीति से निवृत्त होने का फैसला किया और सचमुच में वे राजनीति से निवृत्त हुए। दोबारा उन्होंने पीछे मुड़कर नहीं देखा।

नानाजी बेहद गरीब परिवार में जन्मे थे। अपनी पढ़ाई और जीवनयापन हेतु कितने कष्ट उठाने पड़ते हैं, इसका उन्होंने प्रत्यक्ष अनुभव लिया था। अपनी पढ़ाई के लिए उन्होंने सब्जी बेची। बाल्यावस्था में जो दिक्कतें उन्होंने अनुभव की, उसके आधार पर उन्होंने बच्चों के जीवन में स्वर्ग जैसी खुशियाँ लाने और उनके जीवन को खुशहाल बनाने पर चिंतन किया। इसके परिणामस्वरूप बाद में नागपुर में बालजगत का बीजारोपण किया। नानाजी अर्थात् सामाजिक समस्याओं की खोज कर और उसका समाधान ढूंढनेवाली एक प्रयोगशाला थी। उनसे मिलते वक्त किसी बड़े वैज्ञानिक से मिलने का अहसास होता था। नानाजी ने दीनदयाल उपाध्याय के जीवन सिद्धांत एकात्म मानवदर्शन

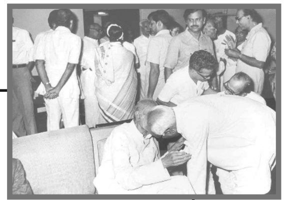

को प्रत्यक्ष अमल मे लाने का प्रयास गोंडा जिले में किया। इससे पूर्व सरस्वती शिशु मंदिर का प्रयोग उन्होंने किया। गोंडा जिले का संपूर्ण चित्र ही बदल दिया। नानाजी ने दीनदयाल शोध संस्थान का गठन किया। 1991 में चित्रकूट में देश के पहले ग्रामीण विश्वविद्यालय की स्थापना की और साढ़े तीन वर्ष तक वे उसके कुलाधिपति रहे। चित्रकूट के आस-पास के पांच सौ (500) गांवों का सर्वांगीण विकास करने के उद्देश्य से उन्होंने विभिन्न कार्यक्रम और प्रकल्प प्रारंभ किये। तत्कालीन प्रधानमंत्री अटल बिहारी वाजपेयीजी ने एक प्रसंग में कहा, जिन्हें भारत के भविष्य को लेकर संदेह है, देश में कोई परिवर्तन नहीं हो सकता, ऐसी जिनकी धारणा है, यह देश गलत दिशा में जा रहा है, ऐसा जिनका पक्का विश्वास है, उन सभी को चित्रकूट आकर देखना चाहिए। परिवर्तन क्या है? कायाकल्प क्या है? गरीबी दूर करना यानी क्या है? इसका साफ और स्पष्ट दर्शन चित्रकूट में होगा। देश के उज्ज्वल भविष्य पर विश्वास होगा। राजनीति से बाहर आने के बाद मूलभूत काम करने का उनका इरादा था। विकास का मार्ग गांव से ही जाता है। इसके बारे में मन में कोई संदेह नहीं है। महात्मा गांधी और पं. दीनदयालजी के मूल चिंतन का प्रभाव उन पर था। समाज की जो आवश्यकता है, वह ग्रामीण क्षेत्र में है, यह ध्यान में आने के बाद इस मूल चिंतन को नानाजी ने नई दिशा दी। अलग-अलग प्रयोगों के माध्यम से वे इस चिंतन पर अमल करते थे। राजनीति को छोड़कर ग्रामीण क्षेत्र में सामाजिक कार्य हेतु जाते समय उनका विचार सकारात्मक ही था। नकारात्मक सोच से उन्होंने राजनीति नहीं छोड़ी थी। उनके चिंतन का आधार राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ का विचार ही था। संघ संस्थापक डॉ. हेडगेवार के कारण ही वे संघ में आये और प्रचारक के नाते कार्य करने निकल पड़े। अपने जीवन में विलक्षण गरीबी का उन्होंने प्रत्यक्ष अनुभव लिया था और इसी के कारण गरीबों के बारे में उनके मन में अपार संवेदना और करूणा थी। इस गरीबी को वे अपने जीवन में कभी भूल नहीं पाये और इसी के कारण आगे चलकर बड़े, अमीर, धनवान लोगों के बीच रहते हुए भी वह कभी धन और अमीरी की मायामोह के जाल में नहीं फंसे। देश के प्रति अपने कर्तव्यों को वे कभी नहीं भूलते थे। राष्ट्र के लिए संपूर्ण समर्पण की प्रेरणा उन्होंने राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से ली। प्रचारक बनकर संघकार्य के लिए निकल पड़े।

नानाजी ने राजनीति से निवृत्त होने के बाद राजनीतिक विश्लेषण करना कई वर्षों तक सुनियोजित तरीके से टाल दिया था, लेकिन राजीव गांधी का राजनीति में प्रवेश होने पर भाजपा को उनसे सहयोग कर सहायता का हाथ आगे बढाना चाहिये और कांग्रेस और भाजपा को एकत्रित होना चाहिये, इस विचार का प्रतिपादन किया था। वे गलत नहीं थे, अचूक थे। आगे चलकर अनेक बुद्धिजीवियों ने इस विषय को आगे बढ़ाया, लेकिन नानाजी की ही आलोचना हुई। कहा गया कि उन्हें इस तरह की सलाह नहीं देनी चाहिये। लेकिन नानाजी ने अपना दिया हुआ वक्तव्य पीछे नहीं लिया। वह राजनीति के चाणक्य थे। इसलिए उस प्रतिपादन के पीछे निश्चित ही कोई सकारात्मक व दूरदर्शी विचार होगा। उनके सुझाव के अनुसार यदि हुआ होता तो क्या होता, इसका अनुमान तो आज नहीं लगाया जा सकता, लेकिन संभवतः इससे भारतीय राजनीति को नई दिशा मिल जाती। इसका परिणाम अंततः देश हित में ही होता, लेकिन वह नहीं हुआ। राजनीतिक इतिहास को एक नया मोड़ नहीं मिला। इसे हमने देखा है। नानाजी 94 वर्ष का परिपूर्ण जीवन जीये और बेहद संतुष्ट जीवन जी कर उन्होंने देहत्याग किया। उन्हें संपूर्ण देश और समस्त तरूण भारत परिवार की भावपूर्ण श्रद्धांजलि!

साभार: तरुण भारत, नागपुर, 1 मार्च, 2010

विलक्षण नानाजी

नानाजी देशमुख के अवसान के साथ देश और विशेष रूप से उत्तर प्रदेश एक प्रतिबद्ध समाजसेवी से विहीन हो गया। वह वस्तुतः ऋषि परंपरा के राजनेता और समाजसेवी थे। उनका जीवन आज के राजेताओं के लिए एक आदर्श उदाहरण है। उनका मानना था कि साठ साल के बाद राजनेताओं को खुद को समाजसेवा में अर्पित कर देना चाहिए। उन्होंने स्वयं ऐसा कर यह प्रमाणित किया कि उनकी कथनी व करनी में अंतर नहीं था। उन्होंने अपने कार्य-व्यवहार से यह भी साबित किया कि राजनीति का मुख्य उद्देश्य समाजसेवा होना चाहिए। उन्होंने इस धारणा को झुठलाया कि राजनीति के बगैर समाजसेवा नहीं हो सकती। उनका ध्येय वंचित एवं उपेक्षित वर्गों की सहायता करना मात्र नहीं, बल्कि उन्हें स्वावलंबी बनाना था। उन्होंने यह सिद्ध किया कि यदि इच्छाशक्ति हो तो इस ध्येय की पूर्ति की जा सकती है और ग्रामीण जीवन में आमूल-चूल परिवर्तन लाया जा सकता है। निःसंदेह भारतीय राजनीति भी उनकी ऋणी रहेगी, क्योंकि आपातकाल के खिलाफ जो जोरदार मुहिम छिड़ी, उसका श्रेय उन्हें भी जाता है। आज पूरे देश में फैले सरस्वती शिशु मंदिरों को स्थापना का श्रेय तो सिर्फ उन्हें ही जाता है।

दैंनिक जागरण

सोमवार 1 मार्च 2010 : चैत्र कृष्ण 1, वि. 2066

विलक्षण नानाजी

यह आश्चर्यजनक है कि मूल रूप से महाराष्ट्रवासी होने के बावजूद उन्होंने समाजसेवा के लिए उत्तर प्रदेश को कर्मभूमि बनाया। कोई निःस्वार्थ समाजसेवी ही ऐसा कर सकता है। पहले उन्होंने गोंडा जिले में जयप्रभा गांव के माध्यम से अपने सपने को साकार किया और फिर चित्रकूट के जरिये। जयप्रभा गांव को उन्होंने सच्चे अर्थो में स्वावलंबी बनाया। यह ध्यान रहे कि वह सबसे पिछड़े गांव की तलाश में यहां आए थे। कुछ ही समय में उन्होंने इस गांव को ऐसा बना दिया कि गांव वालों को दैनिक जरूरत की कोई भी वस्तु बाजार से नहीं खरीदनी पड़ती थी। यह समझना मुश्किल है कि ग्राम्य विकास की ऐसी कोशिश सरकारी नीतियों में क्यों नहीं झलकती? उन्होंने गोंडा जिले में स्थान-स्थान पर जो अनेक प्रकल्प चलाए, उनका असर आसपास के इलाकों पर भी पड़ा। गोंडा के बाद उन्होंने चित्रकूट के पिछड़े इलाकों का उद्धार किया। क्या यह उम्मीद की जाए कि उनके जीते जी न सही, उनके निधन के बाद शासन में बैठे लोग उनके तौर-तरीकों का अनुकरण करेंगे? उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि यही होगी कि गांवों का विकास उसी तरह किया जाए, जैसा उन्होंने करके दिखाया।

साभार: दैनिक जागरण, 1 मार्च, 2010

ऐसा हो राजनेता

एक आदर्श इंसान का प्रतिरूप या मॉडल कैसा हो सकता है? अगर आपके अंदर इस बात की जिज्ञासा हो तो बस नानाजी देशमुख जी के जीवन-वृत्तांत को नजरों से गुजार लीजिए। उम्र का शतक लगाने में महज पांच वर्षों से चूक गए नानाजी का जीवन-संघर्ष व उनकी उपलब्धियां उस हर इंसान के लिए प्रकाश स्तंभ की तरह हैं जो अवरोधों के समुद्र पर रास्ता बनाता है और समाज की तरक्की के मानक गढ़ता है। बचपन में ही मां-बाप की सुरक्षा से महरूम नानाजी ने दरिद्रता का दंश उस उम्र में झेला, जब वक्त खाने-खेलने का होता है। मंदिरों में रातें गुजार और दिन में सब्जियां बेचकर नानाजी ने सिर्फ पढ़ाई नहीं, बल्कि उच्च शिक्षा का गौरव हासिल किया और बता दिया कि 'जहां चाह है, वहां राह' को तो निकलना ही है। नानाजी के आदर्श थे बाल गंगाधर तिलक, जिनसे उन्होंने राष्ट्रीयता और समाजसेवा की प्रेरणा ली। आर.एस.एस. के सरसंघचालक हेडगेवार की प्रेरणा से उन्होंने आरामदेह नौकरी और सुखी जीवन का रास्ता न चुनकर एक बार फिर संघर्ष की राह पकड़ी। उन्हें संघ के विस्तार के लिए यूपी भेजा गया, जहां उन्होंने अपनी अद्‌भुत संगठन-क्षमता दिखाई। गांठ में पैसे नहीं, हर तीन दिन में धर्मशाला बदलकर रात बिताने का नया ठिकाना तलाशना, संघर्ष की ऐसी कंटीली राह पर चलकर उन्होंने दायित्व को पूरा किया। उसके लिए 'पांचजन्य', 'राष्ट्रधर्म', 'स्वदेश' जैसे प्रकाशनों को आरंभ कर उन्हें जन-जन तक पहुंचाया। संघ के पहले सरस्वती शिशु मंदिर नामक विद्यालय की शुरूआत की। संगठन-क्षमता का यही प्रदर्शन उन्होंने भारतीय जनसंघ की स्थापना और विस्तार में दिखाया। नानाजी का असल राजनीतिक कौशल तो कांग्रेस को धाराशायी कर यूपी में पहली बार जनता पार्टी की सरकार के गठन में दिखा। चरणसिंह मुख्यमंत्री बने तो नानाजी को भी दबाव में मंत्री बनना पड़ा। राममनोहर लोहिया भी नानाजी की संगठन-क्षमता से चमत्कृत रहते थे। उनका मानना था कि मूल्यों और आदर्शों के बिना राजनेता की कोई कीमत नहीं होती, इसलिए साठ की आयु पूरी करते ही वह राजनीति से अलग होकर समाजसेवा में लग गए। उन्होंने उत्तर प्रदेश, चित्रकूट को चुना। उन्होंने पांच सौ गांवों का चयन कर उन्हें आत्मनिर्भर बनाने और आपसी झगड़े-झंझटों से दूर रहकर चलने की प्रेरणा दी। पूर्व राष्ट्रपति कलाम यहां की तरक्की से ऐसे अभिभूत हुए कि पूरे देश के लिए इसे मॉडल बनाने की बात कह दी।

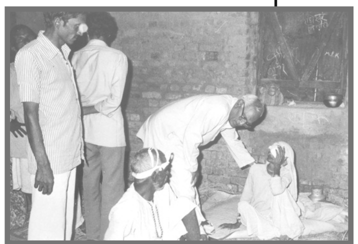

राष्ट्रीय सहारा

ऐसा हो राजनेता

साभार: राष्ट्रीय सहारा, 1 मार्च, 2010

नवदधीचि नानाजी

नानाजी नहीं रहे, यह विचार मन में आते ही मन विद्रोह कर उठता है, क्योंकि भले ही वह सदेह आज हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन नानाजी की जिजीविषा, उनकी दृढ़ संकल्पशक्ति और सेवा-साधना का मूर्त्तरूप उन्हें कभी हमारी स्मृतियों से ओझल नहीं होने देगा। एक साधारण से बालक चण्डिकादास की लोक-विभूषित नाना देशमुख बनने तक की जीवन-यात्रा इतनी प्रेरणास्पद है कि उसके संस्पर्श से असंख्य मन आह्लादित हो, उस पथ के अनुगामी बने। गोंडा का जयप्रभा ग्राम, चित्रकूट का ग्राम विकास प्रकल्प व ग्रामोदय विश्वविद्यालय तथा दिल्ली का दीनदयाल शोध संस्थान नानाजी की कल्पनाशीलता, योजकता और संगठनशक्ति के जीवंत रूप हैं। डा. हेडगेवार के सान्निध्य में परिपुष्ट हुआ स्वयंसेवकत्व राष्ट्र व समाजसेवा के व्रत के रूप में अंतिम श्वांस तक उनके जीवन की तपश्चर्या बनकर प्रस्फुटित होता रहा। यह प्रस्फुटन उनकी इतनी दीर्घायु होने पर भी उन्हें पूरी तरह चैतन्य व जीवंत बनाए हुए था। नानाजी एक कर्मयोगी थे, समाज और राष्ट्र जीवन के जिस क्षेत्र में भी वे दायित्व लेकर गए, प्राणपण से न केवल उसे पूर्ण किया, बल्कि ऐसे प्रतिमान गढ़ दिए कि मानो एक नया प्रेरणापुंज खड़ा हो गया। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक के रूप में एक निस्पृह, निस्वार्थ, त्यागपूर्ण, बंधुत्वभाव से ओत-प्रोत, सेवाभावी जीवन जीने का जो संकल्प उनके मन में जागृत हुआ, उसे पूरी दृढ़ता से उन्होंने जीवनपर्यंत निभाया। कोई भी प्रलोभन उन्हें डिगा न सका, यहां तक कि सत्ता के मोहक आमंत्रण को भी उन्होंने ठुकरा दिया। लोकप्रियता के शिखर पर होते हुए भी न केवल उन्होंने मंत्रिपद को अस्वीकार किया, बल्कि राजनीति की मर्यादा बांधते हुए उन्होंने 60 वर्ष की आयु हो जाने के बाद स्वयं को राजनीति से मुक्त कर वंचितों, अभावग्रस्त ग्रामीणों की अहर्निश सेवा में समर्पित कर दिया।

आज जब जीवन की अंतिम सांस तक राजनेताओं में पदलिप्सा हिलोरें मारती रहती है और वे देशसेवा के नाम पर स्वार्थों की राजनीति में आकंठ डूबे रहते हैं, तब नानाजी के जीवन का यह घटनाक्रम निश्चय ही प्रेरणा का स्रोत है। इस सेवा-साधना में रत नानाजी ऋषितुल्य हो गए, दरिद्रनारायण की सेवा उनके जीवन का मूलमंत्र बन गई। गैरराजनीतिक आधार पर उन्होंने जन सहयोग से कृषि, ग्राम विकास व शिक्षा के क्षेत्र में ऐसे अनूठे प्रयोग सार्थक कर दिखाए कि उनके माध्यम से आज सैकड़ों गांवों के लाखों ग्रामीणों का जीवन स्वावलम्बन व आर्थिक उन्नयन का स्वाद चखकर भाव-विभोर है। गरीबों और संकटग्रस्त लोगों की करूण पुकार पर वे दौड़े चले जाते थे। ऐसे अनेक अंचलों में उन्होंने सेवा और विकास के जो स्वावलम्बी कार्य खड़े किए, वे आधुनिक विकास की बेतहाशा दौड़, जो अनेक प्रकार के विनाश को भी आमंत्रित कर रही है, के लिए एक मानक बन सकते हैं। वे स्पष्टतः यह मानते थे कि ग्रामीण आत्मनिर्भरता के बिना कोई विकास

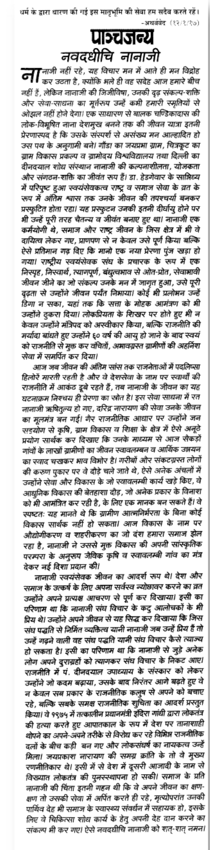
पाञ्चजन्य

नवदधीचि नानाजी

सार्थक नहीं हो सकता। आज विकास के नाम पर औद्योगीकरण व शहरीकरण का जो दंश हमारा समाज झेल रहा है, नानाजी ने उससे मुक्त विकास की अपनी सांस्कृतिक परम्परा के अनुरूप जैविक कृषि व स्वावलम्बी गांव का मंत्र देकर नई दिशा प्रदान की।

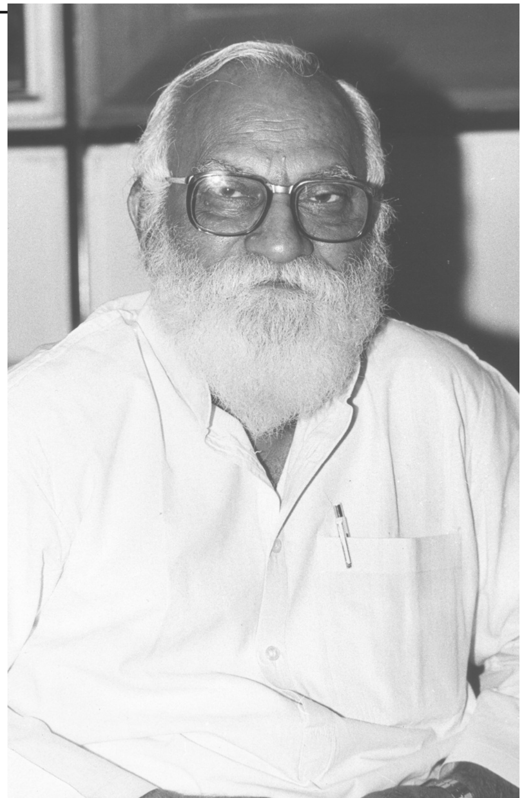

नानाजी स्वयंसेवक जीवन का आदर्श रूप थे। देश और समाज के उत्कर्ष के लिए अपना सर्वस्व न्योछावर करने का व्रत उन्होंने अपने प्रत्यक्ष आचरण से पूर्ण कर दिखाया। इसी का परिणाम था कि नानाजी संघ विचार के कटु आलोचकों के भी प्रिय थे। उन्होंने अपने जीवन से यह सिद्ध कर दिखाया कि जिस संघपद्धति से निर्मित व्यक्तित्व यानी नानाजी जब उन्हें प्रिय हैं तो उन्हें गढ़ने वाली वह संघपद्धति यानी संघविचार कैसे त्याज्य हो सकता है। इसी का परिणाम था कि नानाजी से जुड़े अनेक लोग अपने दुराग्रहों को त्यागकर संघविचार के निकट आए। राजनीति में पं. दीनदयाल उपाध्याय के संस्कार को लेकर उन्होंने जो कदम बढ़ाया, उसके बाद निरंतर आगे बढ़ते हुए वे न केवल सब प्रकार के राजनीतिक कलुष से अपने को बचाए रहे, बल्कि सबके समक्ष राजनीतिक शुचिता का आदर्श प्रस्तुत किया। वे 1975 में तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी द्वारा लोकतंत्र की हत्या करते हुए आपातकाल के रूप में देश पर तानाशाही थोपने का अपने-अपने तरीके से विरोध कर रहे विभिन्न राजनीतिक दलों के बीच कड़ी बन गए और लोकसंघर्ष का नायकत्व उन्हें मिला। जयप्रकाश नारायण की समग्र क्रांति के तो वे मुख्य रणनीतिकार थे। इसी में से देश में दूसरी आजादी के नाम से विख्यात लोकतंत्र की पुनस्स्थापना हो सकी। समाज के प्रति नानाजी की चिंता इतनी गहन थी कि वे अपने जीवन का क्षण-क्षण तो उसकी सेवा में अर्पित करते ही रहे, मृत्योपरांत उनकी पार्थिव देह भी समाज के स्वास्थ्य संवर्धन में सहायक हो, इसके लिए वे चिकित्सा शोध कार्य के हेतु अपनी देह दान करने का संकल्प भी कर गए। ऐसे नवदधीचि नानाजी को शत्-शत् नमन।

साभार: पाञ्चजन्य, 14 मार्च, 2010

दधीचि!

राष्ट्र सेवा में अपना जीवन समर्पित करनेवाले नानाजी देशमुख आज प्रत्यक्ष रूपसे हमारे बीच नहीं हैं, फिर भी नानाजी ने पिछले अनेक वर्षो में जो कार्य खड़े किये है, उनके माध्यम से नानाजी का अस्तित्व स्थायी रूप से रहने वाला है। राष्ट्रसेवा की प्रेरणा से प्रेरित व्यक्ति स्वयं के व्यक्तिगत सुख और हितों को पीछे छोड़कर कितना बड़ा काम कर सकता है, इसका एक प्रत्यक्ष चित्रण नानाजी का केवल स्मरण मात्र से अपनी आँखो के सामने दिखाई देता है। अपनी युवावस्था में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के प्रचारक के नाते राष्ट्रसेवा के कार्य में उन्होंने स्वयं को समर्पित कर दिया। राष्ट्राय स्वाहा, इदं न मम्, इसे ध्यान में रखकर राष्ट्रकार्य करने का नानाजी ने निश्चय किया। राष्ट्रसेवा करते-करते उन्होंने अपने देह को चंदन की तरह घिसकर क्षीण किया। राष्ट्रकार्य में स्वयं को पूर्णरूप से समर्पित करने वाले नानाजी ने पीछे मुड़कर कभी देखा नहीं। नानाजी ने अपने गुणों और संघ संस्कारों के बल पर राजनीतिक, शैक्षणिक और सामाजिक क्षेत्रो में इतने विशाल कार्य खड़े किया है, जिसे देखकर किसी को भी आश्चर्य होगा। नानाजी ने जिस समय संघ कार्य की शुरूआत की, वह समय एकदम प्रतिकूल था, किन्तु प्रवाह के विरूद्ध संघर्ष करने की बाल घुट्टी लेने वाले नानाजी ने उस प्रतिकूल परिस्थिति की चिंता किये बिना अपना कार्य जारी रखा। 1948 में संघ पर प्रतिबंध के काल में कांग्रेस नेताओं के घर में ही रहकर प्रतिबंध हटाने हेतु नानाजी ने प्रयास प्रारंभ किये और इन प्रयासों को देखने से इस कुशल संगठक को मनुष्य को परस्पर जोड़ने की कला किस तरह हासिल थी, इसका अनुमान किया जा सकता है। उत्तर भारत में आज सर्वत्र सरस्वती शिशु मंदिर का जो जाल फैला है, उसकी शुरूआत नानाजी ने ही की थी। इसे देखकर उनके भीतर के दूरद्रष्टा का दर्शन होता है। भारतीय जनसंघ का दायित्व संभालने के बाद पं0 दीनदयाल उपाध्याय, अटल बिहारी वाजपेयी जैसे कार्यकर्ता के साथ जनसंघ का कार्य देशभर में खड़ा करने में नानाजी ने अथक परिश्रम किया। राजनीतिक दल का कार्य करते समय सभी क्षेत्रों के लोगों के साथ उनका संपर्क था। 1974 के दौरान बिहार में लोकनायक जयप्रकाश नारायण के नेतृत्व में तत्कालीन सरकार के खिलाफ जो आंदोलन छेड़ा गया था, उस आंदोलन का नेतृत्व जयप्रकाश नारायण को करना चाहिये, इसके लिए नानाजी ने जयप्रकाशजी को राजी कराया और इस आंदोलन में नानाजी ने जयप्रकाश जी का एक भाई के समान पूरा साथ दिया। पं. दीनदयाल उपाध्याय की स्मृति में शुरू किये गये दीनदयाल शोध संस्थान के माध्यम से उ.प्र. में गोंडा, महाराष्ट्र में बीड और म.प्र. में चित्रकूट में समाज के निचले स्तर के लोगो का जीवन स्तर ऊँचा उठाने के लिए नानाजी ने जो प्रकल्प शुरू किये और इसके माध्यम से इन क्षेत्रों में जो परिवर्तन कर दिखाये है, इसने सभी को आश्चर्य-चकित कर दिया। पं. दीनदयाल जी के एकात्म मानववाद को प्रत्यक्ष कार्यान्वित करने के उद्देश्य से नानाजी ने विभिन्न कार्य खड़े किये और उसे सफल बनाकर दिखाया। गांव-गांव में समाज के निचले स्तर के व्यक्ति का सर्वांगीण विकास का बीजमंत्र लेकर नानाजी ने गोंडा, चित्रकूट और बीड क्षेत्र में अपने कार्य के माध्यम सें अपेक्षित परिवर्तन का अनुभव हासिल किया है। तत्कालीन राष्ट्रपति डा. नीलम संजीव रेड्डी और अभी हाल ही में राष्ट्रपति ए पी जे अब्दुल कलाम समेत अनेक महानुभाव नानाजी के कार्यो से बेहद प्रभावित हुए।

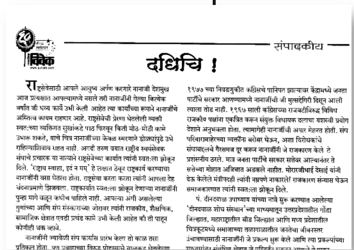
संपादकीय

दधिचि !

साभार: विवेक साप्ताहिक, 28 मार्च, 2010

चित्रकूट का तपस्वी

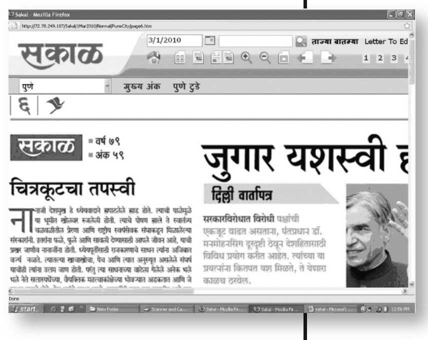

आम जनता की पहल से किया गया विकास यह संपूर्ण क्रांति के विचार के सैद्धांतिक तत्व को नानाजी ने अपने आचरण से कर दिखाया है। ध्येयवादी राजनीति का एक आदर्श उन्होंने खड़ा किया।

नानाजी देशमुख ध्येयवाद से प्रेरित वृक्ष के समान थे जिसकी जड़े इसी भूमि में बहुत गहरी जमीं हुई थी। उसका पोषण स्वतंत्रता आंदोलन की प्रेरणा और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ से मिले संस्कारो से हुआ था। दूसरों के लिए फल, फूल और छाया देने के लिए ही अपना जीवन है, इस बात का उन्हें पूरा एहसास था। ध्येयपूर्ति के लिए उन्हें राजनीति का साधन बिल्कुल भी वर्ज्य नहीं था। राजनीति के सूक्ष्म दांवपेंच और होनेवाले अंतर्गत संघर्ष की उनको अच्छी समझ थी, किन्तु इस मार्ग पर चलनेवाले बड़े-बड़े नेता सत्ता की स्पर्धा मे व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा के जाल में फंसते है और जिसे साधन मानते थे वही उनका साध्य बनता। लेकिन नानाजी ने अपने बारे में ऐसा होने नहीं दिया। उसके लिए आवश्यक शक्तिशाली मनोनिग्रह, उनके व्यक्तित्व का एक आकर्षक हिस्सा था। आपातकाल के विरोध में देशभर जो विशाल आंदोलन खड़ा हुआ, उस पर सवार होकर जनता पार्टी सत्ता में आई। तत्कालीन प्रधानमंत्री मोरारजीभाई देसाई को जनता पार्टी में इकट्ठा हुए चार ही दलों के और उसमें विभिन्न विचारों के नेताओं को शामिल करने की कसरत करनी थी। ऐसे परिस्थिति में भी नानाजी की ओर स्वाभाविक तरीके से आया उद्योग मंत्री पद नानाजी ने लेने साफ इंकार किया। सत्ता को इतनी आसानी से ठुकराने के कारण नानाजी की समर्पण और त्याग की महती गाई जाती है और वह उचित ही है। परन्तु इस कृति में केवल त्यागवृत्ति नहीं, तो इस विषय के पीछे की उनकी कारण-मीमांसा से नानाजी की मार्मिक दृष्टि का पता चलता है। मोरारजी के मंत्रीमंडल में एक सहयोगी के नाते काम करते समय उनके कहे के अनुसार ही व्यवहार करना पड़ता। फिर उनसे गलती हुई तो उनसे जवाब कौन पूछेगा, यह उनका सवाल था। केन्द्रित होना यह सत्ता का स्वभाव है और अधिक केन्द्रित हुई सत्ता उतनी अधिक भ्रष्टाचार की ओर जाने का खतरा रहता है। इस बात का ठोस अहसास नानाजी के इस विचार से दिखाई देता है। नानाजी की दृष्टि में देश अर्थात देश के लोग था और इस लोकशक्ति की उपासना उन्हें करनी थी। उन्हें विश्वास था कि ऐसी जागरूक लोकशक्ति ही सत्ता को सही दिशा में मोड़ सकती है।

नानाजी की संपूर्ण जीवनयात्रा पर नजर डालने से ध्यान में आता है कि संघ से प्राप्त मूल प्रेरणा के अनुसार उन्होंने विभिन्न नये-नये कार्य शुरू किये क्योंकि वे मूलतः एक प्रयोगशील व्यक्ति थे। निर्लेप और निर्मोही मन के कारण वे सहजता से लोगों को अपने साथ जोड़ते थे। अलग-अलग जाति पंथ के, विविध क्षेत्र के लोग उनकी ओर आकृष्ट होते थे। भिन्न राजनीतिक विचारधारा रखनेवाले राममनोहर लोहिया, जयप्रकाश नायराण, मधु लिमये आदि अनेक नेताओं के साथ उनकी गहरी मित्रता थी। 1967 में शक्तिशाली कांग्रेस को संयुक्त विधायक दल के रूप में चुनौती देने का और आपातकाल में जनता पार्टी को संगाठित करने के प्रयोग में नानाजी की महत्वपूर्ण भूमिका थी। यह एक बेबुनियाद भ्रांती है कि इसके पीछे कांग्रेसद्वेष जैसी कोई भावना थी। किसी भी विकासशील देश में विपक्षी राजनीतिक विकल्प खड़ा किए जाने की बड़ी आवश्यकता होती है। एशिया, अफ्रीका में कई देशों की आज की स्थिति देखने से यह आवश्यकता और ज्यादा महसूस होती है। नानाजी द्वारा निभाई गई राजनीतिक भूमिका का मोल इसी दृष्टिकोण से किया जाना चाहिए। उन्होंने महात्मा गांधीजी के ग्राम स्वावलंबन के विचार पर प्रत्यक्ष रूप से अमल कर दिखाया। गांधीजी ने कांग्रेस को विसर्जित कर उसे लोकसेवक संघ के रूप में परिवर्तित करने का सुझाव दिया था। ऐसा करना कितना उचित है, इसके बारे में अलग-अलग राय और विचार हो सकते है, लेकिन सामाजिक सेवा में समर्पित कार्यकर्ताओं की दीवार खड़ी रहनी चाहिये, इस सुझाव का भावार्थ था, यह ध्यान में रहना चाहिये। राजधानी दिल्ली को पीठ दिखाकर दूरदराज गांव मे लौटनेवाले कितने लोकसेवक पिछले 62 वर्षो में निर्माण हुए? लेकिन नानाजी ने मात्र इसी रास्ते को चुना। आयु के 60 वर्ष के बाद नेताओं को राजनीति से निवृत्त होकर समाजकार्य के लिए स्वयं को समर्पित कर देना चाहिये। वे केवल यह सुझाव देकर नहीं रूके, बल्कि स्वयं उस पर प्रत्यक्ष रूप से अमल करके दिखाया ।

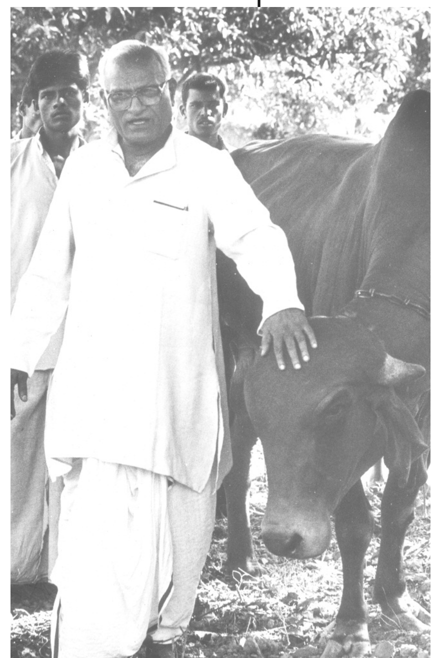

पहली बार उत्तर प्रदेश के सबसे पिछड़े गोंडा जिला, फिर बाद में चित्रकूट को अपनी प्रयोगशाला बनाकर दीनदयाल शोध संस्थान के माध्यम से उन्होंने कार्य प्रारंभ किया। वहां के सामान्य लोगों की सुप्त शक्ति को जागृत किया और उसके माध्यम से एक-एक प्रयोग को वास्तविक आकार देते गये। बंजर भूमि में हरियाली नजर आने लगी और लोग गरीबी की गर्त से बाहर आ गये। किसी भी सामाजिक और रचनात्मक कार्य के लिए विदेशी सहायता की बैसाखी का इस्तेमाल कभी नहीं किया। केवल अर्मूत विचारों में रमनेवाले वे नहीं थे। जो कुछ था, उसे सगुण साकार करने की लगन उन में थी और इसी से चित्रकूट के तपस्वी के रूप में उनकी पहचान हुई।

यदि पूछा जाए कि पिछले 62 वर्षो में देश की प्रगति में सबसे बड़ी कमी कौन-सी है, तो स्वतंत्रता संग्राम में सुप्त ध्येयवाद में आई गिरावट ही इसका एकमात्र जवाब दिखाई देता है। यह गिरावट सभी दलों में दिखाई देती है और संघ परिवार भी इस में अपवाद नहीं है। व्यवहारवाद का सिक्का वहां भी अमल में लाया जाता, यह समूचे देश ने देखा है। ऐसे वायुमंडल में नानाजी का हमारे बीच में रहना एक दिलासा देने वाली बात थी। सामर्थ्यवान देश के निर्माण के स्वप्न को साकार करने के लिए दिन-रात संघर्षरत इस ऋषितुल्य व्यक्ति की ओर उंगली दिखाकर उस उज्ज्वल इतिहास का अहसास करा सकते थे। वह उदाहरण आज समाप्त हो गया।

साभार: सकाल, 1 मार्च, 2010

ग्रामोदय गीत

हर हाथ को देंगे काम हर खेत को देंगे पानी।
दुल्हन बनकर फिर से सजेगी अपनी धरती रानी।।
मिल जुल के मेहनत करें, मेहनत वो रंग लायेगी।
सींचे पसीने से तो माटी मोती उगायेगी।।
धानी चुनर ओढ़ के धरती ये गुन–गुनायेगी।
खेतों में फिर नाचेगी, फसलों की नयी जवानी।।
दुल्हन बनकर फिर से सजेगी अपनी धरती रानी।। 1।।

गांवों का ये देश है, भारत बसा है गांवों में।
माटी की खुशबू घुली, इस देश की हवाओं में।।
ये गांव क्यों न पले सुख की सुहानी छांवों में।
खुशहाल बनेगा अब तो हर बस्ती का हर प्राणी।।
दुल्हन बनकर फिर से सजेगी अपनी धरती रानी।। 2।।

सोने की धरती पे हम सपनों के घर सजायेंगे।
सौ–सौ कलाएं नयी, लोगों को हम सिखायेंगे।।
आपस के सहयोग से, धरती पे स्वर्ग लायेंगे।
मजदूर किसान लिखेंगे इस देश की नयी कहानी।।
दुल्हन बनकर फिर से सजेगी अपनी धरती रानी।। 3।।

कोई हो ना छोटा बड़ा, ऐसा जमाना आयेगा।
होठों पर होगी खुशी, हर दिल तराना गायेगा।।
समता का सूरज नया, सुख का सबेरा लायेगा।
अब प्यार से हम बदलेंगे हर उल्टी रीति पुरानी।।
दुल्हन बनकर फिर से सजेगी अपनी धरती रानी।। 4।।

काँटों से खेलेगा जो, खुशियों के फूल चुनेगा।
नारा हमारा नया, सारा ये देश सुनेगा।।
ग्रामोदय प्रकल्प ये मेरा देश में नमूना बनेगा।
धरती पे फिर छायेगी, मस्ती की रुत मस्तानी।।
दुल्हन बनकर फिर से सजेगी अपनी धरती रानी।। 5।।

•••